श्री शिवपुराण

※ प्रथम खण्ड ※

शिवपुराण—महात्म्यम्

※ शिवपुराण—महत्व ※

हे हे सूत महाप्राज्ञ सर्वसिद्धान्तवित्प्रभो ।
आख्याहि मे कथासारं पुराणानां विशेषतः ।१।
सदाचारश्च सद्भक्तिर्विवेको वर्द्धते कथम् ।
स्वविकारनिरासश्च सज्जनैः क्रियते कथम् ।२।
जीवाश्च सुरतां प्राप्ताः प्रायो घोरे कलाविह ।
तस्य संशोधने किं हि विद्यते परमायनम् ।३।
यदस्ति वस्तु परमं श्रेयसां श्रेय उत्तमम् ।
पावनं पावनानां च साधनं यद्वदाधुना ।४।
येन तत्साधनेनाशु शुद्धचत्यात्मा विशेषतः ।
शिवप्राप्तिर्भवेत्तात सदा निमलचेतसः ।५।

शौनकजी ने कहा—हे सूतजी! हे सर्वसिद्धान्तो के ज्ञाता महा-पंडित! आप विशेषकर पुराणों की कथा का सार मेरे प्रति कहिये ।१। सदाचार, भक्ति के द्वारा विवेक की वृद्धि किस प्रकार होती है और सज्जन अपने विकारों को किस प्रकार शान्त करते हैं सो कहिये ।२। इस घोर कलि-काल में प्राणी असुरत्व को प्राप्त हुये हैं, उनका शोधन किस प्रकार हो सो आप कहने की कृपा करें ।३। जो वस्तु अत्यन्त श्रेष्ठ और कल्याण देने वाली है तथा जो पवित्रों से भी पवित्र है उत्तम साधन रूप है सो आप मुझसे कहें ।४। आत्मा जिस साधन के द्वारा शुद्ध हो जाता है और सदा निर्मल चित्त वाले व्यक्तियों को भगवान् शिव प्राप्त हो जाते हैं ।५।

धन्यस्त्वं मुनिशार्दूल श्रवणप्रीतिलालसः ।
अतो विचार्य्य सुधिया वच्मि शास्त्रं महोत्तमम् ।६।
सर्वसिद्धांतनिष्पन्नं भक्त्यादिकविवर्द्धनम् ।
शिवतोषकरं दिव्यं शृणु वत्स रसायनम् ।७।
कलिव्यालमहात्रासविध्वंसकरमुत्तमम्
शैवं पुराणं परमं शिवेनोक्तं पुरा मुने।८।
जन्मान्तरे भवेत्पुण्यं महद्यस्य सुधीमत ।
तस्य प्रीतिर्भवेत्तत्र महाभाग्यवतो मुने ।९।
एतच्छिवपुराणं हि परमं शास्त्रमुत्तमम् ।
शिवरूपं क्षितौ ज्ञेय सेवनीयं च सर्वथा ।१०।
पठनाच्छ्रवणादस्य भक्तिमान्नरसत्तमः ।
सद्यः शिवपदप्राप्तिं लभते सर्वसाधनात् ।११।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन काक्षितं पठनं नाभिः ।
तथास्य श्रवणं प्रेम्णा सर्वकामफलप्रदम् ।१२।

सूतजी ने कहा—हे मुनिवरों ! तुम्हारी प्रीति कथा सुनने में है । इस लिए तुम धन्य हो । इसी कारण मैं बुद्धिपूर्वक विचार करके यह श्रेष्ठ शास्त्र कहता हूँ ।६। यह सर्व सिद्धान्त से सम्पन्न भक्ति आदि की वृद्धि करने वाला तथा शिवजी का सन्तोष करने वाला परम दिव्य रसायन स्वरूप है ।७। कालरूपी महासर्प का विध्वंसक यह परम श्रेष्ठ शिवपुराण है । हे मुने ! यह भगवान् शिव के द्वारा कहा गया है ।८। जिसने जन्म जन्मान्तर अत्यन्त श्रेष्ठ और पुण्यकर्म किये हों, उस मनुष्य की अत्यन्त प्रीति इस महापुराण के श्रवण में होती है ।९। यह शिवपुराण परमश्रेष्ठ शास्त्र है । पृथिवी में इस शिव-स्वरूप ही जानकर श्रद्धापूर्वक इसका सदा सेवन करे ।१०। इसके पढ़ने और श्रवण करने से मनुष्य शीघ्र ही श्रेष्ठ भक्ति से सम्पन्न होता और उसे शिव-साधन रूप परम पद की शीघ्र प्राप्ति होती है ।११। इसलिये मनुष्यों को इसे सब प्रकार से पढ़ना ही उचित है । क्योंकि इसके प्रेमपूर्वक पढ़ने से सभी कामनाओं की पूर्ति होती है ।१२।

पुराणश्रवणाच्छम्भोर्निष्पापो जायते नरः ।
भुक्त्वा भोगान्सुविपुलञ्छिवलोकमवाप्नुयात् ।१३।
राजसूयेन यत्पुण्यमग्निष्टोमशतेन च ।
तत्पुण्यं लभते शम्भोःकथाश्रवणमात्रतः ।१४।
ये शृण्वन्ति मुने शैवं पुराणं शास्त्रमुत्तमम् ।
ते मनुष्या न मन्तव्या रुद्रा एव न संशयः ।१५।
शृण्वतां तत्पुराणं हि तथा कीर्तययां च तत् ।
पादाम्बूजरजांस्येव तीर्थानि मुनयो विदुः ।१६।
गन्तुं निः श्रेयस स्थानं येऽभिवाञ्छंति देहिनः ।
शैवम्पुराणममलं भक्त्या शृणुवन्तु ते सदा ।१७।
सदा श्रोतुं यद्यशक्तो भवेत्स मुनिसत्तम् ।
नियतात्मा प्रतिदिनं शृणुयाद्वा मुहूर्तकम् ।१८।
यदि प्रतिदिनं श्रोतुमशक्तो मानवो भवेत् ।
पुण्यं मासादिषु मुने श्रूयाच्छिवपुराणकम् ।१९।

शिव पुराण का श्रवण करने से मनुष्य सभी पापों से छूट जाता और अनेक भोगों का उपभोग करने पर अन्त में उसे शिवलोक की प्राप्ति होती है ।१३। राजसूय यज्ञ या सौ अग्निष्टोम से जो पुण्य प्राप्त होता है, वह पुण्य शिवजी की कथा सुनने मात्र से ही मिल जाता है ।१४। हे मुने ! श्रेष्ठ शिव पुराण का जो मनुष्य श्रवण करते हैं, वे मनुष्य नहीं, वरन् साक्षात् रुद्र रूप ही हैं, इसमें सन्देह नहीं है ।१५। इसके सुनने वालों और कीर्तन करने वालों की चरणरज भी तीर्थ स्वरूप हैं, ऐसा मुनि-जनों का कथन है ।१६। कल्याणप्रद स्थान की कामना वाले जीवों को नित्य शिवजी के निर्मल पुराण का श्रवण करना चाहिए ।१७। यदि सब काल सुनने में समर्थ न हो तो नियमपूर्वक दो घड़ी ही इसे सुने ।१८। यदि प्रति दिन सुनने में समर्थन न हो तो पवित्र महीनों में श्रवण करे ।१९।

मुहूर्तं वा तदर्द्धं वा तदर्द्धं वा क्षणं च वा
ये शृण्वन्ति पुराणं तन्न तेषां दुर्गतिर्भवेत् ।२०।

तत्पुराणं च शृण्वानः पुरुषो यो मुनीश्वर ।
स निस्तरति संसारं दग्ध्वा कर्ममहाटवीम् ।२१।
तत्पुण्यं सर्वदानेषु सर्वयज्ञेषु वा मुने ।
शम्भोः पुराणश्रवणात्तफलं निश्चल भवेत् ।२२।
विशेषतः कलौ शैवपुराण श्रवणादृते ।
परो धर्मो न पुंसां हि मुक्तिसाधनकत्मुने ।२३।
पुराणश्रवणं शम्भोर्नामसंकीर्तनं तथा ।
कल्पद्रु मफल सम्यङ्मनुष्याणां न संशयः ।२४।
कलौ दुर्मेधसां पुंसां धर्माचारोज्झितात्मनाम् ।
हिताय विदधे षम्भुः पुराणाख्यं सुधारसम् ।२५।
एकोऽजरामरः स्याद्वै पिबन्नेवामृतं पुमान् ।
शम्भोः कथामृतं कुर्यात्कुलमेवाजरामरम् ।२६।

जो व्यक्ति एक मुहुर्त, उससे आधा या क्षणमात्र को भी सुनते हैं, वे दुर्गति को प्राप्त नहीं होते ।२०। हे मुनीश्वर ! इस महा पुराण को जो प्राणी सुनते हैं, वे कर्म रूपी विकराल वन को भस्म कर संसार-सागर से पार हो जाते हैं ।२१। हे मुने ! सम्पूर्ण यज्ञों से जो फल प्राप्त होता है, वह शिव पुराण के सुनने से अवश्य मिल जाता है ।२२। विशेषकर कलि काल में मुक्ति का साधन रूप, शिवपुराण के अतिरिक्त कोई अन्य धर्म नहीं है ।२३। सुनना या उनका नाम संकीर्तन करना, मनुष्यों के लिये कल्प वृक्ष के समान फलदायी है, इसमें सन्देह नहीं है ।२४। कलियुग के जिन दुर्मेधी पुरुषों ने अपने धर्म को छोड़ दिया है, उनके लिए भी यह अमृत रूप हित करने वाला है ।२५। इस अमृत को जो पुरुष पीता है, वह अजर अमर हो जाता है और शिवजी के कथा-मृत से कुल को भी अजर अमर कर देता है ।२६।

सदा सेव्या सदा सेव्या सदा सेव्या विशेषतः ।
एतच्छिवपुराणस्य कथा परमपावनी ।२७।
एतच्छिवपुराणस्य कथाश्रवणमात्रतः ।
किं ब्रवीमि फलं तस्य शिवश्चित्तं समाश्रयेत् ।२८।

एतच्छिवपुराणस्य कथा भवति यद्गृहे ।
तीर्थभूतं हि तद्गेहं वसतां पापनाशनम् ।२९।
अश्वमेधसहस्राणि वाजपेयशतानि च ।
कलां शिवपुराणस्य नार्हन्ति खलु षोडशीम् ।३०।
गंगाद्याः पुण्यनद्यश्च सप्तपुर्य्यो गया तथा ।
एतच्छिवपुराणस्यसमतां यांति न क्वचित् ।३१।
नित्यं शिवपुराणस्य श्लोकं श्लोकार्द्धमेव च ।
स्वमुखेन पठेद्भक्त्या यदीच्छेत्परमां गतिम् ।३२।
एतच्छिवपुराणं यो वाचयेदर्थतोऽनिशम् ।
पठेद्वा प्रीतितो नित्यं स पुण्यात्मा न संशयः ।३३।

विशेशकर इसका सर्वदा सेवन करे । इसकी कथा परम पवित्र करने वाली है ।२७। इस कथा के सुनने मात्र से ही जो फल प्राप्त होता है, उसे मैं क्या कहूं ? शिवजी में अपने मन को समर्पण करदे ।२८। जिस गृह में शिवपुराण की कथा होती है, वह साक्षात् तीर्थ के समान है, उसमें निवास करने से पापों का नाश हो जाता है ।२९। हजार अश्वमेध और सौ वाजपेय यज्ञ भी शिवपुराण की सोलहवीं कला के समान नहीं है ।३०। सहस्र गङ्गा आदि सप्त नदी, सप्तपुरी तथा गया भी इस की समता नहीं कर सकतीं ।३१। परमगति की कामना वाले पुरुष को भक्तिपूर्वक नित्यप्रति शिवपुराण का एक या आधे श्लोक का पाठ करना चाहिये ।३२। इस का जो पुरुष भक्तिपूर्वक पाठ करता और नित्य श्रवण करता है, उसके पुण्यात्मा होने में सन्देह नहीं है ।३३।

एतच्छिवपुराणं यः पूजयेन्नित्तमादरात् ।
स भुक्त्वेहाखिलान्कामानंते शिवपदं लभेत् ।३४।
एतच्छिवपुराणस्य कुवन्नित्यमतन्द्रितः ।
पट्टवस्त्रादिना सम्यक् सत्कारं स सुखी सदा ।३५।
शैवं पुराणममलं शैवसर्वस्वमादरात् ।
सेवनीयं प्रयत्नेनऽपरत्रेह सुखेप्सुना ।३६।
चतुवर्गप्रदं शैवं पुराणममलं परम् ।

श्रोतव्यं सर्वदा प्रीत्या पठितव्यं विशेषतः ।३७।
देवेतिहासशास्त्रेषु परं श्रेयस्करं महत् ।
शैवं पुराणं विज्ञेयं सर्वथा हि मुमुक्षिभिः ।३८।
शैवंपुराणमिदमात्मविदांवरिष्ठं सेव्यंसदापरमवस्तुसतांसमर्च्यम् ।
तापत्रयाभिशमनंसुखदंसदैवप्राणप्रियं विधिहरीशमुखामराणाम् ।।
वन्दे शिवपुराणं हि सर्वदाऽहं प्रसन्नधीः ।
शिवः प्रसन्नतां यायाद्ददद्यात्स्वपदयो रतिम् ।४०।

इस का आदर पूर्वक नित्य प्रति पूजन करने वाले मनुष्य सभी कामनाओं को भोग कर अन्त में शिवपद को प्राप्त होते हैं ।३४। नित्यप्रति निरालस्य होकर इसका पाठ करने से तथा नित्य पट्ट वस्त्रादि से सत्कार करने से सर्वदा सुख की प्राप्ति होती है ।३५। यह अत्यन्त स्वच्छ एवं सर्वस्व है । जिसे दोनों लोकों में सुख प्राप्ति की इच्छा हो उसे आदर पूर्वक इसका पाठ करना चाहिए ।३६। यह निर्मल शिवपुराण चतुर्वर्ग का दाता है । इसका पाठ एवं श्रवण सदा प्रीतिपूर्वक करना चाहिए ।३७। वेद, इतिहास तथा शास्त्रों में यह परम श्रेय प्रदायक है इसलिये मुमुक्ष जनों को सदा शिव पुराण का ज्ञान आवश्यक है ।३८। आत्म ज्ञानियों के लिये यह शिवपुराण अत्यन्त उत्तम है । पपम वस्तु सदा सेवनीय और सत्पुरुषों को पूजनीय है । त्रिताप नाशक, सुखदायक है तथा ब्रह्मा, विष्णु और देवतागणों के लिये प्राणों के समान प्रिय है ।३९। मैं प्रसन्न होकर शिवपुराण को सदा प्रणाम करता हूं । शिवजी इसके द्वारा प्रसन्न होकर अपने चरणों की प्रीति मुझे प्रदान करें ।४०।

देवराजमुक्तिवर्णन

ये मानवाः पापकृतो दुराचाररताः खलाः ।
कामादिनिरता नित्यं तेऽपि शुद्धचन्त्यनेन वै ।१।
ज्ञानयज्ञः परोऽयं वै भुक्तिमुक्तिप्रदः सदा ।
शोधनः सर्वपापानां शिवमन्त्रोपकारकः ।२।
तृष्णाकुलाः सत्यहीनाः पितृमातृविदूषकाः ।
दाम्भिका हिंसका ये च तेऽपि शुद्धचन्त्यनेन वै ।३।

स्ववर्णाश्रमधर्मेभ्यो वर्जिता मत्सरान्विताः ।
ज्ञानयज्ञेन तेऽनेन सम्पुनन्ति कलावपि ।४।
छलच्छद्मकरा ये च ये च क्रूराः सुनिर्दयाः ।
ज्ञानयज्ञेन तेऽनेन सम्पुनन्ति कलावपि ।५।
ब्रह्मस्वपुष्टाः सततं व्यभिचाररताश्च ये ।
ज्ञानयज्ञेन तेऽनेन सम्पुनन्ति कलावपि ।६।
सदा पापरता ये च ये शठाश्च दुराशयाः ।
ज्ञानयज्ञेन तेऽनेन सम्पुनन्ति कलावपि ।७।
मलिना दुर्धियोऽशान्ता देवताद्रव्यभोजिनः ।
ज्ञानयज्ञेन तेऽनेन सम्पुनन्ति कलावपि ।८।

सूतजी ने कहा—जो मनुष्य पापी, दुराचार, कामादिक से डूबे हुये हैं, वे भी इसके द्वारा शुद्ध हो जायेंगे ।१। यह परम भुक्ति और मुक्ति का दाता ज्ञान यज्ञ है। सब पापों का शोधनकर्त्ता और शिवजी का संतोष कराने में समर्थ है ।२। तृष्णा और व्याकुल और सत्य से हीन तथा माता पिता की हंसी उड़ाने वाले एवं हिंसक मनुष्य भी इसके द्वारा सुधर जाते हैं ।३। वर्णाश्रम धर्म से रहित तथा मत्सर युक्त प्राणी भी कलिकाल में इस ज्ञान यज्ञ के द्वारा संसार सागर के पार हो जायेंगे ।४। जो पुरुष छल करने वाले, क्रूर एवं निर्दय स्वभाव के हैं वे भी कलिकाल में इस ज्ञान यज्ञ के द्वारा पार हो जायेंगे ।५। जो व्यक्ति ब्राह्मणों के धन के द्वारा पुष्ट हुए तथा निरन्तर व्यभिचार कर्म में लगे रहते हैं, वे भी इस ज्ञान यज्ञ के प्रभाव से तर जायेंगे ।६। जो सदा पाप कर्म में रत, शठ एवं दुराशा से युक्त हैं वे भी कलियुग से इस ज्ञान यज्ञ के द्वारा पार हो जायेंगे ।७। मलीन एवं बुरी बुद्धि वाले अशान्त तथा देवताओं के द्रव्य को हड़पने वाले मनुष्य भी कलियुग में इस ज्ञान यज्ञ के द्वारा पार हो जायेंगे ।८।

।। चंचुला वैराग्य वर्णन ।।

शृणु शौनक वक्ष्यामि त्वदग्रे गुह्यमप्युत ।
यतस्त्वं शिवभक्तानामग्रणीर्वेदवित्तमः ।१।

समुद्रनिकटे देशे ग्रामो बाष्कलसंज्ञकः ।
बसन्ति यत्र पापिष्ठा वेदधर्मोज्झिता जनाः ।२।
दुष्टा दुर्विषयात्मानो निर्दैवा जिह्मवृत्तयः ।
कृषीवलाः शस्त्रधराः परस्त्रीभोगिनः खलाः ।३।
ज्ञानवैराग्यसद्धर्म न जानन्ति परं हिते ।
कुकथाश्रवणाढ्येषु नि रताः पशुबुद्धयः ।४।
अन्ये वर्णाश्च कुधियः स्वधर्मविमुखाः खलाः ।
कुकर्मनिरता नित्यं सदा विशयिणश्चते ।५।
स्त्रियः सर्वाश्च कुटिलाः स्वैरिण्यः पापलालसाः ।
कुधियो व्यभिचारिण्यः सद्व्रताचारवर्जिताः ।६।
एवं कुजनसंवासे ग्रामे बाष्कलसंज्ञिते ।
तत्रैको बिन्दुगोनाम विप्र आसीन्महाधमः ।७।

सूतजी ने कहा—हे शौनक ! मैं तुमसे अत्यन्त गुह्य कथा कहता हूं, क्योंकि तुम शिव भक्तों में सर्व प्रथम ही ।१। समुद्र के निकट एक देश में बाष्कल नामक ग्राम था, उसमें वेद-धर्म से विमुख पापीजन रहते थे ।२। दुष्ट, दुर्विषयी तथा कुटिल वृत्ति वाले, कृषि कर्म में लगे हुए, शस्त्र बल पर निर्भर रहने वाले और पर-स्त्री भोगी थे ।३। वे ज्ञान-वैराग्य स्वरूप अपने धर्म से अज्ञान, पशुबुद्धि व्यक्ति बुरी वार्ता सुनने में ही रुचि रखते थे, क्योंकि उनकी बुद्धि पशु से समान थी ।४। अन्य वर्ण के लोग भी कुबुद्धि वाले थे । सदा अपने धर्म के विमुख रहते और विषय भोगों में रत तथा कुकर्म करने वाले थे ।५। सभी स्त्रियाँ स्वैरिणी, कुटिल और पापकर्म की इच्छा वाली थीं । सत् व्रत और आचार से रहित तथा व्यभिचारिणी थीं ।६। बुरे व्यक्तियों वाले उस ग्राम में बिदुन नामक अत्यन्त अधर्मी ब्राह्मण भी निवास करता था ।७।

स दुरात्मा महापापी सुदारोऽपि कुमार्गगः ।
वेश्यापतिर्बभूवाथ कामाकुलितमानसः ।८।
स्वपत्नीं चंचुलां नाम हित्वा नित्य सुधर्मिणीम् ।
रेमे स वेश्यया दुष्टः स्मरबाणप्रपीडितः ।९।

एवं कालो व्यतीयाय महास्तस्य कुकर्मणः ।
सा स्वधर्मभयात्क्लेशात्स्मरार्तापि च चंचुला ।१०।
अथ तस्याङ्गना सापि प्ररूढनवयौवना ।
अविषह्यस्मरावेशा स्वधर्माद्विरराम ह ।११।
जारेण संगता रात्रौ रेमे पापेन गुप्ततः ।
पतिदृष्टिं वञ्चयित्वा भ्रष्टसत्वा कुमार्गगा ।१२।
कदाचित्तां दुराचारां स्वपत्नीं चंचुलां मुने ।
जारेण संगतां रात्रौ ददर्श स्मरविह्वलाम् ।१३।
दृष्ट्वा तां दूषितां पत्नीं कुकर्मासक्तमानसाम् ।
जारेण संगतां रात्रौ क्रोधाद्द्रुदाव वेगतः ।१४।

वह अत्यन्त पापी, दुरात्मा और स्त्री सहित कुमार्ग पर चलने वाला, काम से व्याकुल होकर वेश्या का पति बना ।८। वह चंचुला नामक से अपनी पत्नी का त्याग कर काम-बाण से पीड़ित होकर वेश्या के साथ रहने लगा ।९। इस इकार उस कुकर्मी को बहुत समय व्यतीत हो गया। उसकी पत्नी चंचुला अपने धर्म और क्लेश का भय होते हुए भी काम से आक्रान्त हो गई ।१०। वह अत्यन्त तरुणाई को प्राप्त थी, उसने कामदेव से महान् पीड़ित होकर अपने धर्म का त्याग कर दिया ।११। जार की संगति में अपने पति की दृष्टि बचाकर रहने लगी। वह अपने सत से भ्रष्ट तथा कुमार्ग-गामिनी हो गई ।१२। एक समय उसके पति ने उस दुराचारिणी को रात्रि के समय जार के साथ देख लिया ।१३। वह उस कुमार्ग गामिनी दुष्टा को जार के साथ रमण करती देखकर अत्यन्त क्रोध पूर्वक उसकी ओर दौड़ा ।१४।

तमागतं गृहे दुष्टमाज्ञाय बिन्दुगं खलः ।
पलायितो द्रुतं जारो वेगतश्छद्मवान्स वै ।१५।
अथ स बिन्दुगः पत्नीं गृहीत्वा सुदुराशयः ।
मुष्टिबन्धेन संतर्ज्य पुनःपुनरताडयत् ।१६।
सा नारी ताडिता भर्त्रा चंचुला स्वैरिणी खला ।
कुपिता निर्भया प्राह स्वपतिं बिन्दुगं खलम् ।१७।

भवान्प्रतिदिनं कामं रमते वेश्यया कुधीः ।
मां विहाय स्वपत्नीं च युवतीं पतिसेविनीम् ।१८।
रूपपत्या युवत्याश्च कामाकुलितचेतसः ।
विना पति विहारं स्यात्का गतिर्मे भवान्वदेत् ।१९।
अहं महारूपवती नवयौवनविह्वला ।
कथं सहे कामदुःखंतव सङ्गं विनाऽऽर्तधीः ।२०।
इत्युक्तः स तया मूर्खो मूढधीर्ब्राह्मणोऽधमः ।
प्रोवाच बिन्दुगः पापो स्वधर्मविमुखः खल ।२१।

पति को रात्रि के समय घर में आया देखकर स्त्री ने जार को संकेत किया और वह छली .हाँ से भाग गया ।१५। तब बिन्दुग ने उसे पकड़ लिया और मुष्टिकाप्रहार से बारम्बार मारने लगा ।१६। अपने पति के द्वारा पिटी हुई चंचुला क्रोध ले भय-रहित होती हुई इस प्रकार कहने लगी ।१७। चंचुला बोली—आप जो नित्यप्रति वेश्य के प्रेम में फँसे रहते हो और मैं नित्यप्रति तुम्हारी सेवा करती हूँ। तुम मेरा त्याग करते हो ।१८। बताओ जो सौन्दर्यमयी काम से व्याकुल है, उसकी पति से रमण करने केबिना क्या गति होगी ? ।१९। मैं अत्यन्त रूपवती, नवयौवन से युक्त तथा काम से व्याकुल हूं। तुम्हारे साथ रमण किए बिना मैं काम का सन्ताप किस प्रकार सहन कर सकती हूँ ? ।२०। सूतजी ने कहा—चंचुला के ऐसा कहने पर ब्राह्मणों में नीच एवं अपने धर्म से हीन मति वाले पापी बिन्दुग ने उससे कहा ।२१।

सत्यमेतत्त्वयोक्तं हि कामव्याकुलचेतसा ।
हितं वक्ष्यामि तस्मात्ते शृणु कांते भयं त्यज ।२२।
जारैर्विहर नित्यं त्वं चेतसा निर्भयेन व ।
धनमाकर्ष तेभ्यो हि दत्त्वा तेभ्यः परां रतिम् ।२२।
तद्धनं देहि सर्वं मे वेश्यासंसक्त चेतसः ।
महत्स्वार्थं भवेन्नूनं तवापि च ममापि च ।२४।
इति भर्तृवचः श्रुत्वा चंचुला तद्वधूश्य सा ।
तथेपि भर्तृ बचनं प्रतिजग्राह हृष्टधीः ।२५।

कृत्वैवं समयं तौ वै दम्पती दुष्टमानसौ ।
कुकर्मनिरतौ जातो निर्भयेन कुचेतसा ।२६।
एवं तयोस्तु दम्पत्योर्दुराचारप्रवृत्तयोः ।
महान्कालो व्यतीयाय निष्फलो मूढचेतसोः ।२७।

विन्दुग ने कहा—हे काम से व्याकुल चित्त वाली ! मैं हित की बात कहता हूं, उसे भय छोड़कर सुन ।२२। तू निर्भय मन से जार के साथ समागम कर, परन्तु उसे प्रसन्न करके धन भी तो प्राप्त कर २३। और उस सम्पूर्ण धन को मुझ वेश्या के साथ गमन करने वाले अपने पति को दे दे । इस कार्य में मेरा और तेरा, दोनों का ही स्वार्थ निहित है ।२४। सूतजी ने कहा—अपने पति की बात सुनकर चंचुला ने 'बहुत अच्छा' कहा और फिर अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक दोनोंही दुष्ट हृदय परस्पर निर्भय चित्त होकर अत्यन्त कुकर्म में संलग्न हो गये ।२५-२६। इस प्रकार दुराचार में लगे रहने वाले उन दोनों स्त्री-पुरुषों को बहुत-सा समय व्यतीत हो गया और वे मूढ़ मन वाले नितान्त निष्फल रहे ।२७।

अथ विप्रः स कुमतिर्बिन्दुगो वृषलीपतिः ।
कालेन निधनं प्राप्तो जगाम नरकं खलः ।२८।
भुक्त्वा नरकदुःखानि बहूवहानि स मूढधीः ।
विन्ध्येऽभवत्पिशाचो हि गिरौ पापी भयङ्करः ।२९।
मृते भर्तरि तस्मिन्वै दुराचाररेऽथ बिन्दुगे ।
उवास स्वगृहे पुत्रैश्चिरकालं बिमूढधीः ।३०।
एवं विहरती जारैः स नारी चंचुलाह्वया ।
आसीत्कामरता प्रीता किञ्चिदुत्क्रान्तयौवना ।३१।
एकदा दैवयोगेन सम्प्राप्ते पुण्यपर्वणि ।
सा नारी बन्धुभिः सार्द्धं गोकर्ण क्षेत्रमाययौ ।३२।
प्रसङ्गात्सा तदा त्वा कस्मिंश्चितीर्थपाथसि ।
सन्तां सामान्यतो यत्र तत्र बभ्राम बन्धुभिः ।३३।

समय पाकर वह मूढ़ वृषलीपति मृत्यु को प्राप्त हो गया और उसे घोर नरक की प्राप्ति हुई ।२८। बहुत काल तक नरकदुःख भोग कर

वह मूढ़ बड़ा भयंकर एवं महापापी पिशाच होकर विंध्य पर्वत में रहने लगा ।२९। जब उस दुराचारी को मृत्यु हो गयी तब वह चंचुला पुत्रों के साथ बहुत समय तक अपने गृह में निवास करती रही ।३०। वह जारों के साथ निरन्तर सम्पर्क बनाये रही । परन्तु काम से सुख मानने वाली उस स्त्री का यौवन कुछ-कुछ व्यतीत हो गया ।३१। दैवयोग से एक समय पुण्य पर्व के आने पर वह मारी अपने बान्धवों के साथ गोकर्ण क्षेत्र में जा पहुँची ।३२। प्रसंगवश उसने किसी एक तीर्थ के जल में स्नान किया और बन्धुजनों के साथ इस क्षेत्र में भ्रमण करने लगी ।३३।

देवालयेऽथ कस्मिंश्चिद्दैवज्ञमुखतः शुभाम् ।
शुश्राव सत्कथां शम्भोः पुण्यां पौराणिकीं च सा ।३४।
योषितां जारसक्तानां नरके यमकिंकराः ।
संतप्तलोहपरिघं शिपन्ति स्मरमन्दिरे ।३५।
इति पौराणिकेनोक्तां श्रुत्वा वैराग्यवर्द्धिनीम् ।
इति पौराणिकेनोक्तां श्रुत्वा वैराग्यवर्द्धिनीम् ।
कथामासीद्भयोद्विग्ना चकम्पे तत्र सा च वै ।३६।
कथासमाप्तौ सा नारी निर्गतेषु जनेषु च ।
भीता रहसि तं प्राह भैवं संवाचकं द्विजम् ।३७।
ब्रह्मंस्त्वं श्रृण्वसद्वृत्तमजानन्त्या स्वधर्मकम् ।
भ्रुत्वा मामुद्धर स्वामिकृन्कृपां कृत्वातुलामपि ।३८।
चरितं सूल्बणं पापं मया मूढधिया प्रभो ।
नीतं पौश्चल्यतः सर्वं यौवनं मदनान्धया ।३९।
श्रुत्वेदं वचनं तेऽद्य वैराग्यरसजृम्भितम् ।
जाता महाभया साऽहं सकम्पात्तयियोगिका ।४०।

वहां किसी देवालय में किसी पण्डित के मुख से उसने शिव पुराण की कथा श्रवण की ।३४। कि जो नारी जार के साथ रमण करती है उसे यजदूत नरक में ले जाते और उसके यौन स्थानमें लोहे का बनातप्त मुसल प्रविष्ट करते हैं ।३५। इस प्रकार वैराग्य की वृद्धि करने वाली पुराणकथा को सुनकर चंचुला अत्यन्त भय से उद्विग्न होकर कांपने लगी ।३६। जब कथा पूरी हो गई और सभी श्रोता वहाँ से चले गये तब

वह भयभीत उस कथावाचक से एकान्त में प्रश्न करने लगी ।३७। चंचुला ने पूछा—हे ब्रह्मन् ! आप मुझे असत् वृत्त काली स्त्री समझकर मेरा वृत्तान्त सुनें और अत्यन्त कृपापूर्वक मेरा उद्धार करें ।३८। मेरा चरित्र अत्यन्त घृणित है । मुझ मूर्खा ने अपना यौवन अज्ञान के कारण व्यभिचार में व्यतीत कर डाला । मैं उस समय मदान्ध हो चुकी थी ।३९। आपके वैराग्य रस से परिपूर्ण वचन सुनकर मैं अत्यन्त भयभीत हो उठी हूं और मेरा हृदय कम्पायमान हो रहा है ।४०।

धिङ् मां मूढधियं पापां काममोहितचेतसम् ।
निन्द्यां दुर्विषयासक्तां विमुखीं हि स्वधर्मतः ।४१।
यदल्पस्य सुखस्यार्थे स्वकायस्य विनाशिनः ।
महापापं कृतं घोरमजानन्त्याऽतिकष्टदम् ।४२।
यास्यमिदुर्गतिं कां कां घोरां हा कष्टदायिनीम् ।
को ज्ञो यास्यति मां तत्र कुमारगरतमानसाम् ।४३।
मरणे यमदूतांस्तान्कथं द्रक्ष्ये भयंकरान् ।
कथं पाशैर्बलात्कण्ठे बध्यमाना धृतिं लभे ।४४।
कथं सहिष्ये नरके खंडशो देहकृन्तनम् ।
यातनां तत्र महतीं दुःखदां च विशेषतः ।४५।
दिवा चेष्टामिन्द्रियाणां कथं प्राप्स्यामि शोचती ।
रात्रौ कथं लभिष्येऽहं निद्रां दुःखपरिप्लुता ।४६।
हा हतास्मि च दग्धास्मि विदीर्णहृदयास्मि च ।
सर्पथाऽहं विनष्टाऽस्मि पापिनी सर्वथाप्यहम् ।४७।

मैं काम से भ्रमित चित्त हुई मूढ़ बुद्धि वाली स्त्री हूं । मुझे धिक्कार है जो मैंने अपने धर्म से विमुख होकर निंदित कुधर्म को प्राप्त किया है । ।४१। जो मैं स्वल्प सुख के आकर्षण में अपने कार्य को नष्ट कर देने वाले अत्यन्त कष्टकारी घोर दुष्कर्म में प्रवर्त्त हो गयी ।४२। अब मैं किस घोर कष्ट देने वाली दुर्गति को पाऊँगी और मुझ कुमार्ग में मन रमाने वाली स्त्री की रक्षा वहाँ कौन करेगा ? ।४३। मृत्यु को प्राप्त करने पर मैं उन यमदूतों को किस प्रकार देखूँगी । जब वे यमदूत मुझे

कठोर पाशों में बाँधेंगे तब मुझे विश्राम कैसे प्राप्त होगा ? ।४४। जब नरक में देह के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे, तब मैं उसे किस प्रकार सहन करूंगी ? वहाँ तो अत्यन्त दुःसह्य यातना प्राप्त होती हैं ।४५। उन इन्द्रियों की चेष्टा का ध्यान करती हुई मैं किस प्रकार देख सकूंगी। दुःख से युक्त हुई मैं रात्रि में किस प्रकार सो सकूंगी ।४६। मैं विदीर्ण हृदय वाली सब प्रकार दग्ध और नष्ट हो चुकी हूं, क्योंकि मैं अत्यन्त पाप कर्म वाली हूँ ।४७।

हा विधे मां महापापे तत्त्वा दुःशेमुषीं हठात् ।
अपैति यत्स्वधर्माद्व सर्वसौख्यकरादहो ।४८।
शूलप्रोतस्य शैलाग्रात्पततस्तुङ्गसो द्विज ।
यद्दुःखं देहिनो घोरं तस्मात्कोटिगुणं मम ।४९।
अश्मेधशतं कृत्वा गंगा स्नात्वा शतं समाः ।
न शुद्धिर्जायते प्रायो मत्पापस्य गरीयसः ।५०।
किं करोमि क्व गच्छामि कं वा शरणमाश्रये ।
कस्त्रायेत मां लोकेऽस्मिन्पतन्तीं नरकार्णवे ।५१।
त्वमेव मे गुर्ब्रह्मं स्त्वं माता त्वं पिताऽसि च ।
उद्धरोद्धर मां दीनां त्वमेव शरणं गताम् ।५२।
इति संजातनिर्वेदां पतिमाञ्चरणद्वये ।
उत्थाप्य कृपया धीमान्वभाषे ब्राह्मणः स हि ।५३।

हा विधना ! तुमने हठपूर्वक यह घोर पापमयी बुद्धि प्रदान कर क्या किया, जो सब सुखों को प्रदान करने वाले धर्म से हीन बना देती है ।४८। हे महात्मन् ! शूल से गोदने पर और पर्वत से गिरने पर जो पीड़ा होती है, मुझे उससे करोड़ गुनी हो रही है ।४९। सौ अश्वमेध यज्ञ कर लेने पर तथा सौ वर्ष तक निरन्तर गंगा स्नान करने पर भी मेरे घोर पाप का शोधन नहीं हो सकता ।५०। मैं क्या करूं ? कहाँ जाऊं ? किसकी शरण में पहुँचूं ? मुझ नरक सागर में गिरी हुई स्त्री की रक्षा करने में इस लोक में समर्थ कौन है ? ।५१। हे ब्रह्मन् ! आप ही मेरे गुरु और माता-पिता हैं। कृपा कर आप मुझ दीन का उद्धार

कीजिये। मैं आपकी शरण को प्राप्त हुई हूँ।५२। सूतजी ने कहा—जब चंचुला इस प्रकार निर्वेद को प्राप्त होकर ब्राह्मण के चरणों में गिर पड़ी तब कृपापूर्वक उसे उठाकर ब्राह्मण ने कहा।५३।

॥ चंचुला की सद्गति ॥

दिष्ट्या काले प्रबुद्धासि शिवानुग्रहतो वराम् ।
इमां शिवपुराणस्य श्रुत्वा वैराग्यवत्कथाम् ।१।
मा भैषीद्विजपत्नि त्वं शिवस्य शरणं व्रज ।
शिवानुग्रहतः सर्वं पापं सद्यो विनश्यति ।२।
सत्कथाश्रवणादेव जाता ते मतिरीदृशी ।
पश्चात्तापान्विता शुद्धा वैराग्यं विषयेषु ।३।
पश्चात्तापः पापकृतां निष्कृतिः परा ।
सर्वेषां वर्णितं सद्भिः सर्वपापविशोधनम् ।४।
पश्चात्तापेनैव शुद्धिः प्रायश्चित्तं करोति सः ।
यथोपदिष्टं सद्भिर्हि सर्वपापविशोधनम् ।५।
प्रायश्चित्तमधीकृत्य विधिवन्निर्भयः पुमान् ।
स याति सुगतिं प्रायः पश्चात्तापी न संशयः ।६।
एतिच्छ्वपुराणस्य कथाश्रवणतो यथा ।
जायते चित्त शुद्धिर्हि न तथान्यैरुपायतः ।७।

ब्राह्मण ने कहा—तू भाग्यवश ही ज्ञान को प्राप्त हुई है। शिवजी का तेरे ऊपर बड़ा अनुग्रह है जो तू शिवपुराण की वैराग्यमयी कथा सुनकर ही ज्ञान को प्राप्त कर सकी।१। हे विप्रपत्नी ! भय मत करो और शिवजी की शरण में जा। शिवजी के अनुग्रह से सब पाप शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।२। उनकी सत्कथा सुनने से ही तेरी मति ऐसी हुई है, जिससे तू पश्चात्ताप करके शुद्ध हुई और विषयों से विरक्त हो गई है।३। पश्चात्ताप ही पापों की परम निष्कृति है। विद्वज्जनों ने पश्चात्ताप से सब प्रकार के पापों की शुद्धि होना कथन किया है।४। पश्चात्ताप करने से जिसके पापों का शोधन न हो, उसे प्रायश्चित करना चाहिये। विद्वानों ने इससे सब पापों का शोधन होना कहा है।५। विधिपूर्वक अनेक प्रकार

के प्रायश्चित करने पर भी मनुष्य भयभीत नहीं होपाता। परन्तु पश्चाताप करने वाले को सुगति की प्राप्ति होती है।६। इसके सुनने से जैसी चित्त शुद्धि है, वैसी अन्य उपायों से नहीं होती ।७।

अतः सर्वस्व वर्गस्यैतत्कथासाधनं मतम् ।
एतदर्थं महादेवो निर्ममे त्वाग्रहादिमाम् ।८।
कथया सिद्धयति ध्यानमनया गिरिजापतेः ।
ध्यानाज्ज्ञानं परं तस्मात्कैवल्यं भवति ध्रुवम् ।९।
असिद्धशंकरध्यानः कथामेव शृणोति यः ।
स प्राप्यान्यभवे ध्यानं शंभोर्यातिः परां गतिम् ।१०।
एतत्कथाश्रवणतः कृत्वा ध्यानमुमापतेः ।
ते पश्चात्तापिनः पापा बहवः सिद्धिमागताः ।११।
सर्वेषां बीजं सत्कथाश्रवणं नृणाम् ।
यथावर्त्मसमाराध्यं भवबन्धगदापहम् ।१२।
कथाश्रवणतः शम्भोर्मननाच्च ततो हृदा ।
निदिध्यासनतश्चैव चित्तशुद्धिर्भवत्यलम् ।१३।
ध्यायतः शिवपदाब्जं चतसा निर्मलेन वै ।
एकेन जन्मना मुक्तिः सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ।१४।

इसलिए सभी को शिवपुराण की कथा सुननी चाहिये। इसी उद्देश्य से शिवजी ने इसे बनाया है। क्योंकि यह सभी वर्ग का साधक है ।८। इस कथा के द्वारा शिवजी का ध्यान सिद्ध हो जाता है। ध्यान से ज्ञान को सिद्धि होती और ज्ञान से कैवल्य प्राप्त होता है ।९। जिसे शंकर का ध्यान सिद्ध नहीं है, वह यदि इस कथा को सुने तो उसे शिवजी के ध्यान की सिद्धि होती है और वह परमगति को प्राप्त होता है ।१०। इस कथा को सुनकर भगवान् शिवजी का ध्यान करके पश्चात्ताप करने वाले पुरुष सिद्धि को प्राप्त हो चुके हैं ।११। इस सत्कथा को सुनने वाले पुरुष सभी प्रकार के मङ्गल को प्राप्त होते और शिवजी की आराधना करने से उनकी संसार व्याधि छूट जाती है।।१२। शिव की कथा सुनकर मनन करने से तथा निदिध्यासन के द्वारा चित्त की पूर्ण शुद्धि

हो जाती है ।१३। स्वच्छ चित्त से शिवजी के चरणकमल का ध्यान कर एक जन्म में ही तू मुक्ति को प्राप्त हो जायगी यह मैं सत्य कहता हूं ।१४

अथ बिंदुगपत्नी सा चंचुलाह्वा प्रसन्नधीः ।
इत्युक्ता तेन विप्रेण समासीद्वाष्पलोचना ।१५।
पपातारं द्विजेन्द्रस्य पादयोस्तस्य हृष्टधीः ।
चञ्चुला साञ्जलिः सा च कृतार्थास्मीत्यभाषत ।१६।
अथ सोत्थाय सातका साञ्जलिर्गद्गदाक्षरम् ।
तमुवाच महाशैवं द्विजं वैराग्ययुक्सुधौः ।१७।
ब्रह्मञ्छैववर स्वामिन्धन्यस्त्वं परमार्थदृक् ।
परोपकार निरतो वणनीयः सुसाधुषु ।१८।
उद्धरोद्धर मां साधो पतन्ती नरकार्णवे ।
श्रुत्वा यां सुकथां शवीं पुराणार्थविजृम्भिताम् ।१९।
विरक्तधीरहं जाता विषयेभ्यश्च सवतः ।
सुश्रद्धा महती ह्येतत्पुराणश्रवणेऽधुना ।२०।

तब चंचुला उसके वचनों से प्रसन्न हुई और उसके नेत्रों में आनन्दाश्रु आ गये ।१५। वह प्रसन्नतापूर्वक ब्राह्मण के चरणों में गिर गई और हाथ जोड़कर बोली, हे ब्रह्मन् ! मैं कृतार्थ होगई हूं ।१६। और अत्यन्त शान्तिपूर्वक उठकर प्रसन्न होती हुई गद्गद वाणी द्वारा वैराग्यमय वचन उस महाशैव्य से बोली ।१७। चंचुला ने कहा—हे ब्रह्मन् ! आप शिव-भक्तों में श्रेष्ठ हैं । परमार्थ के देखने वाले, परोपकार में निरत तथा साधुओं में उत्तम हैं ।१८। हे भगवन् ! मैं नरक सागर में गिरती जा रही हूं आप मेरा उद्धार करिये । जिस पुराण के अर्थ वाली शिव-कथा को सुनकर मैं पाप कर्मों से विरक्त हुई हूं, उस कल्याणकारी पुराण को श्रवण करने की मुझे अत्यन्त श्रद्धा उत्पन्न हुई है ॥१९-२०॥

इत्युक्त्वा साञ्जलिः सा वै संप्राप्य तदनुग्रहम् ।
तत्पुराणं श्रोतुकामाऽतिष्ठत्तत्सेवने रता ।२१।
अथ शैववरो विप्रस्तस्मिन्नेव स्थले सुधौः ।

सत्कथां श्रावयामास तत्पुराणस्य तां स्त्रियम् ।२२।
इत्थं तस्मिन्महाक्षेत्रे तस्मादेव द्विजोत्तमात् ।
कथां शिवपुराणस्य सा शुश्राव महोत्तमाम् ।२३।
भक्तिज्ञानविरागाणां वर्द्धिनीं मुक्तिदायिनीम् ।
बभूव सुकृतार्था सा श्रुत्वा तां सत्कथां पराम् ।२४।

सूतजी ने कहा—चंचुला हाथ जोड़कर इस प्रकार कहती हुई ब्राह्मण की कृपा को प्राप्त हुई और शिवपुराण सुनने की कामना से उसके समीप जा बैठी ।२१। वह शैव्यों में श्रेष्ठ विप्र उस पवित्र स्थान में उस स्त्री को शिवपुराण की पवित्र कथा सुनने लगे ।२२। उस विप्र श्रेष्ठ के मुख से चंचुला ने उस महान् क्षेत्र में बैठकर परमोत्तम शिवपुराण की कथा सुनी ।२३। वह कथा भक्ति, ज्ञान और वैराग्य की वृद्धि करने वाली और मोक्षदायिनी थी । चंचुला उस कथा को सुनकर कृतार्थ होगई ।२४।

।। बिन्दुग सद्गति ।।

सा कदाचिदुमां देवीमुपगम्य प्रणम्य च ।
सुतुष्टाव करौ बद्ध्वा परामानन्दसंप्लुता ।१।
गिरिजे स्कन्दमातस्त्वं सेविता सर्वदा नरैः ।
सर्वसौख्यप्रदे शम्भुप्रिये ब्रह्मस्वरूपिणि ।२।
विष्णु ब्रह्मादिभिः सेव्या सगुणा निर्गुणापि च ।
त्वामाद्या प्रकृतिःसूक्ष्मा सच्चिदानन्दरूपिणी ।३।
सृष्टिस्थितिलयकरी त्रिगुण त्रिसुरायला ।
ब्रह्मविष्णुमहेशानां सुप्रतिष्ठाकरा परा ।४।
इति स्तुत्वा महेशीं तां चंचुला प्राप्तसद्गतिः ।
विरराम नतस्कन्धा प्रेमपूर्णाश्रुलोचना ।५।
ततः सा करुणाविष्ठा पार्वती शंकरप्रिया ।
तामुवाच महाप्रीत्या चंचुला भक्तवत्सला ।६।
चंचुले सखि सुप्रीतानया स्तुत्यास्मि सुन्दरि ।
किं याचसे वरं ब्रूहि नादेयं विद्यते तव ।७।

सूतजी ने कहा—एक समय चंचुला भगवती उमा के पास पहुँची और उन्हें प्रणाम कर परमानन्द पूर्वक कर जोड़कर प्रसन्न करने लगी ।१। चंचुला ने कहा—हे गिरजे ! हे स्कन्द माता ! आपकी मनुष्य सदा सेवा करते हैं । आप ही सदा सुख के देने वाली तथा साक्षात् ब्रह्म स्वरूप हो ।२। ब्रह्मा, विष्णु आदि के द्वारा सेवनीय आप सगुण निर्गुण स्वरूप आद्या प्रकृति एवं सूक्ष्म सच्चिदानन्द स्वरूप वाली हो ।३। आप ही सृष्टि स्थिति और लय करने वाली त्रिगुणात्रिसुरालया एवं ब्रह्मा, विष्णु, महेश की सुप्रतिष्ठा करने वाली हो ।४। सूतजी ने कहा—सद्गति प्राप्त चंचुला ने भगवती उमा की इस प्रकार स्तुति की और नेत्रों में अश्रु लाती हुई शान्ति को प्राप्त हुई ।५। तब करुणामयी गिरिजा ने उस भक्त-वत्सला चंचुला से कहा—हे चंचुले ! मैं तेरी स्तुति से अत्यन्त प्रसन्न हुई हूं । तुझे जो कुछ वर माँगना हो माँग ले, तेरे लिये कोई भी वस्तु अदेय नहीं है ॥६–७॥

इत्युक्ता या गिरिजया चंचुला सुप्रणम्यताम् ।
पर्यपृच्छत सुप्रीत्या साञ्जलिर्नतमस्तका ।८।
मम भर्ताभुना क्वास्ते नैव जानामि तद्गतिम् ।
तेन युक्ता यथाहं वै भवामि गिरिजेऽनघे ।९।
तथैव कुरु कल्याणि कृपया दीनवत्सले ।
महादेवि महेशानि भर्ता मे वृषलीपति ।
तत्तः पूर्व मृतः पापी न जाने कां गतिं गतः ।१०।
इत्याकर्ण्य वचस्तस्याश्चंचुलाया हि पार्वती ।
प्रत्युवाच सुसंवीत्या गिरिजा नयवत्सला ।११।
सुते भर्ता बिन्दुगाह्वो महापापी दुराशयः ।
वेश्याभोगी महामूढो मृत्वा स नरकं गतः ।१२।
भुक्त्वा नरकदुःखानि विविधान्यमिताः समाः ।
पापशेषेण पापात्मा विन्ध्ये जातः पिशाचकः ।१३।
इदानीं स पिशाचोऽस्ति नानाक्लेशसमन्वितः ।
तवैव वातभुग्दुष्टः सर्वकष्टवहः सदा ।१४।

सूतजी ने कहा—पार्वतीजी की बात सुनकर चंचुला ने हाथ जोड़े और प्रणामपूर्वक शिर झुका कर उनसे प्रश्न किया ।८। हे भगवती ! मेरा स्वामी इस समय कहाँ है ? मैं उसके विषय में नहीं जानती । हे कल्याणी ! वह मुझे मिल सके, ऐसी कृपा करिये ।९। हे महादेवी ! मेरा स्वामी वृषलीपति था । वह पापी मुझसे पहले ही मर गया, न जाने उसे कौन-सी गति प्राप्त हुई ।१०। सूतजी ने कहा—चंचुला की यह बात सुनकर भगवती पार्वतीजी प्रसन्न होकर कहने लगीं ।११। हे पुत्री ! तेरा पति बिन्दुग घोर पापी और वेश्यागामी था । वह महामूढ़ मरने के पश्चात् नरक में गिरा ।१२। उसने बहुत वर्षों तक नरक के दुःख भोगे और बचे हुये पाप के कारण वह विंध्याचल में जाकर पिशाच हुआ ।१३। इस समय वह अनेक क्लेशों में पड़ा हुआ पिशाच है और वायु भक्षण करता हुआ अनेक कष्टों को भोगता है ।१४।

इति गौर्य्या वचः श्रुत्वा चंचुला सा शुभव्रता ।
पतिदुःखेन महता दुःखिताऽऽसीत्तदा किल ।१५।
समाधाय ततश्चित्त सुप्रणम्य महेश्वरीम् ।
पुनः पप्रच्छ सा नारी हृदयेन विदूयता ।१६।
महेश्वरी महादेवि कृपां कुरु ममोपरि ।
समुद्धर पतिं मेऽद्य दुष्टकर्मकं खलम् ।१७।
केनोपायेन मे भर्ता पापात्मा स कुबुद्धिमान् ।
सद्गतिं प्राप्नुयाद्देवि तद्वदाशु नमोऽस्तु ते ।१८।
इत्याकर्ण्य वचस्तस्याः पार्वती भक्तवत्सला ।
प्रत्युवाच प्रसन्नात्मा चंचुलां स्वसखीं च ताम् ।१९।
शृणुयाद्यदि ते भर्ता पुण्यां सिवकथा पराम् ।
निस्तीर्य दुर्गतिं सर्वां सद्गतिं प्राप्नुयादिति ।२०।
इति गौर्य्या वचः श्रुत्वाऽमृताक्षरमथादरात् ।
कृताञ्जलिर्नतस्कन्धा प्रणनाम पुनः पुनः ।२१।
तत्कथाश्रवणं भर्तुः सर्वपापविशुद्धये ।
सद्गतिप्राप्तये चैव प्रार्थयामास तां तदा ।२२।

सूतजी ने कहा—पार्वतीजी की बात सुनकर उत्तम व्रत वाली चंचुला अपने पति के दुःख से अत्यन्त दुःखी हो गई ।१५। अपने स्वामी में चित्त लगाकर पार्वतीजी को प्रणाम कर वह दुखित हृदय से उनसे पुनः प्रश्न करने लगी ।१६। हे महादेवी ! मुझ पर कृपा करिये । दुष्टकर्म के फल से कष्ट भोगते हुए मेरे स्वामी का उद्धार कीजिये ।१७। मेरा पापात्मा स्वामी किस प्रकार बुद्धिमान हो सद्गति को प्राप्त हो, मेरे प्रति वह कहिये। मैं आपको प्रणाम करती हूं ।१८। सूतजी ने कहा—उसकी बात सुनकर भक्त-वत्सल पार्वतीजी ने प्रसन्न होकर अपनी सखी चंचुला से कहा ।१९। यदि तेरा पति पवित्र शिव कथा सुने तो दुर्गति से पार होकर श्रेष्ठ गति प्राप्त करेगा ।२०। पार्वतीजी के असृत समान शब्दों को श्रवण कर आदर पूर्वक हाथ जोड़ती हुई चंचुला अपने स्वामी के पाप की निवृत्ति के लिये शिव कथा की इच्छा करती हुई, कथा का सुयोग प्राप्त करने के निमित्त भगवती से पुनः प्रार्थना करने लगी ।२१-२२।

तयामुहुर्मुहुर्नार्या प्रार्थ्यमाना शिवप्रिया ।
गौरी कृपान्वितासीत्सा महेशी भक्तवत्सला ।२३।
अथ तुम्बुरमाहूय शिवसत्कीर्तिगायकम् ।
प्रीत्या गन्धवराजं हि गिरिकन्येदमब्रवीत् ।२४।
हे तुं बुरो शिवप्रीत मन मानसकारक ।
सहानया विन्ध्यशलं भद्रं ते गच्छ सत्वरम् ।२५।
आस्ते तत्र महाघोरः पिशाचोऽतिभयंकरः ।
तद्भूत शृणु सुप्रीत्याऽऽदितः सर्वं ब्रवीमि ते ।२६।
पुराभवे पिशाचः स बिन्दुगाह्वोऽभवद्द्विजः ।
अस्या नार्याः पतिर्दुष्टो मत्सख्या वृषलोपतिः ।२७।
स्नानसंध्याक्रियाहीनोऽशोचः क्रीधविमूढधीः ।
दुर्भक्षो सज्जनद्वेषी दुष्परिग्रहकारकः ।२८।
हिंसकः शस्त्रधारी च सव्यहस्तेन भोजनी ।
दीनानां पीडकः क्रूरः परवेश्मप्रदीपकः ।२९।
चाण्डालाभिरतो नित्य वेश्याभोगी महाखलः ;

स्वपत्नीत्यागकृत्पापी दुष्टसंगरतस्तदा ।३०।

सूतजी ने कहा—जब उसने पार्वतीजी की बारम्बार प्रार्थना की तब भक्तवत्सला पार्वतीजी कृपा से युक्त हो गईं ।२३। उन्होंने शिव की सत्कीर्ति का गान करने वाले तुम्बरु गन्धर्व को बुलाया और उससे प्रीति-पूर्वक कहने लगीं ।२४। पार्वतीजी ने कहा—हे तुम्बरु ! तुम शिवजी की प्रीति करने वाले और मेरे वचन मानने वाले हो । इसके साथ विंध्याचल पर्वत को जाओ ।२५। वहाँ एक अत्यन्त भयङ्कर पिशाच निवास करता है । मैं तुमसे उसकी बात कहती हूँ, तुम प्रसन्न होकर उसे श्रवण करो ।२६। पिशाच योनि को प्राप्त होने से पूर्व बिन्दुग नामक ब्राह्मण था । वह दुष्ट इसी स्त्री का स्वामी था । वेश्यागामी, स्नान एवं संध्या की क्रिया से रहित, पवित्रता से हीन, क्रोध से मूर्ख बुद्धि वाला, दुर्भक्षी, सज्जनों से द्वेष रखने वाला और दुष्परिग्रह वाला था ।२७।-२८। वह शस्त्रधारी, हिंसक, बाँये हाथ से भोजन करने वाला, दोनों को पीड़ित करने वाला, क्रूर, पीड़क तथा लोगों के घर में आग लगाने वाला था ।२९। चाण्डाल से प्रीति करने वाला, वेश्यागामी, अत्यन्त पापी, पत्नी का त्याग करने वाला और दुष्ट सङ्ग से प्रीति करने वाला था ।३०।

तेन वेश्याकुसंगेन सुकृतं नाशितं महत् ।
वित्तलोभेन महषी निभया जारिणी कृता ।३१।
आमृत्योः स दुराचारी कालेन निधनं गतः ।
ययौ यमपुरं घोरंभोगस्थानं हि पापिनाम् ।३२।
तत्र भुक्त्वा स दुष्टात्मा नरकानि बहूनि च ।
इदानीं स पिशाचोऽस्ति विंध्येऽद्रौ पाप भुक्खलः ।३३
तस्याग्रे परमां पुण्यां सर्वपापविनाशिनीम् ।
दिव्यां शिवपुराणस्य कथांकथय यत्नतः ।३४।
दुतं शिवपुराणस्य कथा श्रवणतः परात् ।
सर्वपाप विशुद्धात्मा हास्यति प्रेततां च सः ।३५।
मुक्तं च दुर्गतेस्तंवै बिन्दुगं त्वं पिशाचकम् ।

मदाज्ञया विमानेन समानय शिवान्तिकम् ।३६।

उसने वेश्या-सङ्ग से अपने सभी सुकृतों को नष्ट कर डाला और धन के लोभ से अपनी पत्नी को भी व्यभिचारिणी बना दिया ।३१। मरने के समय तक वह दुराचार में लगा रहा और मृत्यु होने पर यम-लोक को गया जहाँ से उसे पापियों के घोर स्थान की प्राप्ति हुई ।३२। वहाँ उस दुष्टात्मा को अनेक नरक भोगने पड़े और अब विंध्याचल पर्वत में जाकर पिशाच हो गया है ।३३। तुम वहाँ जाकर परम पवित्र शिवपुराण की कथा, जो सम्पूर्ण पापों को नष्ट करने में समर्थ है, उस पिशाच को श्रवण कराओ ।३४। वह उस पवित्र कथा सुनते ही पाप-रहित होकर अपने प्रेतत्व का त्याग कर देगा ।३५। तब वह दुर्गति से छूट कर अपने पिशाचत्व को छोड़ देगा । उस समय तुम उसे विमान पर बैठा कर मेरी आज्ञा से शिवजी के ले जाना ।३६।

इत्यादिष्टो महेशान्या गन्धर्वेन्द्रश्च तुंबुरुः ।३७।
मुमुदेऽतीव मनसि भाग्यं निजमवर्णयत् ।३८।
आरुह्य सुविमानं स सत्या तत्प्रियया सह ।
ययौ विंध्याचलं सोऽरं यत्रास्ते नारदप्रियः ।३९।
तत्रापश्यत्पिशाचं तं महाकायं महाहनुम् ।
प्रहसन्तं रुद्रन्तं च वल्गतं विकटाकृतिम् ।
बलाज्जग्राह तं पाशः पिशाचं चातिभीकरम् ।
तुम्बुरुश्शिवसत्कीर्तिगायकश्च महाबली ।४०।
अथोशिवपुराणस्य वाचनार्थं स तुम्बुरुः ।
निश्चित्य रचनां चक्रे महोत्सवसमन्विताम् ।४१।
पिशाचं तारितुं देव्याः शासनात्तुम्बुरुगतः ।
विंध्यं शिवपुराणं स ह्यद्रि श्रावयितुं परम् ।४२।
इति कोलाहलो जातः सवलोकेषु वै महान् ।
तत्र तच्छ्रवणार्थाय ययुर्देवर्षयो द्रुतम् ।४३।

सूतजी ने कहा—तुम्बरु गन्धर्व से जब पार्वतीजी ने इस प्रकार कहा, तब वह अत्यन्त प्रसन्न होकर अपने भाग्य को सराहने लगा ।३७।

चंचुला को साथ लेकर वह गन्धर्व विमान में बैठा और तब उनने विंध्याचल पर्वत को प्रस्थान किया ।३८। वहाँ वह विकराल हनु वाला महाकाय पिशाच उन्हें दिखाई दिया । वह विकट आकार वाला कभी हँसता, रोता कभी कूदता और चाहे जो कुछ बकता था ।३९। तुम्बरु ने उस पिशाच को बलपूर्वक पाशों के द्वारा पकड़ा और फिर उसके समक्ष शिवजी की कीर्ति का गान प्रारम्भ किया ।४०। फिर तुम्बरु ने शिवपुराण पढ़ने के लिये एक महोत्सव के वातावरण का आयोजन किया ।४१। पार्वतीजी की आज्ञा से उस पिशाच को सङ्कट मुक्त करने लिये तुम्बरु गया, वह शिवपुराण की कथा विंध्याचल में कहेगा ।४२। सब लोगों में यह विज्ञप्ति प्रसारित हो गई तब शिवपुराण का श्रवण करने के लिये वहाँ देवता और ऋषि भी आ गये ।४३।

समाजस्तत्र परमोऽद्भुतश्चासीच्छुभावहः ।
तेषां शिवपुराणस्यागतानां श्रोतुमादरात् ।४४।
पिशाचमथ तं पाशैर्बद्ध्वा समुपवेश्य च ।
तुंबुरुर्वल्लकीहस्तो जगौ गौरीपतेः कथाम् ।४५।
आरभ्य संहितामाद्यां सप्तमीसंहितावधि ।
स्पष्टं शिवपुराणं हि समाहात्म्यं समावदत् ।४६।
श्रुत्वा शिवपुराणं तु सप्तसंहितमादरात् ।
बभूवुः सुकृतार्थास्ते सर्वे श्रोतार एव हि ।४७।
स पिशाचो महापुण्यं श्रुत्वा शिवपुराणकम् ।
विधूय कलुषं सद्यो जहौ पैशाचिकं वपुः ।४८।
दिव्यरूपो बभूवाशु गौर वर्णः सितांशुकः ।
सर्वालंकारदीप्तांगस्त्रिनेत्रश्चन्द्रशेखरः ।४९।

उस समय वहाँ श्रेष्ठ और अद्भुत समाज हुआ सभी, आदरपूर्वक शिवपुराण सुनने को एकत्र हुए थे ।४४। पाशों से बँधा वह पिशाच भी वहाँ बैठा । उस समय तुम्बरु ने वीणा लेकर पार्वतीपति शिवजी का कीर्ति-गान प्रारम्भ किया ।४५। उसने प्रथम संहिता से प्रारम्भ कर सातवीं संहिता तक माहात्म्य सहित सम्पूर्ण शिवपुराण की

कथा का वर्णन किया ।४६-४७। कथा श्रवण के फल से पिशाच ने भी पाप रहित होकर अपने शरीर का त्याग कर दिया ।४८। वह तत्काल गौर वर्ण का होकर श्वेत वस्त्रधारी दिखाई देने लगा । सम्पूर्ण अलङ्कारों से जगमगाता हुआ वह तीन नेत्र युक्त चन्द्रशेखर रूप हो गया ।४९।

शिवपुराण श्रवण विधि

श्रीमच्छिवपुराणस्य श्रवणस्य विधिं वद ।
येन सर्वं लधेच्छ्रोता सम्पूर्ण फलमुत्तमम् ।१।
अथ ते संप्रवक्ष्यामि संपूर्ण धलहेतवे ।
विधि शिवपुराणस्य शौनक श्रवणे मुने ।२।
दैवज्ञं च प्रमाहूय सन्तोष्य च जनान्वितः ।
मुहूर्तं शोधयेच्छुद्धं निर्विघ्नेन समाप्तये ।३।
वार्ता प्रेष्या प्रयत्नेन देशे देशे च सा शुभा ।
भविष्यति कथा शैवी आगन्तव्यं शुभार्थिभिः ।४।
दूरे हरिकथाः केचिद्दूरे शंकरकीर्तनाः ।
स्त्रियः शूद्रादयो ये च बोधस्तेषां भवेद्यतः ।५।
देशे देशे शांभवा ये कीर्तन श्रवणोत्सुकाः ।
तेषामानयनं कार्यं तत्प्रकारार्थमादरात् ।६।
भविष्यति समाजोऽत्र साधूनां परमोत्सवः ।
पारायणे पुराणस्य शैवस्य परमाद्भुतः ।७।

शौनकजी ने कहा—हे सूतजी ! आप शिवपुराण के सुनने की विधि मेरे प्रति कहिए, जिससे श्रोताओं को श्रेष्ठ फल की प्राप्ति हो सके ।१। सूतजी ने कहा—मैं फल के लिए शिवपुराण की विधि तुमसे कहता हूं । हे शौनक ! तुम इसे ध्यान से श्रवण करो ।२। शिवपुराण की कथा सुनने के लिए ज्योतिषी को बुलावे और कुटुम्ब सहित सन्तुष्ट कर पुराण के निर्विघ्न पूर्ण होने के लिए मुहूर्त निकाले ।३। फिर देश-देश में समाचार भेजे कि अमुक स्थान पर शिवपुराण की कथा होगी, उसे सुनने के लिए सबको सम्मिलित होना चाहिये ।४। जो शिवजी की कथा अथवा उनके कीर्तन से रहित हो ऐसे स्त्री, शूद्र आदि अज्ञानियों को भी बोध हो

सके ।५। देश-देश में जो शिव-भक्त कीर्तन और श्रवण के लिये उत्कण्ठित हों, उनको आदरपूर्वक आमन्त्रित करना चाहिए ।६। इस स्थान पर साधुओं का परम मंगल प्रदान करने वाला समाज होगा तथा अत्यंत अद्‌भुत शिवपुराण का पारायण होगा ।७।

नावकाशो यदि प्रेम्णागन्तव्यं दिनमेककम् ।
सर्वथाऽऽगमनं कार्यं दुर्लभा च क्षणस्थितिः ८।
तेषामाह्वानमेवं हि कार्यं सविनय मुदा ।
आगतानां च तेषां हि सर्वथा कार्य्य आदरः ।९।
शिवालये च तीर्थे वा वने वापि गृहेऽथवा ।
कार्यं शिवपुराणस्य श्रवणस्थलमुत्तमम् ।१०।
कार्यं संशोधन भूमेर्लेपनं धातुमण्डनम् ।
विचित्रा रचना दिव्या महोत्सवपुरासरम् ।११।
कर्तव्यो मण्डपोऽत्युच्चैः कदलीस्तं भमंडितः ।
फलपुष्पादिभि सम्यग्विष्वग्वर्तानराजितः ।१२।
चतुर्दिक्षु ध्वजारोपः सपताकः सुशोभनः ।
सुभक्तिः चर्वथा कार्या सर्वानन्दविधायिनी ।१३।
सकल्प्यमानसं दिव्यं शङ्करस्य परमात्मनः ।
वक्तुश्चापि तथा दिव्यमासनं सुखसाधनम् ।१४।

यदि अवकाश न हो तो एक दिन के लिए ही प्रेम पूर्वक आइये । यहाँ अवश्य आना चाहिये । क्योंकि ऐसे कार्य क्षणमात्र के लिये भी दुर्लभ हैं ।८। इस प्रकार विनयपूर्वक लोगों को आमन्त्रित करना चाहिए और आगत व्यक्तियों का आदर एवं सम्मान करना चाहिये ।९। यदि शिवालय रूप तीर्थ की स्थापना कराये और वहाँ शिवपुराण की कथा करावे तो वह स्थान इसके लिए सर्वश्रेष्ठ है ।१०। जहाँ शिवपुराण की कथा हो, वहाँ पहिले पृथ्वी को लीपे और धातुओं से आच्छादित करे । इस प्रकार विचित्र रचना पूर्वक महोत्सव करे ।११। केला का ऊँचा मण्डप निर्मित करे और फल पुष्पादि का अर्पण करते हुये भले प्रकार पूजन करना चाहिये ।१२। चारों ओर ध्वजा पताका फहराये और सब

प्रकार से आनन्द प्रदान करने वाली श्रेष्ठ भक्ति का आश्रय ग्रहण करे ।१३। संकल्प कर भगवान् शङ्कर को दिव्य आसन पर प्रतिष्ठापित करे और भक्त को बैठने के लिये भी श्रेष्ठ आसन दे ।१४।

श्रोतृणां कल्पनीयानि सुस्थलानि यथार्हतः ।
अन्येषां च स्थलान्येव साधारणतया मुने ।१५।
विवाहे यादृश चित्त तादृशं कार्यमेव हि ।
अन्य चिन्ता विनिर्वार्य्या सर्वा शौनक लौकिकी ।१६।
उदङ्मुखो भवेद्वक्ता श्रोता प्राग्वदनस्थता ।
व्युत्क्रमः पादयोर्ज्ञेयो विरोधो नास्ति कश्चन ।१७।
अथवा पूर्वदिग्ज्ञेया पूज्यपूजकमध्यतः ।
अथवा सम्मुखं वक्तुः श्रोतृणामाननं स्मृतम् ।१८।
नीचबुद्धिं न कुर्वीत पुराणज्ञे कदाचन ।
यस्य वक्त्रोद्गता वाणी कामधेनुः शरीरिणाम् ।१९।
गुरुवत्सन्ति बहवो जन्मतो गुणतश्च वै ।
परो गुरु पुराणज्ञस्तेषां मध्ये विशेषतः ।२०।
पुराणज्ञः शुचिर्दक्षः शान्तो विजितमत्सरः ।
साधुः कारुण्यवान्वाग्मी वदेत्पुण्यकथामिमाम् ।२१।
आसूर्योदयमारभ्य सार्द्धद्विप्रहरान्तकाम् ।
कथा शिवपुराणस्य वाच्यसम्मक् सुधीमता ।२२।

श्रोताओं के बैठने के लिये भी योग्य एवं सुन्दर स्थान रखे तथा सभी स्थान साधारण रूप से निश्चित करे ।१५। शिवपुराण की कथा में जैसा ही उत्साह रखे, जैसा विवाहादि अन्य मङ्गल कार्यों के करने में होता है । हे शौनक ! सभी लौकिक चिन्ताओं को उस समय त्याग दे ।१६। वक्ता का मुख उत्तर दिशा में रहे और श्रोता पूर्वाभिमुख होकर पालथी मारकर बैठे । कथा के सम्मुख पाँव न रखे और किसी प्रकार का भी बिरोध न हो ।१७। अथवा पूज्य पूजक के बीच में पूर्व दिशा होनों चाहिये अथवा श्रोताओं के मुख कथा वाचक के सम्मुख होने चाहिये । ।१८। पुराण के जानने वाले के प्रति शंका युक्त बुद्धि न करे, क्योंकि

उसके सुख के निकलने वाले वचन देहधारियों के लिये कामधेनु के समान हैं ।१९। जन्म से और गुण से अनेक गुरु होते हैं, परन्तु उन सभी में शिवपुराण का ज्ञाता विशिष्ट प्रकार का गुरु होता है ।२०। पुराण का जानने वाला पवित्र, चतुर, शान्त, मन्द-रहित, साधु दयावान और वाग्मी हो जो इस पुराण कथा को कहता है ।२१। शिवपुराण की कथा का आरम्भ सूर्योदय से पूर्व कर दे और बुद्धिमान कथावाचक उसे साढ़े दो पहर तक बाँचे ।२२।

कथां शिवपुराणस्य शृणुयाददरात्सुधीः ।
श्रोता सुविधिना शुद्धः शुद्धचित्तः प्रसन्नधीः ।२३।
अनेककर्मविभ्रान्तः कामादिषड्विकारवान् ।
स्तेनः पाखण्डवादी च वक्ता श्रोता न पुण्यभाक् ।२४।
लोकचिन्तां धनागारपुत्रचिंतां व्युदस्य च ।
कथाचित्तः शुद्धमतिः स लभेष्फलमुत्तमम् ।२५।
श्रद्धाभक्तिसमायुक्ता नान्यकार्येषु लालसः ।
वाग्यताः शुचयोऽव्यग्राः श्रोतारः पुण्यभागिनः ।२६।
कथायां कथ्यमानायां गच्छन्त्यंयत्र ये नराः ।
भोगान्तरे प्रणश्यन्ति तेषां दारादिसम्पदः ।२७।
असम्प्रणम्य वक्तारं कथां शृण्वन्ति ये नराः ।
भुक्त्वा ते नरकान्सर्वान्भवत्यर्जुनपादपाः ।२८।
अनातुरा श्याना ये शृण्वतीमां कथां नराः ।
भुक्त्वा ते नरकान्सर्वान्भवत्यजगरादयः ।२९।

शिवपुराण की कथा बुद्धिमान श्रोता आदर पूर्वक सुने और शुद्ध तथा प्रसन्नचित्त रहे ।२३। अनेक कर्मों से भ्रान्ति को प्राप्त तथा कामादि छै विकारों से युक्त, चोर, पाखण्डी वक्ता या श्रोता पुण्य के भागी नहीं होते ।२४। उत्तम फल की प्राप्ति उसी को होती है जो लोक-चिन्ता, धन, गृह, या पुत्र की चिन्ता त्याग कर केवल शिव कथा में चित्त लगाता है ।२५। श्रद्धा भक्ति से युक्त तथा अन्य कार्यों की लालसा से मुक्त पुरुष मौन रहकर और व्यग्रता को छोड़कर कथा सुनते हैं, वही पुण्य-

भागी होते हैं ।२६। कथा होते हुये जो मनुष्य उसे बीच में छोड़कर अन्य स्थान को चले जाते हैं, उनके भोगान्तर में स्त्री, धन आदि का नाश हो जाता है ।२७। जो मनुष्य कथा वाचक को प्रणाम किये बिना कथा श्रवण करते हैं, वे नरक में दुःख पाकर अर्जुन वृक्ष की योनि प्राप्त करते हैं ।२८। जो मनुष्य निरोग होते हुये भी लेटकर कथा श्रवण करते हैं, वे नरकों के दुःख भोगने के पश्चात् अजगर आदि होते हैं ।२९।

वक्तुः समासनारूढ़ा ये शृण्वन्ति कथामिमाम् ।
गुरुतल्पसमं पाप प्राप्यते नारकैः सदा ।३०।
ये निंदंति च वक्तारं कथां चेमां सुपावनीम् ।
भवंति शनका भुक्त्वा दुःखं जन्मशतं हि ते ।३१।
कथायां वर्तमानायां दुर्वादं ये वदंति हि ।
भुक्त्वा ते नरकान्घोरान्भवंति गर्दभास्ततः ।३२।
कदाचिन्नापि शृण्वन्ति कथामेतां सुपावनीम् ।
भुक्त्वा ते नरकान्घोरान्भवंति वनसूकराः ।३३।
कथायां कीत्यमानायां विघ्नं कुर्वन्ति ये खलाः ।
कोटिजन्मं नरकान्भुक्त्वा भवंति ग्रामसूकराः ।३४।
एवंविचार्य शुद्धात्मा श्रोता वक्तृमुभक्तिमान् ।
कथाश्रवणहेतोर्हि भवेत्प्रीत्योद्यतः सुधीः ।३५।
कथाविघ्नविनाशार्थं गणेशं पूजयेत्पुरा ।
नित्य संपाद्य संक्षेपात्प्रायश्चित्तं सपाचरेत् ।३६।

जो किसी अहं-भावना वश वक्ता के बराबर, ऊंचे आसन पर बैठ कर कथा श्रवण करते हैं, उनको गुरु शैय्या पर चढ़ने का पाप होता है ।३०। जो वक्ता इस पवित्र कथा की निन्दा करते हैं, वे दुःख भोगते हुये सौ जन्म तक श्वान योनि को प्राप्त होते हैं ।३१। जो कथा होते के समय मुख से दुर्वचन निकालते हैं, वे घोर नरक के दुखों को भोगकर गधे की योनि में जाते हैं ।३२। इस पवित्र कथा को जो कभी भी श्रवण नहीं करते, वे घोर नरक में जाकर दुःख भोगते और फिर वन शूकर होते हैं ।३३। कथा होते समय जो दुष्ट मनुष्य विघ्न उपस्थित करते हैं, वह

करोड़ वर्षों तक नरक भोगने के उपरान्त ग्राम शूकर बनते हैं ।३४। इसलिये श्रोता और वक्ता दोनों ही विचार पूर्वक शुद्धात्मा होकर भक्ति-भाव सहित कथा सुनने के लिये बुद्धिपूर्वक तत्पर हों ।३५। कथा में विघ्न उपस्थित न हो, इसके लिये प्रथम गणेशजी का पूजन करे, फिर संक्षेप में नित्य कर्म करके प्रायश्चित करे ।३६।

नवग्रहांश्च सम्पूज्य सर्वतोभद्रदैवतम् ।
शिवपूजोक्तविधिना पुस्तकं तत्समर्चयेत् ।३७।
पूजनांते महाभक्त्या करौ बद्ध्वा विनीतकः ।
साक्षाच्छिवस्वरूपस्य पुस्तकस्य स्तुतिं चरेत् ।३८।
श्रीमच्छिवपुराणाख्य प्रत्यक्षस्त्व महेश्वरः ।
श्रवणार्थं स्वीकृतोऽसि सन्तुष्टो भव वै मयि ।३९।
मरोरथ मदीयोऽयं कर्तव्यः सफलस्त्वया ।
निर्विघ्नेन सुसम्पूर्ण कथाश्रवणमस्तु मे ।४०।
भवाब्धिमग्नं दीनं मां समुद्धर भवार्णवात् ।
कर्मग्राहगृहीतांगं दासोऽहं तव शंकर ।४१।
एवं शिवपुराणं हि साक्षाच्छिवस्वरूपकम् ।
स्तुत्वा दीनवचः प्रोच्य वक्तुः पूजां समारभेत् ।४२।
शिवपूजोक्तविधिना वक्तारं च समर्चयेत् ।
सपुष्पवस्त्रभूषाभिर्धूपदीपादिनाऽर्चयेत् ।४३।
तदग्रे शुद्धचित्तेन कर्तव्यो नियमस्यदा ।
आसमाप्ति यथाशक्त्या धारणीयः सुयत्नतः ।४४।
व्यासरूप प्रबोधाग्र्य शिवशास्त्रविशारद ।
एतत्कथाप्रकाशेन मदज्ञानं विनाशय ।४५।

नवग्रह और सर्वतोभद्र के देवताओं को पूजकर शिवजी की पूजन विधि के अनुसार पुराण-पुस्तक का पूजन करना चाहिये ।३७। पूजन के अन्त में भक्ति पूर्वक दोनों हाथ जोड़कर साक्षात् शिवजी स्वरूप पुराण-पुस्तक की स्तुति करे ।३८। यह श्री शिवपुराण प्रत्यक्ष शिवजी का स्वरूप है । सुनने के लिये यह सत्कार करने से मेरे ऊपर प्रसन्न हों

।३९। मेरे इन मनोरथों को आप पूर्ण कीजिये । मेरी यह कथा निर्विघ्न सम्पूर्ण हो जाय, ऐसी कृपा करिये ।४०। हे शङ्कर ! मैं आपका दास हूं । कर्म रूपी ग्राह के द्वारा पकड़ा हुआ संसार सागर में पड़ा हूँ । इस सागर से आप मुझे पार लगाइये ।४१। इस प्रकार इस साक्षात् शिव स्वरूप शिवपुराण का स्तवन करता हुआ नम्रतायुक्त वाणी से व्यास पूजन करे ।४२। शिवजी का पूजन जिस विधि से किया जाता है, उसी विधि से वक्ता का पूजन करे । वस्त्राभूषण, पुष्प और धूप दीप से पूजन करे ।४३। उसके सम्मुख शुद्ध चित से नियम ले और जब तक कथा सम्पूर्ण हो तब तक अपने सामर्थ्यानुसार नियमों का पालन करे ।४४। हे व्यास स्वरूप ! हे ज्ञान के देने वाले ! हे सम्पूर्ण शास्त्र विशारद ! आप इस कथा को कहकर मेरे अज्ञान का हरण कीजिये ।४५।

शिवपुराण के श्रोताओं के विधि निषेध और पूजाविधि

पुंसां शिवपुराणस्य श्रवणव्रतिनां मुने ।
सर्वलोकहितार्थाय दयया नियमं वद ।१।
नियमं शृणु सद्भक्त्या पुसां तेषां च शौनक ।
नियमात्सत्कथां श्रुत्वा निर्विघ्नफलमुत्तमम् ।२।
पुसां दीक्षाविहीनानां नाधिकारः कथाश्रवे ।
श्रोतुकामैरतो वक्तुर्दीक्षा ग्राह्या च तैर्मुने ।३।
ब्रह्मचर्यमधः सुप्ति पत्रावल्यां च भोजनम् ।
कथासमाप्तौ भुक्ति च कुर्यान्नित्यं कथाव्रती ।४।
आसमाप्तपुराणं हि समुपोष्य सुशक्तिमान् ।
शृणुयाद्भक्तिः शुद्धः पुराणं शैवमुत्तमम् ।५।
घृतपानं पयःपानं कृत्वा वा शृणुयात्सुखम् ।
फलाहारेण वा श्राव्यमेकभुक्तं न वाहितत् ।६।
एकवारं हविष्यान्न भुंज्यादेतत्कथाव्रती ।
सुखसाध्यं यथा स्यात्तच्छ्रवणं कायमेव च ।७।

शौनकजी ने कहा—हे सूतजी ! शिवपुराण का व्रत करने वालों के सम्पूर्ण लोकहित के लिये नियम कहिये ।१। सूतजी ने कहा–हे शौनक ! भक्तिपूर्वक उनके नियमों को सुनो । नियम से सत्कथा को सुने, जिससे निर्विघ्नता पूर्वक श्रेष्ठ फल प्राप्त हो ।२। कथा सुनने में दीक्षा-रहित का अधिकार नहीं है । इसलिये वक्ता से दीक्षा लेनी चाहिए ।३। ब्रह्मचर्य पूर्वक पृथिवी में शयन, पत्तल में भोजन तथा कथा समाप्त होने पर आहार ग्रहण करे ।४। श्रोता को उचित है कि पुराण-कथा के सम्पूर्ण होने पर्यन्त सामर्थ्यानुसार व्रत पालन करते हुए श्रद्धा सहित शिवपुराण का श्रवण करे ।५। घृत या दुग्ध का पान करके या फलाहार करके अथवा एक समय भोजन करके कथा सुने ।६। इस कथा के सुनने वाले को एक बार हविष्यान्न का भोजन करना चाहिये जिस प्रकार कथा श्रवण सुखसाध्य हो सके वैसा ही करे ।७।

भोजनं सुकरं मन्ये कथासु श्रवणप्रदम् ।
नोपवासो वरश्चेत्स्यात्कथाश्रवणविघ्नकृत् ।८।
गरिष्ठं द्विदलं दग्धं निष्पावांश्च मसूरिकाम् ।
भावदुष्टं पर्युषितं जग्ध्वा नित्यं कथाव्रती ।९।
वार्ताकं च कलिदं च चिचण्डं मूलकं तथा ।
कूष्माण्डं नालिकेरं च मूलं जग्ध्वा कथाव्रती ।१०।
पलाण्डुं लशुनं हिंगुं गृजनं मादकं हि तत् ।
वस्तुन्यामिषसंज्ञानि वर्जयेद्यः कथाव्रती ।११।
कामादिषड्विकारं च द्विजनां च विनिन्दनम् ।
पतिव्रतासतां निन्दां वर्जयेद्यः कथाव्रती ।१२।
सत्यं शौचं दयां मौनमार्जव विनय तथा ।
औदार्यं मनसश्चैव कुर्यान्नित्यं कथाव्रती ।१३।
निष्कामश्च सकामश्च नियमाच्छ्णुयात्कथाम् ।
सकामः काममाप्नोति निष्कामो मोक्षमाप्नुयात् ।१४।

भले प्रकार कथा में मन लग सके, इसलिये थोड़ा बहुत भोजन अवश्य कर ले । उपवास करने से कथा में मन न लगने के कारण विघ्न होता

है ।८। गरिष्ठ दालें, दग्ध निष्पाव मसूरिका अथवा बासी और दोषयुक्त भोजन को कथाव्रती ग्रहण न करे ।९। बैंगन, कलिंद चिचैड़ा मूली, पेठा आदि शाक मूल का सेवन भी कथाव्रती को नित्य प्रति नहीं करना चाहिए ।१०। प्याज, लहसुन, गाजर तथा मादक द्रव्य और आमिष वस्तुओं का भोजन भी कथाव्रती के लिए त्याज्य कहा गया है ।११। कामादि षट् विकारों का त्याग करे। सत्पुरुषों और ब्राह्मणों की कभी निन्दा न करे तथा पतिव्रता की भी निन्दा न करे ।१२। सत्य, शौच, दया, मौन, आर्जव, विनय, उदारता आदि का पालन कथाव्रती पुरुष को नित्य प्रति करना चाहिए ।१३। निष्काम या सकाम किसी भी भाव से कथा नियमपूर्वक सुननी चाहिए। सकाम पुरुष कामना को और निष्काम श्रवण वाला पुरुष मोक्ष को प्राप्त होता है ।१४।

दरिद्रश्च क्षयी रोगी पापी निर्भाग्य एव च ।
अनपत्योऽपि पुरुषः शृणुयात्सत्कथामिमाम् ।१५।
काकवन्ध्यादयः सप्तविधा अपि खलस्त्रियः ।
स्रवद्गर्भा च या नारी ताभ्यां श्राव्या कथा परा ।१६।
शिवपूजनवत्सम्यक्पुस्तकस्य पुरो मुने ।
पूजा कार्यो सुविधिना वक्तुश्च तदनन्तरम् ।१७।
पुस्तकाच्छादनार्थं हि नवीनं चासनं शुभम् ।
समर्चयेद्दृढं दिव्यं बन्धनार्थं च सूत्रकम् ।१८।
पुराणार्थं प्रयच्छन्ति ये सूत्रं वसनं नवम् ।
योगिनो ज्ञानसम्पन्नास्ते भवंति भवे भवे ।१९।
स्वर्गलोकं समासाद्य भुक्त्वा भोगान्यथेप्सितान् ।
स्थित्वा ब्रह्मपदे कल्पं यान्ति शैवपदं ततः ।२०।

दरिद्री, क्षयी, रोग, पापी, भाग्यहीन एवं सन्तानहीन पुरुष भी अपने दुःखों के निवारणार्थ इस कथा को श्रवण करे।१५। सातों प्रकार की बंध्या स्त्रियों अथवा जिन स्त्रीयों का गर्भ-स्राव हो जाता हो उन्हें निरन्तर शिव कथा को श्रवण करना चाहिए ।१६। हे मुने ! शिवजी

का पूजन करने के समान पुस्तक के सम्मुख विधिवत् पूजन करे और फिर वक्ता का पूजन करे ।१७। पुस्तक के आच्छादनार्थ नवीन वस्त्र प्रदान करे और उसे बाँधने के निमित्त सुन्दर रेशमी डोरा देना चाहिए, ।१८। जो पुरुष पुराण के निमित्त नवीन वस्त्र और सूत्र प्रदान करते हैं, वे सभी युगों में योगी और ज्ञान-सम्पन्न होते हैं ।१९। वे स्वर्ग लोक में जाकर वहाँ के अनेक भोगों का उपभोग कर ब्रह्मलोक को प्राप्त होते और कल्प के अन्त में शिवलोक में जाते हैं ।२०।

विरक्तश्च भवेच्छ्रोता परऽह्नि विशेशतः ।
गीता वाच्या शिवेनोक्ता रामचन्द्राय या मुने ।२१।
गृहस्थश्चेद्भवेच्छ्रोता कर्तव्यस्तेन धीमता ।
होमः शुद्धेन हविषा कर्मणस्तस्य शान्तये ।२२।
रुद्रसहितया होमः प्रतिश्लोकेन वा मुने ।
गायत्र्यास्तन्मयत्वाच्च पुराणस्यास्य तत्वतः ।२३।
दोषयोः प्रशमार्थं च न्यूनताधिकताख्ययोः ।
पठेच्च शृणुयाद्भक्तत्या शिवनामसहस्रकम् ।२४।
एवं कृते विधाने च श्रीमच्छिवपुराणकम् ।
संपूर्णफलदं स्याद्वै भुक्तिमुक्ति प्रदायकम् ।२५।

यदि श्रोता विरक्त हो तो द्वितीय दिवस शिव गीता का विशेष करके पाठ करे । उसका उपदेश शिवजी ने श्रीरामचन्द्रजी को दिया था ।२१। यदि श्रोता गृहस्थ हो तो उसे शुद्ध हवि के द्वारा उस कर्म की शान्ति के निमित्त हवन करना चाहिये ।२२। अथवा रुद्र संहिता के प्रत्येक श्लोक से हवन करे या तन्मय गायत्री से अथवा पुराण के तत्व से हवन करे ।२३। न्यूनाधिक दोषों की शान्ति के लिये भक्तिपूर्वक शिव-सहस्र नाम का पाठ करना चाहिये ।२४। इस प्रकार विधानपूर्वक श्रवण करने से शिवपुराण पूर्ण फलदाता होता है तथा भुक्ति और मुक्ति दोनों फलों की प्राप्ति होती है ।२५।

श्रीशिवमहापुराणम्

अथ श्रीशिवमहापुराणं विद्येश्वरसंहिता प्रारभ्यते

श्रीगणेशाय नमः

श्रीगुरुभ्यो नमः

श्रिसरस्वत्यै नमः

अथ शिवपुराणे प्रथमा विद्येश्वरसंहिताप्रारभ्यते

आद्यन्तमंगलमजातसमानभावमार्यं तमीशमजरामरमात्मदेवम्
पंचाननं प्रबलपंचविनोदशीलं संभावये मनसिशंकरमम्बिकेशम् १

अध्याय १

व्यास उवाच
धर्मक्षेत्रे महाक्षेत्रे गंगाकालिन्दिसंगमे
प्रयागे परमे पुण्ये ब्रह्मलोकस्य वर्त्मनि १
मुनयः शंसितात्मानस्सत्यव्रतपरायणाः
महौजसो महाभागा महासत्रं वितेनिरे २
तत्र सत्रं समाकर्ण्य व्यासशिष्यो महामुनिः
आजगाम मुनीन्द्रष्टुं सूतः पौराणिकोत्तमः ३
तं दृष्ट्वा सूतमायांतं हर्षिता मुनयस्तदा
चेतसा सुप्रसन्नेन पूजां चक्रुर्यथाविधि ४
ततो विनयसंयुक्ता प्रोचुः सांजलयश्च ते
सुप्रसन्ना महात्मानः स्तुतिं कृत्वायथाविधि ५
रोमहर्षण सर्वज्ञ भवान्वै भाग्यगौरवात्
पुराणविद्यामखिलां व्यासात्प्रत्यर्थमीयिवान् ६
तस्मादाश्चर्य्यभूतानां कथानां त्वं हि भाजनम्

रत्नानामुरुसाराणां रत्नाकर इवार्णवः ७
यच्च भूतं च भव्यं च यच्चान्यद्वस्तु वर्तते
न त्वयाऽविदितं किंचित्त्रिषु लोकेषु विद्यते ८
त्वं मद्दिष्टवशादस्य दर्शनार्थमिहागतः
कुर्वन्किमपि नः श्रेयो न वृथा गंतुमर्हसि ९
तत्त्वं श्रुतं स्म नः सर्वं पूर्वमेव शुभाशुभम्
न तृप्तिमधिगच्छामः श्रवणेच्छा मुहुर्मुहुः १०
इदानीमेकमेवास्ति श्रोतव्यं सूत सन्मते
तद्रहस्यमपि ब्रूहि यदि तेऽनुग्रहो भवेत् ११
प्राप्ते कलियुगे घोरे नराः पुण्यविवर्जिताः
दुराचाररताः सर्वे सत्यवार्तापराङ्मुखाः १२
परापवादनिरताः परद्रव्याभिलाषिणः
परस्त्रीसक्तमनसः परहिंसापरायणाः १३
देहात्मदृष्टया मूढा नास्तिकाः पशुबुद्धयः
मातृपितृकृतद्वेषाः स्त्रीदेवाः कामकिंकराः १४
विप्रा लोभग्रहग्रस्ता वेदविक्रयजीविनः
धनार्जनार्थमभ्यस्तविद्या मदविमोहिताः १५
त्यक्तस्वजातिकर्माणः प्रायशःपरवंचकाः
त्रिकालसंध्यया हीना ब्रह्मबोधविवर्जिताः १६
अदयाः पंडितं मन्यास्स्वाचारव्रतलोपकाः
कृष्युद्यमरताः क्रूरस्वभावा मलिनाशयाः १७
क्षत्रियाश्च तथा सर्वे स्वधर्मत्यागशीलिनः
असत्संगाः पापरता व्यभिचारपरायणाः १८
अशूरा अरणप्रीताः पलायनपरायणाः
कुचौरवृत्तयः शूद्राः कामकिंकरचेतसः १९

शस्त्रास्त्रविद्यया हीना धेनुविप्रावनोज्झिताः
शरण्यावनहीनाश्च कामिन्यूतिमृगास्सदा २०
प्रजापालनसद्धर्मविहीना भोगतत्पराः
प्रजासंहारका दुष्टा जीवहिंसाकरा मुदा २१
वैश्याः संस्कारहीनास्ते स्वधर्मत्यागशीलिनः
कुपथाः स्वार्जनरतास्तुलाकर्मकुवृत्तयः २२
गुरुदेवद्विजातीनां भक्तिहीनाः कुबुद्धयः
अभोजितद्विजाः प्रायः कृपणा बद्धमुष्टयः २३
कामिनीजारभावेषु सुरता मलिनाशयाः
लोभमोहविचेतस्काः पूर्तादिसुवृषोज्झिताः २४
तद्वच्छूद्राश्च ये केचिद्ब्राह्मणाचारतत्पराः
उज्ज्वलाकृतयो मूढाः स्वधर्मत्यागशीलिनः २५
कर्तारस्तपसां भूयो द्विजतेजोपहारकाः
शिश्वल्पमृत्युकाराश्च मंत्रोच्चारपरायणाः २६
शालिग्रामशिलादीनां पूजकाहोमतत्पराः
प्रतिकूलविचाराश्च कुटिला द्विजदूषकाः २७
धनवंतः कुकर्म्माणो विद्यावन्तो विवादिनः
आख्यायोपासना धर्मवक्तारो धर्मलोपकाः २८
सुभूपाकृतयो दंभाः सुदातारो महामदाः
विप्रादीन्सेवकान्मत्वा मन्यमाना निजं प्रभुम् २९
स्वधर्मरहिता मूढाः संकराः क्रूरबुद्धयः
महाभिमानिनो नित्यं चतुर्वर्णविलोपकाः ३०
सुकुलीनान्निजान्मत्वा चतुर्वर्णैर्विवर्तनाः
सर्ववर्णभ्रष्टकरा मूढास्सत्कर्मकारिणः ३१
स्त्रियश्च प्रायशो भ्रष्टा भर्त्रवज्ञानकारिकाः

श्वशुरद्रोहकारिणयो निर्भया मलिनाशनाः ३२
कुहावभावनिरताः कुशीलास्स्मरविह्वलाः
जारसंगरता नित्यं स्वस्वामिविमुखास्तथा ३३
तनया मातृपित्रोश्च भक्तिहीना दुराशयाः
अविद्यापाठका नित्यं रोगग्रसितदेहकाः ३४
एतेषां नष्टबुद्धीनां स्वधर्मत्यागशीलिनाम्
परलोकेपीह लोके कथं सूत गतिर्भवेत् ३५
इति चिंताकुलं चित्तं जायते सततं हि नः
परोपकारसदृशो नास्ति धर्मो परः खलु ३६
लघूपायेन येनैषां भवेत्सद्योघनाशनम्
सर्व्वसिद्धान्तवित्त्वं हि कृपया तद्वदाधुना ३७
व्यास उवाच
इत्याकर्ण्य वचस्तेषां मुनीनां भावितात्मनाम्
मनसा शंकरं स्मृत्वा सूतः प्रोवाच तान्मुनीन् ३८

इति श्रीशैवेमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां मुनिप्रश्नवर्णनो नाम
प्रथमोऽध्यायः १

अध्याय २

सूत उवाच
साधुपृष्टं साधवो वस्त्रैलोक्यहितकारकम्
गुरुं स्मृत्वा भवत्स्नेहाद्वक्ष्ये तच्छृणुतादरात् १
वेदांतसारसर्वस्वं पुराणं शैवमुत्तमम्
सर्वाघौघोद्धारकरं परत्र परमार्थदम् २
कलिकल्मषविध्वंसि यस्मिञ्छिवयशः परम्
विजृम्भते सदा विप्राश्चतुर्वर्गफलप्रदम् ३

तस्याध्ययनमात्रेण पुराणस्य द्विजोत्तमाः
सर्वोत्तमस्य शैवस्य ते यास्यंति सुसद्गतिम् ४
तावद्विजृंभते पापं ब्रह्महत्यापुरस्सरम्
यावच्छिवपुराणं हि नोदेष्यति जगत्यहो ५
तावत्कलिमहोत्पाताः संचरिष्यंति निर्भयाः
यावच्छिवपुराणं हि नोदेष्यति जगत्यहो ६
तावत्सर्वाणि शास्त्राणि विवदंति परस्परम्
यावच्छिवपुराणं हि नोदेष्यति जगत्यहो ७
तावत्स्वरूपं दुर्बोधं शिवस्य महतामपि
यावच्छिवपुराणं हि नो देष्यति जगत्यहो ८
तावद्यमभटाः क्रूराः संचरिष्यंति निर्भयाः
यावच्छिवपुराणं हि नोदेष्यति जगत्यहो ९
तावत्सर्वपुराणानि प्रगर्जंति महीतले
यावच्छिवपुराणं हि नोदेष्यति जगत्यहो १०
तावत्सर्वाणि तीर्थानि विवदंति महीतले
यावच्छिवपुराणं हि नोदेष्यति जगत्यहो ११
तावत्सर्वाणि मंत्राणि विवदंति महीतले
यावच्छिवपुराणं हि नोदेष्यति महीतले १२
तावत्सर्वाणि क्षेत्राणि विवदंति महीतले
यावच्छिवपुराणं हि नोदेष्यति महीतले १३
तावत्सर्वाणि पीठानि विवदंति महीतले
यावच्छिवपुराणं हि नोदेष्यति महीतले १४
तावत्सर्वाणि दानानि विवदंति महीतले
यावच्छिवपुराणं हि नोदेष्यति महीतले १५
तावत्सर्वे च ते देवा विवदंति महीतले

यावच्छिवपुराणं हि नोदेष्यति महीतले १६
तावत्सर्वे च सिद्धान्ता विवदंति महीतले
यावच्छिवपुराणं हि नोदेष्यति महीतले १७
अस्य शैवपुराणस्य कीर्तनश्रवणाद्द्विजाः
फलं वक्तुं न शक्नोमि कात्स्न्र्येन मुनिसत्तमाः १८
तथापि तस्य माहात्म्यं वक्ष्ये किंचित्तु वोनघाः
चित्तमाधाय शृणुत व्यासेनोक्तं पुरा मम १९
एतच्छिवपुराणं हि श्लोकं श्लोकार्द्धमेव च
यः पठेद्भक्तिसंयुक्तस्स पापान्मुच्यते क्षणात् २०
एतच्छिवपुराणं हि यः प्रत्यहमतंद्रितः
यथाशक्ति पठेद्भक्त्या स जीवन्मुक्त उच्यते २१
एतच्छिवपुराणं हि यो भक्त्यार्चयते सदा
दिने दिनेऽश्वमेधस्य फलं प्राप्नोत्यसंशयम् २२
एतच्छिवपुराणं यस्साधारणपदेच्छया
अन्यतः शृणुयात्सोऽपि मत्तो मुच्येत पातकात् २३
एतच्छिवपुराणं यो नमस्कुर्यादूरतः
सर्वदेवार्चनफलं स प्राप्नोति न संशयः २४
एतच्छिवपुराणं वै लिखित्वा पुस्तकं स्वयम्
यो दद्याच्छिवभक्तेभ्यस्तस्य पुण्यफलं शृणु २५
अधीतेषु च शास्त्रेषु वेदेषु व्याकृतेषु च
यत्फलं दुर्लभं लोके तत्फलं तस्य संभवेत् २६
एतच्छिवपुराणं हि चतुर्दश्यामुपोषितः
शिवभक्तसभायां यो व्याकरोति स उत्तमः २७
प्रत्यक्षरं तु गायत्रीपुरश्चर्य्याफलं लभेत्
इह भुक्त्वाखिलान्कामानं ते निर्वाणतां व्रजेत् २८

उपोषितश्चतुर्दश्यां रात्रौ जागरणान्वितः
यः पठेच्छृणुयाद्वापि तस्य पुण्यं वदाम्यहम् २९
कुरुक्षेत्रादिनिखिलपुण्यतीर्थेष्वनेकशः
आत्मतुल्यधनं सूर्य्यग्रहणे सर्वतोमुखे ३०
विप्रेभ्यो व्यासमुख्येभ्यो दत्त्वायत्फलमश्नुते
तत्फलं संभवेत्तस्य सत्यं सत्यं न संशयः ३१
एतच्छिवपुराणं हि गायते योप्यहर्निशम्
आज्ञां तस्य प्रतीक्षेरन्देवा इन्द्रपुरो गमाः ३२
एतच्छिवपुराणं यः पठञ्छृणवन्हि नित्यशः
यद्यत्करोति सत्कर्म तत्कोटिगुणितं भवेत् ३३
समाहितः पठेद्यस्तु तत्र श्रीरुद्रसंहिताम्
स ब्रह्मघ्नोऽपि पूतात्मा त्रिभिरेवादिनैर्भवेत् ३४
तां रुद्रसंहितां यस्तु भैरवप्रतिमांतिके
त्रिः पठेत्प्रत्यहं मौनी स कामानखिलाँल्लभेत् ३५
तां रुद्रसंहितां यस्तु सपठेद्वटबिल्वयोः
प्रदक्षिणां प्रकुर्वाणो ब्रह्महत्या निवर्तते ३६
कैलाससंहिता तत्र ततोऽपि परमस्मृता
ब्रह्मस्वरूपिणी साक्षात्प्रणवार्थप्रकाशिका ३७
कैलाससंहितायास्तु माहात्म्यं वेत्ति शंकरः
कृत्स्नं तदर्द्धं व्यासश्च तदर्द्धं वेद्म्यहं द्विजाः ३८
तत्र किंचित्प्रवक्ष्यामि कृत्स्नं वक्तुं न शक्यते
यज्ज्ञात्वा तत्क्षणाल्लोकश्चित्तशुद्धिमवाप्नुयात् ३९
न नाशयति यत्पापं सा रौद्री संहिता द्विजाः
तन्न पश्याम्यहं लोके मार्गमाणोऽपि सर्वदा ४०
शिवेनोपनिषत्सिंधुमन्थनोत्पादितां मुदा

कुमारायार्पितां तां वै सुधां पीत्वाऽमरो भवेत् ४१
ब्रह्महत्यादिपापानां निष्कृतिं कर्तुमुद्यतः
मासमात्रं संहितां तां पठित्वा मुच्यते ततः ४२
दुष्प्रतिग्रहदुर्भोज्यदुरालापादिसंभवम्
पापं सकृत्कीर्तनेन संहिता सा विनाशयेत् ४३
शिवालये बिल्ववने संहितां तां पठेत्तु यः
स तत्फलमवाप्नोति यद्वाचोऽपि न गोचरे ४४
संहितां तां पठन्भक्त्या यः श्राद्धे भोजयेद्द्विजान्
तस्य ये पितरः सर्वे यांति शंभोः परं पदम् ४५
चतुर्दश्यां निराहारो यः पठेत्संहितां च ताम्
बिल्वमूले शिवः साक्षात्स देवैश्च प्रपूज्यते ४६
अन्यापि संहिता तत्र सर्वकामफलप्रदा
उभे विशिष्टे विज्ञेये लीलाविज्ञानपूरिते ४७
तदिदं शैवमाख्यातं पुराणं वेदसंमितम्
निर्मितं तच्छिवेनैव प्रथमं ब्रह्मसंमितम् ४८
विद्येशंच तथारौद्रं वैनायकमथौमिकम्
मात्रं रुद्रैकादशकं कैलासं शतरुद्रकम् ४९
कोटिरुद्रसहस्राद्यं कोटिरुद्रं तथैव च
वायवीयं धर्मसंज्ञं पुराणमिति भेदतः ५०
संहिता द्वादशमिता महापुण्यतरा मता
तासां संख्यां ब्रुवे विप्राः शृणुतादरतोखिलम् ५१
विद्येशं दशसाहस्रं रुद्रं वैनायकं तथा
औमं मातृपुराणाख्यं प्रत्येकाष्टसहस्रकम् ५२
त्रयोदशसहस्रं हि रुद्रैकादशकं द्विजाः
षट्सहस्रं च कैलासं शतरुद्रं तदर्द्धकम् ५३

कोटिरुद्रं त्रिगुणितमेकादशसहस्रकम्
सहस्रकोटिरुद्राख्यमुदितं ग्रंथसंख्यया ५४
वायवीयं खाब्धिशतं घर्मं रविसहस्रकम्
तदेवं लक्षसंख्याकं शैवसंख्याविभेदतः ५५
व्यासेन तत्तु संक्षिप्तं चतुर्विंशत्सहस्रकम्
शैवं तत्र चतुर्थं वै पुराणं सप्तसंहितम् ५६
शिवे संकल्पितं पूर्वं पुराणं ग्रन्थसंख्यया
शतकोटिप्रमाणं हि पुरा सृष्टौ सुविस्मृतम् ५७
व्यस्तेष्टादशधा चैव पुराणे द्वापरादिषु
चतुर्लक्षेण संक्षिप्ते कृते द्वैपायनादिभिः ५८
प्रोक्तं शिवपुराणं हि चतुर्विंशत्सहस्रकम्
श्लोकानां संख्यया सप्तसंहितं ब्रह्मसंमितम् ५९
विद्येश्वराख्या तत्राद्या रौद्री ज्ञेया द्वितीयिका
तृतीया शतरुद्राख्या कोटिरुद्रा चतुर्थिका ६०
पंचमी चैव मौमाख्या षष्ठी कैलाससंज्ञिका
सप्तमी वायवीयाख्या सप्तैवं संहितामताः ६१
ससप्तसंहितं दिव्यं पुराणं शिवसंज्ञकम्
वरीवर्ति ब्रह्मतुल्यं सर्वोपरि गतिप्रदम् ६२
एतच्छिवपुराणं हि सप्तसंहितमादरात्
परिपूर्णं पठेद्यस्तु स जीवन्मुक्त उच्यते ६३
श्रुतिस्मृतिपुराणेतिहासागमशतानि च
एतच्छिवपुराणस्य नार्हंत्यल्पां कलामपि ६४
शैवं पुराणममलं शिवकीर्तितं तद्व्यासेन शैवप्रवरेण न
संगृहीतम्
संक्षेपतः सकलजीवगुणोपकारे तापत्रयघ्नमतुलं शिवदं सतां

हि ६५
विकैतवो धर्म इह प्रगीतो वेदांतविज्ञानमयः प्रधानः
अमत्सरांतर्बुधवेद्यवस्तु सत्क्लृप्तमत्रैव त्रिवर्गयुक्तम् ६६
शैवं पुराणतिलकं खलु सत्पुराणं
वेदांतवेदविलसत्परवस्तुगीतम्
यो वै पठेच्च शृणुयात्परमादरेण शंभुप्रियः स हि लभेत्परमां
गतिं वै ६७

इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां द्वितीयोऽध्यायः २

अध्याय ३

व्यास उवाच
इत्याकर्ण्य वचः सौतं प्रोचुस्ते परमर्षयः
वेदांतसारसर्वस्वं पुराणं श्रावयाद्भुतम् १
इति श्रुत्वा मुनीनां स वचनं सुप्रहर्षितः
संस्मरञ्छंकरं सूतः प्रोवाच मुनिसत्तमान् २
सूत उवाच
शृणवंतु ऋषयः सर्वे स्मृत्वा शिवमनामयम्
पुराणप्रवरं शैवं पुराणं वेदसारजम् ३
यत्र गीतं त्रिकं प्रीत्या भक्तिज्ञानविरागकम् ४
वेदांतवेद्यं सद्वस्तु विशेषेण प्रवर्णितम् ५
सूत उवाच
शृणवंतु ऋषयः सर्वे पुराणं वेदसारजम्
पुरा कालेन महता कल्पेऽतीते पुनःपुनः ६
अस्मिन्नुपस्थिते कल्पे प्रवृत्ते सृष्टिकर्मणि
मुनीनां षट्कुलीनानां ब्रुवतामितरेतरम् ७

इदं परमिदं नेति विवादः सुमहानभूत्
तेऽभिजग्मुर्विधातारं ब्रह्माणं प्रष्टुमव्ययम् ८
वाग्भिर्विनयगर्भाभिः सर्वे प्रांजलयोऽब्रुवन्
त्वं हि सर्वजगद्धाता सर्वकारणकारणम् ९
कः पुमान्सर्वतत्त्वेभ्यः पुराणः परतः परः
ब्रह्मोवाच
यतो वाचो निवर्तंते अप्राप्य मनसा सह १०
यस्मात्सर्वमिदं ब्रह्मविष्णुरुद्रेंद्रपूर्वकम्
सहभूतेंद्रियैः सर्वैः प्रथमं संप्रसूयते ११
एष देवो महादेवः सर्वज्ञो जगदीश्वरः
अयं तु परया भक्त्या दृश्यते नाऽन्यथा क्वचित् १२
रुद्रो हरिर्हरश्चैव तथान्ये च सुरेश्वराः
भक्त्या परमया तस्य नित्यं दर्शनकांक्षिणः १३
बहुनात्र किमुक्तेन शिवे भक्त्या विमुच्यते
प्रसादाद्देवताभक्तिः प्रसादो भक्तिसंभवः
यथेहांकुरतो बीजं बीजतो वा यथांकुरः १४
तस्मादीशप्रसादार्थं यूयं गत्वा भुवं द्विजाः
दीर्घसत्रं समाकृध्वं यूयं वर्षसहस्रकम् १५
अमुष्यैवाध्वरेशस्य शिवस्यैव प्रसादतः
वेदोक्तविद्यासारं तु ज्ञायते साध्यसाधनं १६
मुनय ऊचुः
अथ किं परमं साध्यं किंवा तत्साधनं परम्
साधकः कीदृशस्तत्र तदिदं ब्रूहि तत्त्वतः १७
ब्रह्मोवाच
साध्यं शिवपदप्राप्तिः साधनं तस्य सेवनम्

साधकस्तत्प्रसादाद्योऽनित्यादिफलनिःस्पृहः १८
कर्म कृत्वा तु वेदोक्तं तदर्पितमहाफलम्
परमेशपदप्राप्तः सालोक्यादिक्रमात्ततः १९
तत्तद्भक्त्यनुसारेण सर्वेषां परमं फलम्
तत्साधनं बहुविधं साद्यादीशेन बोधितम् २०
संक्षिप्य तत्र वः सारं साधनं प्रब्रवीम्यहम्
श्रोत्रेण श्रवणं तस्य वचसा कीर्तनं तथा २१
मनसा मननं तस्य महासाधनमुच्यते
श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च मन्तव्यश्च महेश्वरः २२
इति श्रुतिप्रमाणं नः साधनेनाऽमुना परम्
साध्यं व्रजत सर्वार्थसाधनैकपरायणाः २३
प्रत्यक्षं चक्षुषा दृष्ट्वा तत्र लोकः प्रवर्तते
अप्रत्यक्षं हि सर्वत्र ज्ञात्वा श्रोत्रेण चेष्टते २४
तस्माच्छ्रवणमेवादौ श्रुत्वा गुरुमुखाद्बुधः
ततः संसाधयेदन्यत्कीर्तनं मननं सुधीः २५
क्रमान्मननपर्यंते साधनेऽस्मिन्सुसाधिते
शिवयोगो भवेत्तेन सालोक्यादिक्रमाच्छनैः २६
सर्वांगव्याधयः पश्चात्सर्वानंदश्च लीयते
अभ्यासात्क्लेशमेतद्वै पश्चादाद्यंतमंगलम् २७

इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां साध्यसाधनखण्डे
तृतीयोऽध्यायः ३

अध्याय ४

मुनय ऊचुः
मननं कीदृशं ब्रह्मञ्छ्रवणं चापि कीदृशम्

कीर्तनं वा कथं तस्य कीर्तयैतद्यथायथम् १
ब्रह्मोवच
पूजाजपेशगुणरूपविलासनाम्नां युक्तिप्रियेण मनसा परिशोधनं यत्
तत्संततं मननमीश्वरदृष्टिलभ्यं सर्वेषु साधनवरेष्वपि मुख्यमुख्यम्
२
गीतात्मना श्रुतिपदेन च भाषया वा शंभुप्रतापगुणरूपविलासनाम्नाम्
वाचा स्फुटं तु रसवत्स्तवनं यदस्य तत्कीर्तनं भवति साधनमत्र
मध्यम् ३
येनापि केन करणेन च शब्दपुंजं यत्र क्वचिच्छिवपरं श्रवणेंद्रियेण
स्त्रीकेलिवद्दृढतरं प्रणिधीयते यत्तद्वै बुधाः श्रवणमत्र जगत्प्रसिद्धम्
४
सत्संगमेन भवति श्रवणं पुरस्तात्संकीर्तनं पशुपतेरथ तद्दृढं स्यात्
सर्वोत्तमं भवति तन्मननं तदंते सर्वं हि संभवति शंकरदृष्टिपाते ५
सूत उवाच
अस्मिन्साधनमाहत्म्ये पुरा वृत्तं मुनीश्वराः
युष्मदर्थं प्रवक्ष्यामि शृणुध्वमवधानतः ६
पुरा मम गुरुर्व्यासः पराशरमुनेः सुतः
तपश्चचार संभ्रांतः सरस्वत्यास्तटे शुभे ७
गच्छन्यदृछया तत्र विमानेनार्करोचिषा
सनत्कुमारो भगवान्ददर्श मम देशिकम् ८
ध्यानारूढः प्रबुद्धोऽसौ ददर्श तमजात्मजम्
प्रणिपत्याह संभ्रांतः परं कौतूहलं मुनिः ९
दत्त्वार्घ्यमस्मै प्रददौ देवयोग्यं च विष्टिरम् १०ब्
प्रसन्नः प्राह तं प्रह्वं प्रभुर्गंभीरया गिरा १०
सनत्कुमार उवाच

सत्यं वस्तु मुने दध्याः साद्धात्करणगोचरः
स शिवोथासहायोत्र तपश्चरसि किं कृते ११
एवमुक्तः कुमारेण प्रोवाच स्वाशयं मुनिः
धर्मार्थकाममोद्धाश्च वेदमार्गे कृतादराः १२
बहुधा स्थापिता लोके मया त्वत्कृपया तथा
एवं भुतस्य मेप्येवं गुरुभूतस्य सर्वतः १३
मुक्तिसाधनकं ज्ञानं नोदेति परमाद्भुतम्
तपश्चरामि मुक्त्यर्थं न जाने तत्र कारणम् १४
इत्थं कुमारो भगवान्व्यासेन मुनिनार्थितः
समर्थः प्राह विप्रेंद्रा निश्चयं मुक्तिकारणम् १५
श्रवणं कीर्तनं शंभोर्मननं च महत्तरम्
त्रयं साधनमुक्तं च विद्यते वेदसंमतम् १६
पुराहमथ संभ्रांतो ह्यन्यसाधनसंभ्रमः
अचले मंदरे शैले तपश्चरणमाचरम् १७
शिवाज्ञया ततः प्राप्तो भगवान्नंदिकेश्वरः
स मे दयालुर्भगवान्सर्वसाद्धी गणेश्वरः १८
उवाच मह्यं सस्नेहं मुक्तिसाधनमुत्तमम्
श्रवणं कीर्तनं शंभोर्मननं वेदसंमतम् १९
त्रिकं च साधनं मुक्तौ शिवेन मम भाषितम्
श्रवणादिं त्रिकं ब्रह्मन्कुरुष्वेति मुहुर्मुहुः २०
एवमुक्त्वा ततो व्यासं सानुगो विधिनंदनः
जगाम स्वविमानेन पदं परमशोभनम् २१
एवमुक्तं समासेन पूर्ववृत्तांतमुत्तमम्
ऋषय ऊचुः
श्रवणादित्रयं सूत मुक्त्योपायस्त्वयेरितः २२

श्रवणादित्रिकेऽशक्तः किं कृत्वा मुच्यते जनः
अयत्नेनैव मुक्तिः स्यात्कर्मणा केन हेतुना २३

इति श्रीशिवमहापुराणे प्रथमायां विद्येश्वरसंहितायं
साध्यसाधनखण्डे चतुर्थोऽध्यायः ४

अध्याय ५

सूत उवाच
श्रवणादित्रिकेऽशक्तो लिंगं बेरं च शांकरम्
संस्थाप्य नित्यमभ्यर्च्य तरेत्संसारसागरम् १
अपि द्रव्यं वहेदेव यथाबलमवंचयन्
अर्पयेल्लिंगबेरार्थमर्चयेदपि संततम् २
मंडपं गोपुरं तीर्थं मठं क्षेत्रं तथोत्सवम्
वस्त्रं गंधं च माल्यं च धूपं दीपं च भक्तितः ३
विविधान्नं च नैवेद्यमपूपव्यंजनैर्युतम्
छत्रं ध्वजं च व्यजनं चामरं चापि सांगकम् ४
राजोपचारवत्सर्वं धारयेल्लिंगबेरयोः
प्रदक्षिणां नमस्कारं यथाशक्ति जपं तथा ५
आवाहनादिसर्गांतं नित्यं कुर्यात्सुभक्तितः
इत्थमभ्यर्च्य यन्देवं लिंगेबेरे च शांकरे ६
सिद्धिमेति शिवप्रीत्या हित्वापि श्रवणादिकम्
लिंगबेरार्चनामात्रान्मुक्ताः पुर्वे महाजनाः ७
मनुय ऊचुः
बेरमात्रे तु सर्वत्र पूज्यंते देवतागणाः
लिंगेबेरे च सर्वत्र कथं संपूज्यते शिवः ८
सूत उवाच

अहो मुनीश्वराः पुरयं प्रश्नमेतन्महाद्भुतम्
अत्र वक्ता महादेवो नान्योऽस्ति पुरुषः क्वचित् ९
शिवेनोक्तं प्रवक्ष्यामि क्रमाद्गुरुमुखाच्छ्रुतम्
शिवैको ब्रह्मरूपत्वान्निष्कलः परिकीर्तितः १०
रूपित्वात्सकलस्तद्वत्तस्मात्सकलनिष्कलः
निष्कलत्वान्निराकारं लिंगं तस्य समागतम् ११
सकलत्वात्तथा बेरं साकारं तस्य संगतम्
सकलाकलरूपत्वाद्ब्रह्मशब्दाभिधः परः १२
अपि लिंगे च बेरे च नित्यमभ्यर्च्यते जनैः
अब्रह्मत्वात्तदन्येषां निष्कलत्वं न हि क्वचित् १३
तस्मात्ते निष्कले लिंगे नाराध्यंते सुरेश्वराः
अब्रह्मत्वाच्च जीवत्वात्तथान्ये देवतागणाः १४
तूष्णीं सकलमात्रत्वादर्च्यंते बेरमात्रके
जीवत्वं शंकरान्येषां ब्रह्मत्वं शंकरस्य च १५
वेदांतसारसंसिद्धं प्रणवार्थे प्रकाशनात्
एवमेव पुरा पृष्टो मंदरे नंदिकेश्वरः १६
सनत्कुमारमुनिना ब्रह्मपुत्रेण धीमता १७ब्
सनत्कुमार उवाच
शिवान्यदेववश्यानां सर्वेषामपि सर्वतः १७
बेरमात्रं च पूजार्थं श्रुतं दृष्टं च भूरिशः
शिवमात्रस्य पूजायां लिंगं बेरं च दृश्यते १८
अतस्तद्ब्रूहि कल्याण तत्त्वं मे साधुबोधनम्
नंदिकेश्वर उवाच
अनुत्तरमिमं प्रश्नं रहस्यं ब्रह्मलक्षणम् १९
कथयामि शिवेनोक्तं भक्तियुक्तस्य तेऽनघ

शिवस्य ब्रह्मरूपत्वान्निष्कलत्वाच्च निष्कलम् २०
लिंगं तस्यैव पूजायां सर्ववेदेषु संमतम्
तस्यैव सकलत्वाच्च तथा सकलनिष्कलम् २१
सकलं च तथा बेरं पूजायां लोकसंमतम्
शिवान्येषां च जीवत्वात्सकलत्वाच्च सर्वतः २२
बेरमात्रं च पूजायां संमतं वेदनिर्णये
स्वाविर्भावे च देवानां सकलं रूपमेव हि २३
शिवस्य लिंगं बेरं च दर्शने दृश्यते खलु
सनत्कुमार उवाच
उक्तं त्वया महाभाग लिंगबेरप्रचारणम् २४
शिवस्य च तदन्येषां विभज्य परमार्थतः
तस्मात्तदेव परमं लिंगबेरादिसंभवम् २५
श्रोतुमिच्छामि योगींद्र लिंगाविर्भावलक्षणम्
नंदिकेश्वर उवाच
शृणु वत्स भवत्प्रीत्या वक्ष्यामि परमार्थतः २६
पुरा कल्पे महाकाले प्रपन्ने लोकविश्रुते
म्रायुध्येतां महात्मानौ ब्रह्मविष्णू परस्परम् २७
तयोर्मानं निराकर्तुं तन्मध्ये परमेश्वरः
निष्कलस्तंभरूपेण स्वरूपं समदर्शयत् २८
ततः स्वलिंगचिह्नत्वात्स्तंभतो निष्कलं शिवः
स्वलिंगं दर्शयामास जगतां हितकाम्यया २९
तदाप्रभृति लोकेषु निष्कलं लिंगमैश्वरम्
सकलं च तथा बेरं शिवस्यैव प्रकल्पितम् ३०
शिवान्येषः तु देवानां बेरमात्रं प्रकल्पितम्
तत्तद्बेरं तु देवानां तत्तद्भोगप्रदं शुभम्

शिवस्य लिंगबेरत्वं भोगमोक्षप्रदं शुभम् ३१

इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां पंचमोऽध्यायः ५

अध्याय ६

नंदिकेश्वर उवाच
पुरा कदाचिद्योगींद्र विष्णुर्विषधरासनः
सुष्वाप परया भूत्या स्वानुगैरपि संवृतः १
यदृच्छया गतस्तत्र ब्रह्मा ब्रह्मविदांवरः
अपृच्छत्पुंडरीकाक्षं शयनं सर्वसुन्दरम् २
कस्त्वं पुरुषवच्छेषे दृष्ट्वा मामपि दृप्तवत्
उत्तिष्ठ वत्स मां पश्य तव नाथमिहागतम् ३
आगतं गुरुमाराध्यं दृष्ट्वा यो दृप्तवच्चरेत्
द्रोहिणस्तस्य मूढस्य प्रायश्चित्तं विधीयते ४
इति श्रुत्वा वचः क्रुद्धो बहिः शांतवदाचरत्
स्वस्ति ते स्वागतं वत्स तिष्ठ पीठमितो विश ५
किमु ते व्याग्रवद्वक्त्रं विभाति विषमेक्षणम्
ब्रह्मोवाच
वत्स विष्णो महामानमागतं कालवेगतः ६
पितामहश्च जगतः पाता च तव वत्सक
विष्णुरुवाच
मत्स्थं जगदिदं वत्स मनुषे त्वं हि चोरवत् ७
मन्नाभिकमलाज्जातः पुत्रस्त्वं भाषसे वृथा
नंदिकेश्वर उवाच
एवं हि वदतोस्तत्र मुग्धयोरजयोस्तदा ८
अहमेव बरो न त्वमहं प्रभुरहं प्रभुः

परस्परं हंतुकामौ चक्रतुः समरोद्यमम् ९
युयुधातेऽमरौ वीरौ हंसपक्षींद्रवाहनौ
वैरंच्या वैष्णवाश्चैवं मिथो युयुधिरे तदा १०
तावद्विमानगतयः सर्वा वै देवजातयः
दिदृक्षवः समाजग्मुः समरं तं महाद्भुतम् ११
क्षिपंतः पुष्पवर्षाणि पश्यंतः स्वैरमंबरे
सुपर्णवाहनस्तत्र क्रुद्धो वै ब्रह्मवक्षसि १२
मुमोच बाणानसहानस्त्रांश्च विविधान्बहून्
मुमोचाऽथ विधिः क्रुद्धो विष्णोरुरसि दुःसहान् १३
बाणाननलसंकाशानस्त्रांश्च बहुशस्तदा
तदाश्चर्यमिति स्पष्टं तयोः समरगोचरम् १४
समीक्ष्य दैवतगणाः शशंसुर्भृशमाकुलाः
ततो विष्णुः सुसंक्रुद्धः श्वसन्व्यसनकर्शितः १५
माहेश्वरास्त्रं मतिमान् संदधे ब्रह्मणोपरि
ततो ब्रह्मा भृशं क्रुद्धः कंपयन्विश्वमेव हि १६
अस्त्रं पाशुपतं घोरं संदधे विष्णुवक्षसि
ततस्तदुत्थितं व्योम्नि तपनायुतसन्निभम् १७
सहस्रमुखमत्युग्रं चंडवातभयंकरम्
अस्त्रद्वयमिदं तत्र ब्रह्मविष्णवोर्भयंकरम् १८
इत्थं बभूव समरो ब्रह्मविष्णवोः परस्परम्
ततो देवगणाः सर्वे विषण्णा भृशमाकुलाः
ऊचुः परस्परं तात राजन्क्षोभे यथा द्विजाः १९
सृष्टिः स्थितिश्च संहारस्तिरो भावोप्यनुग्रहः
यस्मात्प्रवर्तते तस्मै ब्रह्मणे च त्रिशूलिने २०
अशक्यमन्यैर्यदनुग्रहं विना तृणक्षयोप्यत्र यदृच्छया क्वचित्

इति देवाभयं कृत्वा विचिन्वंतः शिवाश्रयम्
जग्मुः कैलासशिखरं यत्रास्ते चंद्रशेखरः २२
दृष्ट्वैवममरा हृष्टाः पदंतत्पारमेश्वरम्
प्रणेमुः प्रणवाकारं प्रविष्टास्तत्र सद्मनि २३
तेपि तत्र सभामध्ये मंडपे मणिविष्टरे
विराजमानमुमया ददृशुर्देवपुंगवम् २४
सव्योत्तरेतरपदं तदर्हितकरां बुजम्
स्वगणैः सर्वतो जुष्टं सर्वलक्षणलक्षितम् २५
वीज्यमानं विशेषजैः स्त्रीजनैस्तीव्रभावनैः
शस्यमानं सदावेदैरनुगृह्णंतमीश्वरम् २६
दृष्ट्वैवमीशममराः संतोषसलिलेक्षणाः
दंडवद्भूरतो वत्स नमश्चक्रुर्महागणाः २७
तानवेक्ष्य पतिर्देवान्समीपे चाह्वयद्गणैः
अथ संह्लादयन्देवान्देवो देवशिखामणिः
अवोचदर्थगंभीरं वचनं मधुमंगलम् २८

इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां षष्ठोऽध्यायः ६

अध्याय ७

ईश्वर उवाच
वत्सकाः स्वस्तिवः कच्चिद्वर्तते मम शासनात्
जगच्च देवतावंशः स्वस्वकर्मणि किं नवा १
प्रागेव विदितं युद्धं ब्रह्मविष्णवोर्मयासुराः
भवतामभितापेन पौनरुक्त्येन भाषितम् २
इति सस्मितया माध्व्या कुमारपरिभाषया
समतोषयदंबायाः स पतिस्तत्सुरव्रजम् ३

अथ युद्धांगणं गंतुं हरिधात्रोरधीश्वरः
आज्ञापयद्गणेशानां शतं तत्रैव संसदि ४
ततो वाद्यं बहुविधं प्रयाणाय परेशितुः
गणेश्वराश्च संनद्धा नानावाहनभूषणाः ५
प्रणवाकारमाद्यंतं पंचमंडलमंडितम्
आरुरोह रथं भद्रमंबिकापतिरीश्वरः
ससूनुगणमिंद्राद्याः सर्वेप्यनुययुः सुराः ६
चित्रध्वजव्यजनचामरपुष्पवर्षसंगतिनृत्यनिवहैरपि वाद्यवर्गैः
संमानितः पशुपतिः परया च देव्या साकं तयोः
समरभूमिमगात्ससैन्यः ७
समीक्ष्यं तु तयोर्युद्धं निगूढोऽभ्रं समास्थितः
समाप्तवाद्यनिर्घोषः शांतोरुगणनिःस्वनः ८
अथ ब्रह्माच्युतौ वीरौ हंतुकामौ परस्परम्
माहेश्वरेण चाऽस्त्रेण तथा पाशुपतेन च ९
अस्त्रज्वालैरथो दग्धं ब्रह्मविष्णवोर्जगत्त्रयम्
ईशोपि तं निरीक्ष्याथ ह्यकालप्रलयं भृशम् १०
महानलस्तंभविभीषणाकृतिर्बभूव तन्मध्यतले स निष्कलः
ते अस्त्रे चापि सज्वाले लोकसंहरणक्षमे
निपतेतुः क्षणे नैव ह्याविर्भूते महानले १२
दृष्ट्वा तदद्भुतं चित्रमस्त्रशांतिकरं शुभम्
किमेतदद्भुताकारमित्यूचुश्च परस्परम् १३
अतींद्रियमिदं स्तंभमग्निरूपं किमुत्थितम्
अस्योर्ध्वमपि चाधश्च आवयोर्लक्ष्यमेव हि १४
इति व्यवसितौ वीरौ मिलितौ वीरमानिनौ
तत्परौ तत्परीक्षार्थं प्रतस्थातेऽथ सत्वरम् १५

आवयोर्मिश्रयोस्तत्र कार्यमेकं न संभवेत्
इत्युक्त्वा सूकरतनुर्विष्णुस्तस्यादिमीयिवान् १६
तथा ब्रह्माहं सतनुस्तदंतं वीक्षितुं ययौ
भित्त्वा पातालनिलयं गत्वा दूरतरं हरिः १७
नाऽप्श्यात्तस्य संस्थानं स्तंभस्यानलवर्चसः
श्रांतः स सूकरहरिः प्राप पूर्वं रणांगणम् १८
अथ गच्छंस्तु व्योम्ना च विधिस्तात पिता तव
ददर्श केतकी पुष्पं किंचिद्विच्युतमद्भुतम् १९
अतिसौरभ्यमम्लानं बहुवर्षच्युतं तथा
अन्वीक्ष्य च तयोः कृत्यं भगवान्परमेश्वरः २०
परिहासं तु कृतवान्कंपनाच्चलितं शिरः
तस्मात्तावनुगृह्णातुं च्युतं केतकमुत्तमम् २१
किं त्वं पतसि पुष्पेश पुष्पराट् केन वा धृतम्
आदिमस्याप्रमेयस्य स्तंभमध्याच्चयुतश्चिरम् २२
न संपश्यामि तस्मात्त्वं जह्याशामंतदर्शने
अस्यां तस्य च सेवार्थं हंसमूर्तिरिहागतः २३
इतः परं सखे मेऽद्य त्वया कर्तव्यमीप्सितम्
मया सह त्वया वाच्यमेतद्विष्णोश्च सन्निधौ २४
स्तंभांतो वीक्षितो धात्रा तत्र साक्ष्यहमच्युत
इत्युक्त्वा केतकं तत्र प्रणनाम पुनः नः
असत्यमपि शस्तं स्यादापदीत्यनुशासनम् २५
समीक्ष्य तत्राऽच्युतमायतश्रमं प्रनष्टहर्षं तु ननर्त हर्षात्
उवाच चैनं परमार्थमच्युतं षंढात्तवादः स विधिस्ततोऽच्युतम् २६
स्तंभाग्रमेतत्समुदीक्षितं हरे तत्रैव साक्षी ननु केतकं त्विदम्
ततोऽवदत्तत्र हि केतकं मृषा तथेति तद्धातृवचस्तदंतिके २७

हरिश्च तत्सत्यमितीव चिंतयंश्चकार तस्मै विधये नमः स्वयम्
षोडशैरुपचारैश्च पूजयामास तं विधिम् २८
विधिं प्रहर्तुं शठमग्निलिंगतः स ईश्वरस्तत्र बभूव साकृतिः
समुत्थितः स्वामि विलोकनात्पुनः प्रकंपपाणिः परिगृह्य तत्पदम्
२९
आद्यंतहीनवपुषि त्वयि मोहबुद्धया भूयाद्विमर्श इह नावति
कामनोत्थः
स त्वं प्रसीद करुणाकर कश्मलं नौ मृष्टं क्षमस्व विहितं भवतैव
केल्या ३०
ईश्वर उवाच
वत्सप्रसन्नोऽस्मि हरे यतस्त्वमीशत्वमिच्छन्नपि सत्यवाक्यम्
ब्रूयास्ततस्ते भविता जनेषु साम्यं मया सत्कृतिरप्यलप्थाः ३१
इतः परं ते पृथगात्मनश्च क्षेत्रप्रतिष्ठोत्सवपूजनं च ३२
इति देवः पुरा प्रीतः सत्येन हरये परम्
ददौ स्वसाम्यमत्यर्थं देवसंघे च पश्यति ३३
इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां सप्तमोऽध्यायः ७

अध्याय ८

नंदिकेश्वर उवाच
ससर्जाथ महादेवः पुरुषं कंचिदद्भुतम्
भैरवाख्यं भ्रुवोर्मध्याद्ब्रह्मदर्पजिघांसया १
स वै तदा तत्र पतिं प्रणम्य शिवमंगणे
किं कार्यं करवाणयत्र शीघ्रमाज्ञापय प्रभो २
वत्सयोऽयं विधिः साक्षाज्जगतामाद्यदैवतम्
नूनमर्चय खड्गेन तिग्मेन जवसा परम् ३

स वै गृहीत्वैककरेण केशं तत्पंचमं दृप्तमसत्यभाषणम्
छित्त्वा शिरांस्यस्य निहंतुमुद्यतः प्रकंपयन्खड्गमतिस्फुटं करैः ४
पिता तवोत्सृष्टविभूषणांबरस्त्रगुत्तरीयामलकेशसंहतिः
प्रवातरंभेव लतेव चंचलः पपात वै भैरवपादपंकजे ५
तावद्विधिं तात दिदृक्षुरच्युतः कृपालुरस्मत्पतिपादपल्लवम्
निषिच्य बाष्पैरवदत्कृतांजलिर्यथा शिशुः स्वं पितरं कलाक्षरम् ६
अच्युत उवाच
त्वया प्रयत्नेन पुरा हि दत्तं यदस्य पंचाननमीशचिह्नम्
तस्मात्त्वमस्वाद्यमनुग्रहार्हं कुरु प्रसादं विधये ह्यमुष्मै ७
इत्यर्थितोऽच्युतेनेशस्तुष्टः सुरगणांगणे
निवर्तयामास तदा भैरवं ब्रह्मदंडतः ८
अथाह देवः कितवं विधिं विगतकंधरम्
ब्रह्मंस्त्वमर्हणाकांक्षी शठमीशत्वमास्थितः ९
नातस्ते सत्कृतिर्लोके भूयात्स्थानोत्सवादिकम्
ब्रह्मोवच
स्वामिन्प्रसीदाद्य महाविभूते मन्ये वरं वरद मे शिरसः प्रमोक्षम् १०
नमस्तुभ्यं भगवते बंधवे विश्वयोनये
सहिष्णवे सर्वदोषाणां शंभवे शैलधन्वने ११
ईश्वर उवाच
अराजभयमेतद्वै जगत्सर्वं न शिष्यति
ततस्त्वं जहि दंडार्हं वह लोकधुरं शिशो १२
वरं ददामि ते तत्र गृहाण दुर्लभं परम्
वैतानिकेषु गृह्येषु यज्ञे च भवान् गुरुः १३
निष्फलस्त्वदृते यज्ञः सांगश्च सहदक्षिणः
अथाह देवः कितवं केतकं कूटसाक्षिणम् १४

रे रे केतक दुष्टस्त्वं शठ दूरमितो व्रज
ममापि प्रेम ते पुष्पे मा भूत्पूजास्वितः परम् १५
इत्युक्ते तत्र देवेन केतकं देवजातयः
सर्वानि वारयामासुस्तत्पार्श्वादन्यतस्तदा १६
केतक उवाच
नमस्ते नाथ मे जन्मनिष्फलं भवदाज्ञया
सफलं क्रियतां तात क्षम्यतां मम किल्बिषम् १७
ज्ञानाज्ञानकृतं पापं नाशयत्येव ते स्मृतिः
तादृशे त्वयि दृष्टे मे मिथ्यादोषः कुतो भवेत् १८
तथा स्तुतस्तु भगवान्केतकेन सभातले
न मे त्वद्धारणं योग्यं सत्यवागहमीश्वरः १९
मदीयास्त्वां धरिष्यंति जन्म ते सफलं ततः
त्वं वै वितानव्याजेन ममोपरि भविष्यसि २०
इत्यनुगृह्य भगवान्केतकं विधिमाधवौ
विरराज सभामध्ये सर्वदेवैरभिष्टुतः २१
इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायामष्टमोऽध्यायः ८

अध्याय ९

नंदिकेश्वर उवाच
तत्रांतरे तौ च नाथं प्रणम्य विधिमाधवौ
बद्धांजलिपुटौ तूष्णीं तस्थतुर्दक्षवामगौ १
तत्र संस्थाप्य तौ देवं सकुटुंबं वरासने
पूजयामासतुः पूज्यं पुण्यैः पुरुषवस्तुभिः २
पौरुषं प्राकृतं वस्तुज्ञेयं दीर्घाल्पकालिकम्
हारनूपुरकेयूरकिरीटमणिकुंडलैः ३

यज्ञसूत्रोत्तरीयस्रक्क्षौममाल्यांगुलीयकैः
पुष्पतांबूलकर्पूरचंदनागुरुलेपनैः ४
धूपदीपसितच्छत्रव्यजनध्वजचामरैः
अन्यैर्दिव्योपहारैश्च वाग्मनोतीतवैभवैः ५
पतियोग्यैः पश्वलभ्यैस्तौ समर्चयतां पतिम्
यद्यच्छ्रेष्ठतमं वस्तु पतियोग्यं हितद्ध्वजे ६
तद्वस्त्वखिलमीशोपि पारं पर्यचिकीर्षया
सभ्यानां प्रददौ हृष्टः पृथक्तत्र यथाक्रमम् ७
कोलाहलो महानासीत्तत्र तद्वस्तु गृह्णताम्
तत्रैव ब्रह्मविष्णुभ्यां चार्चितः शंकरः पुरा ८
प्रसन्नः प्राह तौ नम्रौ सस्मितं भक्तिवर्धनः
ईश्वर उवाच
तुष्टोऽहमद्य वां वत्सौ पूजयाऽस्मिन्महादिने ९
दिनमेतत्ततः पुण्यं भविष्यति महत्तरम्
शिवरात्रिरिति ख्याता तिथिरेषा मम प्रिया १०
एतत्काले तु यः कुर्यात्पूजां मल्लिंगबेरयोः
कुर्यात्तु जगतः कृत्यं स्थितिसर्गादिकं पुमान् ११
शिवरात्रावहोरात्रं निराहारो जितेंद्रियः १२ब्
अर्चयेद्वा यथान्यायं यथाबलमवंचकः १२
यत्फलं मम पूजायां वर्षमेकं निरंतरम्
तत्फलं लभते सद्यः शिवरात्रौ मदर्चनात् १३
मद्धर्मवृद्धिकालोऽयं चंद्रकाल इवांबुधेः
प्रतिष्ठाद्युत्सवो यत्र मामको मंगलायनः १४
यत्पुनः स्तंभरूपेण स्वाविरासमहं पुरा
स कालो मार्गशीर्षे तु स्यादार्द्रा ऋक्षमर्भकौ १५

आर्द्रायां मार्गशीर्षे तु यः पश्येन्मामुमासखम्
मद्भेरमपि वा लिंगं स गुहादपि मे प्रियः १६
अलं दर्शनमात्रेण फलं तस्मिन्दिने शुभे
अभ्यर्चनं चेदधिकं फलं वाचामगोचरम् १७
रणरंगतलेऽमुष्मिन्यदहं लिंगवर्ष्मणा
जृंभितो लिंगवत्तस्माल्लिंगस्थानमिदं भवेत् १८
अनाद्यंतमिदं स्तंभमणुमात्रं भविष्यति
दर्शनार्थं हि जगतां पूजनार्थं हि पुत्रको १९
भोगावहमिदं लिंगं भुक्तिं मुक्त्येकसाधनम्
दर्शनस्पर्शनध्यानाज्जंतूनां जन्ममोचनम् २०
अनलाचलसंकाशं यदिदं लिंगमुत्थितम्
अरुणाचलमित्येव तदिदं ख्यातिमेष्यति २१
अत्र तीर्थं च बहुधा भविष्यति महत्तरम्
मुक्तिरप्यत्र जंतूनां वासेन मरणेन च २२
रथोत्सवादिकल्याणं जनावासं तु सर्वतः
अत्र दत्तं हुतं जप्तं सर्वं कोटिगुणं भवेत् २३
मत्क्षेत्रादपि सर्वस्मात्क्षेत्रमेतन्महत्तरम्
अत्र संस्मृतिमात्रेण मुक्तिर्भवति देहिनाम् २४
तस्मान्महत्तरमिदं क्षेत्रमत्यंतशोभनम्
सर्वकल्याणसंपूर्णं सर्वमुक्तिकरं शुभम् २५
अर्चयित्वाऽत्र मामेव लिंगे लिंगिनमीश्वरम्
सालोक्यं चैव सामीप्यं सारूप्यं साष्टिरेव च २६
सायुज्यमिति पंचैते क्रियादीनां फलं मतम्
सर्वेपि यूयं सकलं प्राप्स्यथाशु मनोरथम् २७
नंदिकेश्वर उवाच

इत्यनुगृह्य भगवान्विनीतौ विधिमाधवौ
यत्पूर्वं प्रहतं युद्धे तयोः सैन्यं परस्परम् २८
तदुत्थापयदत्यर्थं स्वशक्त्याऽमृतधारया
तयोर्मौढ्यं च वैरं च व्यपनेतुमुवाच तौ २९
सकलं निष्कलं चेति स्वरूपद्वयमस्ति मे
नान्यस्य कस्यचित्तस्मादन्यः सर्वोप्यनीश्वरः ३०
पुरस्तात्स्तंभरूपेण पश्चाद्रूपेण चार्भकौ
ब्रह्मत्वं निष्कलं प्रोक्तमीशत्वं सकलं तथा ३१
द्वयं ममैव संसिद्धं न मदन्यस्य कस्यचित्
तस्मादीशत्वमन्येषां युवयोरपि न क्वचित् ३२
तदज्ञानेन वां वृत्तमीशमानं महाद्भुतम्
तन्निराकर्तुमत्रैवमुत्थितोऽहं रणच्छितौ ३३
त्यजतं मानमात्मीयं मयीशे कुरुतं मतिम्
मत्प्रसादेन लोकेषु सर्वोप्यर्थः प्रकाशते ३४
गुरूक्तिर्व्यंजकं तत्र प्रमाणं वा पुनः पुनः
ब्रह्मतत्त्वमिदं गूढं भवत्प्रीत्या भणाम्यहम् ३५
अहमेव परं ब्रह्म मत्स्वरूपं कलाकलम्
ब्रह्मत्वादीश्वरश्चाहं कृत्यं मेनुग्रहादिकम् ३६
बृहत्त्वाद्बृंहणत्वाच्च ब्रह्माहं ब्रह्मकेशवौ
समत्वाद्व्यापकत्वाच्च तथैवात्माहमर्भकौ ३७
अनात्मानः परे सर्वे जीवा एव न संशयः
अनुग्रहाद्यं सर्गांतं जगत्कृत्यं च पंकजम् ३८
ईशत्वादेव मे नित्यं न मदन्यस्य कस्यचित्
आदौ ब्रह्मत्त्वबुद्ध्यर्थं निष्कलं लिंगमुत्थितम् ३९
तस्मादज्ञातमीशत्वं व्यक्तं द्योतयितुं हि वाम्

सकलोहमतो जातः साद्यादीशस्तु तत्क्षणात् ४०
सकलत्वमतो ज्ञेयमीशत्वं मयि सत्वरम्
यदिदं निष्कलं स्तंभं मम ब्रह्मत्वबोधकम् ४१
लिंगलक्षणयुक्तत्वान्मम लिंगं भवेदिदम्
तदिदं नित्यमभ्यर्च्यं युवाभ्यामत्र पुत्रकौ ४२
मदात्मकमिदं नित्यं मम सान्निध्यकारणम्
महत्पूज्यमिदं नित्यमभेदाल्लिंगसिंगिनोः ४३
यत्रप्रतिष्ठितं येन मदीयं लिंगमीदृशम्
तत्र प्रतिष्ठितः सोहमप्रतिष्ठोपि वत्सकौ ४४
मत्साम्यमेकलिंगस्य स्थापने फलमीरितम्
द्वितीये स्थापिते लिंगे मदैक्यं फलमेव हि ४५
लिंगं प्राधान्यतः स्थाप्यं तथाबेरं तु गौणकम्
लिंगाभावेन तत्क्षेत्रं सबेरमपि सर्वतः ४६

इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां नवमोऽध्यायः ९

अध्याय १०

ब्रह्मविष्णू ऊचतुः
सर्गादिपंचकृत्यस्य लक्षणं ब्रूहि नौ प्रभो
शिव उवाच
मत्कृत्यबोधनं गुह्यं कृपया प्रब्रवीमि वाम् १
सृष्टिः स्थितिश्च संहारस्तिरोभावोऽप्यनुग्रहः
पंचैव मे जगत्कृत्यं नित्यसिद्धमजाच्युतौ २
सर्गः संसारसंरंभस्तत्प्रतिष्ठा स्थितिर्मता
संहारो मर्दनं तस्य तिरोभावस्तदुत्क्रमः ३
तन्मोक्षोऽनुग्रहस्तन्मे कृत्यमेवं हि पंचकम्

कृत्यमेतद्वहत्यन्यस्तूष्णीं गोपुरबिंबवत् ४
सर्गादि यच्चतुष्कृत्यं संसारपरिजृंभणम्
पंचमं मुक्तिहेतुर्वै नित्यं मयि च सुस्थिरम् ५
तदिदं पंचभूतेषु दृश्यते मामकैर्जनैः
सृष्टिर्भूमौ स्थितिस्तोये संहारः पावके तथा ६
तिरोभावोऽनिले तद्वदनुग्रह इहाम्बरे
सृज्यते धरया सर्वमद्भिः सर्वं प्रवर्द्धते ७
अर्द्यते तेजसा सर्वं वायुना चापनीयते
व्योम्नानुगृह्यते सर्वं ज्ञेयमेवं हि सूरिभिः ८
पंचकृत्यमिदं बोढुं ममास्ति मुखपंचकम्
चतुर्दिक्षु चतुर्वक्त्रं तन्मध्ये पंचमं मुखम् ९
युवाभ्यां तपसा लब्धमेतत्कृत्यद्वयं सुतौ
सृष्टिस्थित्यभिधं भाग्यं मत्तः प्रीतादतिप्रियम् १०
तथा रुद्रमहेशाभ्यामन्यत्कृत्यद्वयं परम्
अनुग्रहाख्यं केनापि लब्धुं नैव हि शक्यते ११
तत्सर्वं पौर्विकं कर्म युवाभ्यां कालविस्मृतम्
न तद्रुद्र महेशाभ्यां विस्मृतं कर्म तादृशम् १२
रूपे वेशे च कृत्ये च वाहने चासने तथा
आयुधादौ च मत्साम्यमस्माभिस्तत्कृते कृतम् १३
मद्ध्यानविरहाद्वत्सौ मौढ्यं वामेवमागतम्
मज्ज्ञाने सति नैवं स्यान्मानं रूपे महेशवत् १४
तस्मान्मज्ज्ञानसिद्ध्यर्थं मंत्रमोंकारनामकम्
इतः परं प्रजपतं मामकं मानभंजनम् १५
उपादिशं निजं मंत्रमोंकारमुरुमंगलम्
ओंकारो मन्मुखाज्जज्ञे प्रथमं मत्प्रबोधकः १६

वाचकोऽयमहं वाच्यो मंत्रोऽयं हि मदात्मकः
तदनुस्मरणं नित्यं ममानुस्मरणं भवेत् १७
अकार उत्तरात्पूर्वमुकारः पश्चिमाननात्
मकारो दक्षिणमुखाद्बिंदुः प्राग्मुखतस्तथा १८
नादो मध्यमुखादेवं पंचधाऽसौ विजृंभितः
एकीभूतः पुनस्तद्वदोमित्येकाक्षरो भवेत् १९
नामरूपात्मकं सर्वं वेदभूतकुलद्वयम्
व्याप्तमेतेन मंत्रेण शिवशक्त्योश्च बोधकः २०
अस्मात्पंचाक्षरं जज्ञे बोधकं सकलस्यतत्
आकारादिक्रमेणैव नकारादियथाक्रमम् २१
अस्मात्पंचाक्षराज्जाता मातृकाः पंचभेदतः
तस्माच्छिरश्चतुर्वक्त्रात्त्रिपाद्गाय त्रिरेव हि २२
वेदः सर्वस्ततो जज्ञे ततो वै मंत्रकोटयः
तत्तन्मंत्रेण तत्सिद्धिः सर्वसिद्धिरितो भवेत् २३
अनेन मंत्रकंदेन भोगो मोक्षश्च सिद्ध्यति
सकला मंत्रराजानः साक्षाद्भोगप्रदाः शुभाः २४
नंदिकेश्वर उवाच
पुनस्तयोस्तत्र तिरः पटं गुरुः प्रकल्प्य मंत्रं च समादिशत्परम्
निधाय तच्छीर्ष्णि करांबुजं शनैरुदग्मुखं संस्थितयोः सहांबिकः
२५
त्रिरुच्चार्याग्रहीन्मंत्रं यंत्रतंत्रोक्तिपूर्वकम्
शिष्यौ च तौ दक्षिणायामात्मानं च समर्पयत् २६
प्रबद्धहस्तौ किल तौ तदंतिके तमेव देवं जगतुर्जगद्गुरुम् २७
ब्रह्माच्युतावूचतुः
नमो निष्कलरूपाय नमो निष्कलतेजसे

नमः सकलनाथाय नमस्ते सकलात्मने २८
नमः प्रणववाच्याय नमः प्रणवलिंगिने
नमः सृष्ट्यादिकर्त्रे च नमः पंचमुखायते २९
पंचब्रह्मस्वरूपाय पंच कृत्यायते नमः
आत्मने ब्रह्मणे तुभ्यमनंतगुणशक्तये ३०
सकलाकलरूपाय शंभवे गुरवे नमः
इति स्तुत्वा गुरुं पद्यैर्ब्रह्मा विष्णुश्च नेमतुः ३१
ईश्वर उवाच
वत्सकौ सर्वतत्त्वं च कथितं दर्शितं च वाम्
जपतं प्रणवं मंत्रं देवीदिष्टं मदात्मकम् ३२
ज्ञानं च सुस्थिरं भाग्यं सर्वं भवति शाश्वतम्
आर्द्रायां च चतुर्दश्यां तज्जाप्यं त्वक्षयं भवेत् ३३
सूर्यगत्या महार्द्रायामेकं कोटिगुणं भवेत्
मृगशीर्षांतिमो भागः पुनर्वस्वादिमस्तथा ३४
आर्द्रासमः सदा ज्ञेयः पूजाहोमादितर्पणे
दर्शनं तु प्रभाते च प्रातःसंगवकालयोः ३५
चतुर्दशी तथा ग्राह्या निशीथव्यापिनी भवेत्
प्रदोषव्यापिनी चैव परयुक्ता प्रशस्यते ३६
लिंगं बेरं च मेतुल्यं यजतां लिंगमुत्तमम्
तस्माल्लिंगं परं पूज्यं बेरादपि मुमुक्षुभिः ३७
लिंगमोंकारमंत्रेण बेरं पंचाक्षरेण तु
स्वयमेव हि सद्द्रव्यैः प्रतिष्ठाप्यं परैरपि ३८
पूजयेदुपचारैश्च मत्पदं सुलभं भवेत्
इति शास्य तथा शिष्यौ तत्रैवांऽतर्हितः शिवः ३९
इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां दशमोऽध्यायः १०

अध्याय ११

ऋषय ऊचुः
कथं लिंगं प्रतिष्ठाप्यं कथं वातस्य लक्षणम्
कथं वा तत्समभ्यर्च्यं देशे काले च केन हि १
सूत उवाच
युष्मदर्थं प्रवक्ष्यामि बुद्ध्यतामवधानतः
अनुकूले शुभे काले पुण्ये तीर्थे तटे तथा २
यथेष्टं लिंगमारोप्यं यत्र स्यान्नित्यमर्चनम्
पार्थिवेन तथाप्येनं तैजसेन यथारुचि ३
कल्पलक्षणसंयुक्तं लिंगं पूजाफलं लभेत्
सर्वलक्षणसंयुक्तं सद्यः पूजाफलप्रदम् ४
चरे विशिष्यते सूक्ष्मं स्थावरे स्थूलमेव हि
सलक्षणं सपीठं च स्थापयेच्छिवनिर्मितम् ५
मंडलं चतुरस्त्रं वा त्रिकोणमथवा तथा
खट्वांगवन्मध्यसूक्ष्मं लिंगपीठं महाफलं ६
प्रथमं मृच्छिलादिभ्यो लिगं लोहादिभिः कृतम्
येन लिंगं तेन पीठं स्थावरे हि विशिष्यते ७
लिंगं पीठं चरे त्वेकं लिंगं बाणकृतं विना
लिंगप्रमाणं कर्तृ-णां द्वादशांगुलमुत्तमम् ८
न्यूनं चेत्फलमल्पं स्यादधिकं नैव दूष्यते
कर्तुरेकांगुलन्यूनं चरेपि च तथैव हि ९
आदौ विमानं शिल्पेन कार्यं देवगणैर्युतम्
तत्र गर्भगृहे रम्ये दृढे दर्पणसंनिभे १०
भूषिते नवरत्नैश्च दिग्द्वारे च प्रधानकैः
नीलं रक्तं च वै दूर्यं श्यामं मारकतं तथा ११

मुक्ताप्रवालगोमेदवज्राणि नवरत्नकम् १२ब्
मध्ये लिंगं महद्द्रव्यं निक्षिपेत्सहवैदिके १२
संपूज्य लिंगं सद्याद्यैः पंचस्थाने यथाक्रमम्
अग्नौ च हुत्वा बहुधा हविषास कलं च माम् १३
अभ्यर्च्य गुरुमाचार्यमर्थैः कामैश्च बांधवम्
दद्यादैश्वर्यमर्थिभ्यो जडमप्यजडं तथा १४
स्थावरं जंगमं जीवं सर्वं संतोष्य यत्नतः
सुवर्णपूरिते श्वभ्रे नवरत्नैश्च पूरिते १५
सद्यादि ब्रह्म चोच्चार्य ध्यात्वा देवं परं शुभम्
उदीर्य च महामंत्रमोंकारं नादघोषितम् १६
लिंगं तत्र प्रतिष्ठाप्य लिगं पीठेन योजयेत्
लिंगं सपीठं निक्षिप्य नित्यलेपेन बंधयेत् १७
एवं बेरं च संस्थाप्यं तत्रैव परमं शुभम्
पंचाक्षरेण बेरं तु उत्सवार्थं वहिस्तथा १८
बेरं गुरुभ्यो गृह्णीयात्साधुभिः पूजितं तु वा
एवं लिंगे च बेरे च पूजा शिवपदप्रदा १९
पुनश्च द्विविधं प्रोक्तं स्थावरं जंगमं तथा
स्थावरं लिंगमित्याहुस्तरुगुल्मादिकं तथा २०
जंगमं लिंगमित्याहुः कृमिकीटादिकं तथा
स्थावरस्य च शुश्रूषा जंगमस्य च तर्पणम् २१
तत्तत्सुखानुरागेण शिवपूजां विदुर्बुधाः
पीठमंबामयं सर्वं शिवलिंगं च चिन्मयम् २२
यथा देवीमुमामंके धृत्वा तिष्ठति शंकरः
तथा लिंगमिदं पीठं धृत्वा तिष्ठति संततम् २३
एवं स्थाप्य महालिंगं पूजयेदुपचारकैः

नित्यपूजा यथा शक्तिध्वजादिकरणं तथा २४
इति संस्थापयेल्लिंगं साद्याच्छिवपदप्रदम्
अथवा चरलिंगं तु षोडशैरुपचारकैः २५
पूजयेच्च यथान्यायं क्रमाच्छिवपदप्रदम्
आवाहनं चासनं च अर्घ्यं पाद्यं तथैव च २६
तदंगाचमनं चैव स्नानमभ्यंगपूर्वकम्
वस्त्रं गंधं तथा पुष्पं धूपं दीपं निवेदनम् २७
नीराजनं च तांबूलं नमस्कारो विसर्जनम्
अथवाऽर्घ्यादिकं कृत्वा नैवेद्यां तं यथाविधि २८
अथाभिषेकं नैवेद्यं नमस्कारं च तर्पणम्
यथाशक्ति सदाकुर्यात्क्रमाच्छिवपदप्रदम् २९
अथवा मानुषे लिंगेप्यार्षे दैवे स्वयंभुवि
स्थापितेऽपूर्वके लिंगे सोपचारं यथा तथा ३०
पूजोपकरणे दत्ते यत्किंचित्फलमश्नुते
प्रदक्षिणानमस्कारैः क्रमाच्छिवपदप्रदम् ३१
लिंगं दर्शनमात्रं वा नियमेन शिवप्रदम्
मृत्पिष्टगोशकृत्पुष्पैः करवीरेण वा फलैः ३२
गुडेन नवनीतेन भस्मनान्नैर्यथारुचि
लिंगं यत्नेन कृत्वांते यजेत्तदनुसारतः ३३
अंगुष्ठादावपि तथा पूजामिच्छंति केचन
लिंगकर्मणि सर्वत्र निषेधोस्ति न कर्हिचित् ३४
सर्वत्र फलदाता हि प्रयासानुगुणं शिवः
अथवा लिंगदानं वा लिंगमौल्यमथापि वा ३५
श्रद्धया शिवभक्ताय दत्तं शिवपदप्रदम्
अथवा प्रणवं नित्यं जपेद्दशसहस्रकम् ३६

संध्ययोश्च सहस्रं वा ज्ञेयं शिवपदप्रदम्
जपकाले मकारांतं मनःशुद्धिकरं भजेत् ३७
समाधौ मानसं प्रोक्तमुपांशु सार्वकालिकम्
समानप्रणवं चेमं बिंदुनादयुतं विदुः ३८
अथ पंचाक्षरं नित्यं जपेदयुतमादरात्
संध्ययोश्च सहस्रं वा ज्ञेयं शिवपदप्रदम् ३९
प्रणवेनादिसंयुक्तं ब्राह्मणानां विशिष्यते
दीक्षायुक्तं गुरोर्ग्राह्यं मंत्रं ह्यथ फलाप्तये ४०
कुंभस्नानं मंत्रदीक्षां मातृकान्यासमेव च
ब्राह्मणः सत्यपूतात्मा गुरुर्ज्ञानी विशिष्यते ४१
द्विजानां च नमःपूर्वमन्येषां च नमोन्तकम् ४२ब्
स्त्रीणां च क्वचिदिच्छंति नमो तं च यथाविधि ४२
विप्रस्त्रीणां नमः पूर्वमिदमिच्छंति केचन
पंचकोटिजपं कृत्वा सदा शिवसमो भवेत् ४३
एकद्वित्रिचतुःकोट्याब्रह्मादीनां पदं व्रजेत्
जपेदक्षरलक्षंवा अक्षराणां पृथक्पृथक् ४४
अथवाक्षरलक्षं वा ज्ञेयं शिवपदप्रदम्
सहस्रं तु सहस्राणां सहस्रेण दिनेन हि ४५
जपेन्मंत्रादिष्टसिद्धिर्नित्यं ब्राह्मणभोजनात्
अष्टोत्तरसहस्रं वै गायत्रीं प्रातरेव हि ४६
ब्राह्मणस्तु जपेन्नित्यं क्रमाच्छिवपदप्रदान्
वेदमंत्रांस्तु सूक्तानि जपेन्नियममास्थितः ४७
एकं दशार्णं मंत्रं च शतोनं च तदूर्ध्वकम्
अयुतं च सहस्रं च शतमेकं विना भवेत् ४८
वेदपारायणं चैव ज्ञेयं शिवपदप्रदम्

अन्यान्बहुतरान्मंत्राञ्जपेदक्षरलक्षतः ४९
एकाक्षरांस्तथा मंत्राञ्जपेदक्षरकोटितः
ततः परं जपेच्चैव सहस्रं भक्तिपूर्वकम् ५०
एवं कुर्याद्यथाशक्ति क्रमाच्छिव पदं लभेत्
नित्यं रुचिकरं त्वेकं मंत्रमामरणांतिकम् ५१
जपेत्सहस्रमोमिति सर्वाभीष्टं शिवाज्ञया
पुष्पारामादिकं वापि तथा संमार्जनादिकम् ५२
शिवाय शिवकार्याथे कृत्वा शिवपदं लभेत्
शिवक्षेत्रे तथा वासं नित्यं कुर्याच्च भक्तितः ५३
जडानामजडानां च सर्वेषां भुक्तिमुक्तिदम्
तस्माद्वासं शिवक्षेत्रे कुर्यदामरणं बुधः ५४
लिंगाद्धस्तशतं पुण्यं क्षेत्रे मानुषके विदुः
सहस्रारत्निमात्रं तु पुण्यक्षेत्रे तथार्षके ५५
दैवलिंगे तथा ज्ञेयं सहस्रारत्निमानतः
धनुष्प्रमाणसाहस्रं पुण्यं क्षेत्रे स्वयं भुवि ५६
पुण्यक्षेत्रे स्थिता वापी कूपाद्यं पुष्कराणि च
शिवगंगेति विज्ञेयं शिवस्य वचनं यथा ५७
तत्र स्नात्वा तथा दत्त्वा जपित्वा हि शिवं व्रजेत्
शिवक्षेत्रं समाश्रित्य वसेदामरणं तथा ५८
दाहं दशाहं मास्यं वा सपिंडीकरणं तु वा
आब्दिकं वा शिवक्षेत्रे क्षेत्रे पिंडमथापि वा ५९
सर्वपाप विनिर्मुक्तः सद्यः शिवपदं लभेत्
अथवा सप्तरात्रं वा वसेद्वा पंचरात्रकम् ६०
त्रिरात्रमेकरात्रं वा क्रमाच्छिवपदं लभेत्
स्ववर्णानुगुणं लोके स्वाचारात्प्राप्नुते नरः ६१

वर्णोद्धारेण भक्त्या च तत्फलातिशयं नरः
सर्वं कृतं कामनया सद्यः फलमवाप्नुयात् ६२
सर्वं कृतमकामेन साक्षाच्छिवपदप्रदम्
प्रातर्मध्याह्नसायाह्नमहस्त्रिष्वेकतः क्रमात् ६३
प्रातर्विधिकरं ज्ञेयं मध्याह्नं कामिकं तथा
सायाह्नं शांतिकं ज्ञेयं रात्रावपि तथैव हि ६४
कालो निशीथो वै प्रोक्तोमध्ययामद्वयं निशि
शिवपूजा विशेषेण तत्कालेऽभीष्टसिद्धिदा ६५
एवं ज्ञात्वा नरः कुर्वन्यथोक्तफलभाग्भवेत्
कलौ युगे विशेषेण फलसिद्धिस्तु कर्मणा ६६
उक्तेन केनचिद्वापि अधिकारविभेदतः
सद्भक्तिः पापभीरुश्चेत्ततत्फलमवाप्नुयात् ६७
ऋषय ऊचुः
अथ क्षेत्राणि पुण्यानि समासात्कथयस्व नः
सर्वाः स्त्रियश्च पुरुषा यान्याश्रित्य पदं लभेत् ६८
सूत योगिवरश्रेष्ठ शिवक्षेत्रागमांस्तथा
सूत उवाच
शृणुत श्रद्धया सर्वक्षेत्राणि च तदागमान् ६९
इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायांएकदशोऽध्यायः ११

अध्याय १२

सूत उवाच
शृणुध्वमृषयः प्राज्ञाः शिवक्षेत्रं विमुक्तिदम्
तदागमांस्ततो वक्ष्ये लोकरक्षार्थमेव हि १
पंचाशत्कोटिविस्तीर्णा सशैलवनकानना

शिवाज्ञया हि पृथिवी लोकं धृत्वा च तिष्ठति २
तत्र तत्र शिवक्षेत्रं तत्र तत्र निवासिनाम्
मो-क्षार्थं कृपया देवः क्षेत्रं कल्पितवान्प्रभुः ३
परिग्रहादृषीणां च देवानां परिग्रहात्
स्वयंभूतान्यथान्यानि लोकरक्षार्थमेव हि ४
तीर्थे क्षेत्रे सदाकार्यं स्नानदानजपादिकम्
अन्यथा रोगदारिद्र्यमूकत्वाद्याप्नुयान्नरः ५
अथास्मिन्भारते वर्षे प्राप्नोति मरणं नरः
स्वयंभूस्थानवासेन पुनर्मानुष्यमाप्नुयात् ६
क्षेत्रे पापस्य करणं दृढं भवति भूसुराः
पुण्यक्षेत्रे निवासे हि पापमण्वपि नाचरेत् ७
येन केनाप्युपायेन पुण्यक्षेत्रे वसेन्नरः
सिंधोः शतनदीतीरे संति क्षेत्राण्यनेकशः ८
सरस्वती नदी पुण्या प्रोक्ता षष्टिमुखा तथा
तत्तत्तीरे वसेत्प्राज्ञः क्रमाद्ब्रह्मपदं लभेत् ९
हिमवद्गिरिजा गंगा पुण्या शतमुखा नदी
तत्तीरे चैव काश्यादिपुण्यक्षेत्राण्यनेकशः १०
तत्र तीरं प्रशस्तं हि मृगे मृगबृहस्पतौ
शोणभद्रो दशमुखः पुण्योभीष्टफलप्रदः ११
तत्र स्नानोपवासेन पदं वैनायकं लभेत्
चतुर्विंशमुखा पुण्या नर्मदा च महानदी १२
तस्यां स्नानेन वासेन पदं वैष्णवमाप्नुयात्
तमसा द्वादशमुखा रेवा दशमुखा नदी १३
गोदावरी महापुण्या ब्रह्मगोवधनाशिनी
एकविंशमुखा प्रोक्ता रुद्रलोकप्रदायिनी १४

कृष्णवेणी पुण्यनदी सर्वपापक्षयावहा
साष्टादशमुखाप्रोक्ता विष्णुलोकप्रदायिनी १५
तुंगभद्रा दशमुखा ब्रह्मलोकप्रदायिनी
सुवर्णमुखरी पुण्या प्रोक्ता नवमुखा तथा १६
तत्रैव सुप्रजायंते ब्रह्मलोकच्युतास्तथा
सरस्वती च पंपा च कन्याश्वेतनदी शुभा १७
एतासां तीरवासेन इंद्रलोकमवाप्नुयात्
सह्याद्रिजा महापुण्या कावेरीति महानदी १८
सप्तविंशमुखा प्रोक्ता सर्वाभीष्टं प्रदायिनी
तत्तीराः स्वर्गदाश्चैव ब्रह्मविष्णुपदप्रदाः १९
शिवलोकप्रदा शैवास्तथाऽभीष्टफलप्रदाः
नैमिषे बदरे स्नायान्मेषगे च गुरौ रवौ २०
ब्रह्मलोकप्रदं विद्यात्ततः पूजादिकं तथा
सिंधुनद्यां तथा स्नानं सिंहे कर्कटगे रवौ २१
केदारोदकपानं च स्नानं च ज्ञानदं विदुः
गोदावर्यां सिंहमासे स्नायात्सिंहबृहस्पतौ २२
शिवलोकप्रदमिति शिवेनोक्तं तथा पुरा
यमुनाशोणयोः स्नायाद्गुरौ कन्यागते रवौ २३
धर्मलोके दंतिलोके महाभोगप्रदं विदुः
कावेर्यां च तथास्नायात्तुलागे तु रवौ गुरौ २४
विष्णोर्वचनमाहात्म्यात्सर्वाभीष्टप्रदं विदुः
वृश्चिके मासि संप्राप्ते तथार्के गुरुवृश्चिके २५
नर्मदायां नदीस्नानाद्विष्णुलोकमवाप्नुयात्
सुवर्णमुखरीस्नानं चापगे च गुरौ रवौ २६
शिवलोकप्रदमिति ब्राह्मणो वचनं यथा

मृगमासि तथा स्नायाज्ञाह्नव्यां मृगगे गुरौ २७
शिवलोकप्रदमिति ब्रह्मणो वचनं यथा
ब्रह्मविष्णवोः पदे भुक्त्वा तदंते ज्ञानमाप्नुयात् २८
गंगायां माघमासे तु तथाकुंभगते रवौ
श्राद्धं वा पिंडदानं वा तिलोदकमथापिवा २९
वंशद्वयपितृ-णां च कुलकोटयुद्धरं विदुः
कृष्णवेरणयां प्रशंसंति मीनगे च गुरौ रवौ ३०
तत्तत्तीर्थे च तन्मासि स्नानमिंद्रपदप्रदम्
गंगां वा सह्यजां वापि समाश्रित्य वसेद्बुधः ३१
तत्कालकृतपापस्य क्षयो भवति निश्चितम्
रुद्रलोकप्रदान्येव संति क्षेत्राणयनेकशः ३२
ताम्रपर्णी वेगवती ब्रह्मलोकफलप्रदे
तयोस्तीरे हि संत्येव क्षेत्राणि स्वर्गदानि च ३३
संति क्षेत्राणि तन्मध्ये पुण्यदानि च भूरिशः
तत्र तत्र वसन्प्राज्ञस्तादृशं च फलं लभेत् ३४
सदाचारेण सद्वृत्त्या सदा भावनयापि च
वसेद्दयालुः प्राज्ञो वै नान्यथा तत्फलं लभेत् ३५
पुण्यक्षेत्रे कृतं पुण्यं बहुधा ऋद्धिमृच्छति
पुण्यक्षेत्रे कृतं पापं महदप्यवपि जायते ३६
तत्कालं जीवनार्थश्चेत्पुण्येन क्षयमेष्यति
पुण्यमैश्वर्यदं प्राहुः कायिकं वाचिकं तथा ३७
मानसं च तथा पापं तादृशं नाशयेद्द्विजाः
मानसं वज्रलेपं तु कल्पकल्पानुगं तथा ३८
ध्यानादेव हि तन्नश्येन्नान्यथा नाशमृच्छति
वाचिकं जपजालेन कायिकं कायशोषणात् ३९

दानाद्धनकृतं नश्येन्नाऽन्यथाकल्पकोटिभिः
क्वचित्पापेन पुण्यं च वृद्धिपूर्वेण नश्यति ४०
बीजांशश्चैव वृद्ध्यंशो भोगांशः पुण्यपापयोः
ज्ञाननाश्यो हि बीजांशो वृद्धिरुक्तप्रकारतः ४१
भोगांशो भोगनाश्यस्तु नान्यथा पुण्यकोटिभिः
बीजप्ररोहे नष्टे तु शेषो भोगाय कल्पते ४२
देवानां पूजया चैव ब्रह्मणानां च दानतः
तपोधिक्याच्च कालेन भोगः सह्यो भवेन्नृणाम्
तस्मात्पापमकृत्वैव वस्तव्यं सुखमिच्छता ४३

इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां द्वादशोऽध्यायः १२

अध्याय १३

ऋषय ऊचुः
सदाचारं श्रावयाशु येन लोकाञ्जयेद्बुधः
धर्माधर्ममयान्ब्रूहि स्वर्गनारकदांस्तथा १
सूत उवाच
सदाचारयुतो विद्वान्ब्राह्मणो नाम नामतः
वेदाचारयुतो विप्रो ह्येतैरेकैकवान्द्विजः २
अल्पाचारोल्पवेदश्च क्षत्रियो राजसेवकः
किंचिदाचारवान्वैश्यः कृषिवाणिज्यकृत्तया ३
शूद्रब्राह्मण इत्युक्तः स्वयमेव हि कर्षकः
असूयालुः परद्रोही चंडालद्विज उच्यते ४
पृथिवीपालको राजा इतरेक्षत्रिया मताः
धान्यादिक्रयवान्वैश्य इतरो वणिगुच्यते ५
ब्रह्मक्षत्रियवैश्यानां शुश्रूषुः शूद्र उच्यते

कर्षको वृषलो ज्ञेय इतरे चैव दस्यवः ६
सर्वो ह्युषःप्राचीमुखश्चिन्तयेद्देवपूर्वकान्
धर्मानर्थांश्च तत्क्लेशानायं च व्ययमेव च ७
आयुर्द्वेषश्च मरणं पापं भाग्यं तथैव च
व्याधिः पुष्टिस्तथा शक्तिः प्रातरुत्थानदिक्फलम् ८
निशांत्यायामोषा ज्ञेया यामार्धं संधिरुच्यते
तत्काले तु समुत्थाय विण्मूत्रे विसृजेद्द्विजः ९
गृहाद्दूरं ततो गत्वा बाह्यतः प्रवृतस्तथा
उदङ्मुखः समाविश्य प्रतिबंधेऽन्यदिङ्मुखः १०
जलाग्निब्राह्मणादीनां देवानां नाभिमुख्यतः
लिंगं पिधाय वामेन मुखमन्येन पाणिना ११
मलमुत्सृज्य चोत्थाय न पश्येच्चैव तन्मलम्
उद्धृतेन जलेनैव शौचं कुर्याज्जलाद्बहिः १२
अथवा देवपित्रार्षतीर्थावतरणं विना
सप्त वा पंच वा त्रीन्वा गुदं संशोधयेन्मृदा १३
लिंगे कर्कोटमात्रं तु गुदे प्रसृतिरिष्यते
तत उत्थाय पद्धस्तशौचं गण्डूषमष्टकम् १४
येन केन च पत्रेण काष्ठेन च जलाद्बहिः
कार्यं संत्यज्य तर्ज्जनीं दंतधावनमीरितम् १५
जलदेवान्नमस्कृत्य मंत्रेण स्नानमाचरेत्
अशक्तः कंठदघ्नं वा कटिदघ्नमथापि वा १६
आजानु जलमाविश्य मंत्रस्नानं समाचरेत्
देवादींस्तर्पयेद्विद्वांस्तत्र तीर्थजलेन च १७
धौतवस्त्रं समादाय पंचकच्छेन धारयेत्
उत्तरीयं च किं चैव धार्यं सर्वेषु कर्मसु १८

नद्यादितीर्थस्नाने तु स्नानवस्त्रं न शोधयेत्
वापीकूपगृहादौ तु स्नानादूर्ध्वं नयेद्बुधः १९
शिलादार्वादिके वापि जले वापि स्थलेपि वा
संशोध्य पीडयेद्वस्त्रं पितृ-णां तृप्तये द्विजाः २०
जाबालकोक्तमंत्रेण भस्मना च त्रिपुंड्रकम्
अन्यथा चेज्जले पात इतस्तन्नरकमृच्छति २१
आपोहिष्ठेति शिरसि प्रोक्षयेत्पापशांतये
यस्येति मंत्रं पादे तु संधिप्रोक्षणमुच्यते २२
पादे मूर्ध्नि हृदि चैव मूर्ध्नि हृत्पाद एव च
हृत्पादमूर्ध्नि संप्रोक्ष्य मंत्रस्नानं विदुर्बुधाः २३
ईषत्स्पर्शे च दौः स्वास्थ्ये राजराष्ट्रभयेऽपि च
अत्यागतिकाले च मंत्रस्नानं समाचरेत् २४
प्रातः सूर्यानुवाकेन सायमघ्न्यनुवाकतः
अपः पीत्वा तथामध्ये पुनः प्रोक्षणमाचरेत् २५
गायत्र्या जपमंत्रांते त्रिरूर्ध्वं प्राग्विनिक्षिपेत्
मंत्रेण सह चैकं वै मध्येऽर्घ्यं तु रवेर्द्विजा २६
अथ जाते च सायाह्ने भुवि पश्चिमदिङ्मुखः
उद्धृत्य दद्यात्प्रातस्तु मध्याह्नेंगुलिभिस्तथा २७
अंगुलीनां च रंध्रेण लंबं पश्येद्दिवाकरम्
आत्मप्रदक्षिणं कृत्वा शुद्धाचमनमाचरेत् २८
सायं मुहूर्तादर्वाक्तु कृता संध्या वृथा भवेत्
अकालात्काल इत्युक्तो दिनेऽतीते यथाक्रमम् २९
दिवाऽतीते च गायत्रीं शतं नित्ये क्रमाज्जपेत्
आदर्शाहात्पराऽतीते गायत्रीं लक्षमभ्यसेत् ३०
मासातीते तु नित्ये हि पुनश्चोपनयं चरेत्

ईशो गौरीगुहो विष्णुर्ब्रह्मा चेंद्रश्च वै यमः ३१
एवं रूपांश्च वै देवांस्तर्पयेदर्थसिद्धये
ब्रह्मार्पणं ततः कृत्वा शुद्धाचमनमाचरेत् ३२
तीर्थदक्षिणतः शस्ते मठे मंत्रालये बुधः
तत्र देवालये वापि गृहे वा नियतस्थले ३३
सर्वान्देवान्नमस्कृत्य स्थिरबुद्धिः स्थिरासनः
प्रणवं पूर्वमभ्यस्य गायत्रीमभ्यसेत्ततः ३४
जीवब्रह्मैक्यविषयं बुद्ध्वा प्रणवमभ्यसेत्
त्रैलोक्यसृष्टिकर्त्तारं स्थितिकर्तारमच्युतम् ३५
संहर्तारं तथा रुद्रं स्वप्रकाशमुपास्महे
ज्ञानकर्मेंद्रियाणां च मनोवृत्तीर्धियस्तथा ३६
भोगमोक्षप्रदे धर्मे ज्ञाने च प्रेरयेत्सदा
इत्थमर्थं धियाध्यायन्ब्रह्मप्राप्नोति निश्चयः ३७
केवलं वा जपेन्नित्यं ब्राह्मणयस्य च पूर्तये
सहस्रमभ्यसेन्नित्यं प्रातर्ब्राह्मणपुंगवः ३८
अन्येषां च यथा शक्तिमध्याह्ने च शतं जपेत्
सायं द्विदशकं ज्ञेयं शिखाष्टकसमन्वितम् ३९
मूलाधारं समारभ्य द्वादशांतस्थितांस्तथा
विद्येशब्रह्मविष्णवीशजीवात्मपरमेश्वरान् ४०
ब्रह्मबुद्ध्या तदैक्यं च सोहं भावनया जपेत्
तानेव ब्रह्मरंध्रादौ कायाद्बाह्ये च भावयेत् ४१
महत्तत्त्वं समारभ्य शरीरं तु सहस्रकम्
एकैकस्माज्जपादेकमतिक्रम्य शनैः शनैः ४२
परस्मिन्योजयेज्जीवं जपतत्त्वमुदाहृतम्
शतद्विदशकं देहं शिखाष्टकसमन्वितम् ४३

मंत्राणां जप एवं हि जपमादिक्रमाद्विदुः
सहस्रं ब्राह्मदं विद्याच्छतमैंद्रप्रदं विदुः ४४
इतरत्त्वात्मरक्षार्थं ब्रह्मयोनिषु जायते
दिवाकरमुपस्थाय नित्यमित्थं समाचरेत् ४५
लक्षद्वादशयुक्तस्तु पूर्णब्राह्मण ईरितः
गायत्र्या लक्षहीनं तु वेदकार्येन योजयेत् ४६
आसप्ततेस्तु नियमं पश्चात्प्रव्राजनं चरेत्
प्रातर्द्वादशसाहस्रं प्रव्राजीप्रणवं जपेत् ४७
दिने दिने त्वतिक्रांते नित्यमेवं क्रमाज्जपेत्
मासादौ क्रमशोऽतीते सार्धलक्षजपेन हि ४८
अत ऊर्ध्वमतिक्रांते पुनः प्रैषं समाचरेत्
एवं कृत्वा दोषशांतिरन्यथा रौरवं व्रजेत् ४९
धर्मार्थयोस्ततो यत्नं कुर्यात्कामी न चेतरः
ब्राह्मणो मुक्तिकामः स्याद्ब्रह्मज्ञानं सदाभ्यसेत् ५०
धर्मादर्थोऽर्थतो भोगो भोगाद्वैराग्यसंभवः
धर्मार्जितार्थभोगेन वैराग्यमुपजायते ५१
विपरीतार्थभोगेन राग एव प्रजायते
धर्मश्च द्विविधः प्रोक्तो द्रव्यदेहद्वयेन च ५२
द्रव्यमिज्यादिरूपं स्यात्तीर्थस्नानादि दैहिकम्
धनेन धनमाप्नोति तपसा दिव्यरूपताम् ५३
निष्कामः शुद्धिमाप्नोति शुद्ध्या ज्ञानं न संशयः
कृतादौ हि तपःश्लोघ्यं द्रव्यधर्मः कलौ युगे ५४
कृतेध्यानाज्ज्ञानसिद्धिस्त्रेतायां तपसा तथा
द्वापरे यजनाज्ज्ञानं प्रतिमापूजया कलौ ५५
यादृशं पुण्यं पापं वा तादृशं फलमेव हि

द्रव्यदेहांगभेदेन न्यूनवृद्धिक्षयादिकम् ५६
अधर्मो हिंसिकारूपो धर्मस्तु सुखरूपकः
अधर्माद्दुःखमाप्नोति धर्माद्वै सुखमेधते ५७
विद्यादुर्वृत्तितो दुःखं सुखं विद्यात्सुवृत्तितः
धर्मार्जनमतः कुर्याद्भोगमोक्षप्रसिद्धये ५८
सकुटुंबस्य विप्रस्य चतुर्जनयुतस्य च
शतवर्षस्य वृत्तिं तु दद्यात्तद्ब्रह्मलोकदम् ५९
चांद्रायणसहस्रं तु ब्रह्मलोकप्रदं विदुः
सहस्रस्य कुटुंबस्य प्रतिष्ठां क्षत्रियश्चरेत् ६०
इंद्रलोकप्रदं विद्यादयुतं ब्रह्मलोकदम्
यां देवतां पुरस्कृत्य दानमाचरते नरः ६१
तत्तल्लोकमवाप्नोति इति वेदविदो विदुः
अर्थहीनः सदा कुर्यात्तपसा मार्जनं तथा ६२
तीर्थाच्च तपसा प्राप्यं सुखमक्षय्यमश्नुते
अर्थार्जनमथो वक्ष्ये न्यायतः सुसमाहितः ६३
कृतात्प्रतिग्रहाच्चैव याजनाच्च विशुद्धितः
अदैन्यादनतिक्लेशाद्ब्राह्मणो धनमर्जयेत् ६४
क्षत्रियो बाहुवीर्येण कृषिगोरक्षणाद्विशः
न्यायार्जितस्य वित्तस्य दानात्सिद्धिं समश्नुते ६५
ज्ञानसिद्ध्या मोक्षसिद्धिः सर्वेषां गुर्वनुग्रहात्
मोक्षात्स्वरूपसिद्धिः स्यात्परानन्दं समश्नुते ६६
सत्संगात्सर्वमेतद्वै नराणां जायते द्विजाः
धनधान्यादिकं सर्वं देयं वै गृहमेधिना ६७
यद्यत्काले वस्तुजातं फलं वा धान्यमेव च
तत्तत्सर्वं ब्राह्मणेभ्यो देयं वै हितमिच्छता ६८

जलं चैव सदा देयमन्नं क्षुद्व्याधिशांतये
क्षेत्रं धान्यं तथाऽऽमान्नमन्नमेवं चतुर्विधम् ६९
यावत्कालं यदन्नं वै भुक्त्वा श्रवणमेधते
तावत्कृतस्य पुण्यस्य त्वर्धं दातुर्न संशयः ७०
ग्रहीताहिगृहीतस्य दानाद्वै तपसा तथा
पापसंशोधनं कुर्यादन्यथा रौरवं व्रजेत् ७१
आत्मवित्तं त्रिधा कुर्याद्धर्मवृद्ध्यात्मभोगतः
नित्यं नैमित्तकं काम्यं कर्म कुर्यात्तु धर्मतः ७२
वित्तस्य वर्धनं कुर्याद्वृद्ध्यंशेन हि साधकः
हितेन मितमे ध्येन भोगं भोगांशतश्चरेत् ७३
कृष्यर्जिते दशांशं हि देयं पापस्य शुद्धये
शेषेण कुर्याद्धर्मादि अन्यथा रौरवं व्रजेत् ७४
अथवा पापबुद्धिः स्यात्क्षयं वा सत्यमेष्यति
वृद्धिवाणिज्यके देयषडंशो हि विचक्षणैः ७५
शुद्धप्रतिग्रहे देयश्चतुर्थांशो द्विजोत्तमैः
अकस्मादुत्थितेऽर्थे हि देयमर्धं द्विजोत्तमैः ७६
असत्प्रतिग्रहसर्वं दुर्दानं सागरे क्षिपेत्
आहूय दानं कर्तव्यमात्मभोगसमृद्धये ७७
पृष्टं सर्वं सदा देयमात्मशक्त्यनुसारतः ७८ब्
जन्मांतरे ऋणी हि स्याददत्ते पृष्टवस्तुनि ७८
परेषां च तथा दोषं न प्रशंसेद्विचक्षणः
विशेषेण तथा ब्रह्मञ्छ्रुतं दृष्टं च नो वदेत् ७९
न वदेत्सर्वजंतूनां हृदि रोषकरं बुधः
संध्ययोरग्निकार्यं च कुर्यादैश्वर्यसिद्धये ८०
अशक्तस्त्वेककाले वा सूर्याग्नी च यथाविधि

तंडुलं धान्यमाज्यं वा फलं कंदं हविस्तथा ८१
स्थालीपाकं तथा कुर्याद्यथान्यायं यथाविधि
प्रधानहोममात्रं वा हव्याभावे समाचरेत् ८२
नित्यसंधानमित्युक्तं तमजस्त्रं विदुर्बुधाः
अथवा जपमात्रं वा सूर्यवंदनमेव च ८३
एवमात्मार्थिनः कुर्युरर्थार्थी च यथाविधि
ब्रह्मयज्ञरता नित्यं देवपूजारतास्तथा ८४
अग्निपूजापरा नित्यं गुरुपूजारतास्तथा
ब्राह्मणानां तृप्तिकराः सर्वे स्वर्गस्य भागिनः ८५
इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां त्रयोदशोऽध्यायः १३

अध्याय १४

ऋषय ऊचुः
अग्नियज्ञं देवयज्ञं ब्रह्मयज्ञं तथैव च
गुरुपूजां ब्रह्मतृप्तिं क्रमेण ब्रूहि नः प्रभो १
सूत उवाच
अग्नौ जुहोति यद्द्रव्यमग्नियज्ञः स उच्यते
ब्रह्मचर्याश्रमस्थानां समिदाधानमेव हि २
समिदग्नौ व्रताद्यं च विशेषयजनादिकम्
प्रथमाश्रमिणामेवं यावदौपासनं द्विजाः ३
आत्मन्यारोपिताग्नीनां वनिनां यतिनां द्विजाः
हितं च मितमेध्यान्नं स्वकाले भोजनं हुतिः ४
औपासनाग्निसंधानं समारभ्य सुरक्षितम्
कुंडे वाप्यथ भांडे वा तदजस्त्रं समीरितम् ५
अग्निमात्मन्यरण्यां वा राजदैववशाद्ध्रुवम्

अग्नित्यागभयादुक्तं समारोपितमुच्यते ६
संपत्करी तथा ज्ञेया सायमग्र्याहुतिर्द्विजाः
आयुष्करीति विज्ञेया प्रातः सूर्याहुतिस्तथा ७
अग्नियज्ञो ह्ययं प्रोक्तो दिवा सूर्यनिवेशनात्
इंद्रादीन्सकलान्देवानुद्दिश्याग्नौ जुहोतियत् ८
देवयज्ञं हि तं विद्यात्स्थालीपाकादिकान्क्रतून्
चौलादिकं तथा ज्ञेयं लौकिकाग्नौ प्रतिष्ठितम् ९
ब्रह्मयज्ञं द्विजः कुर्याद्देवानां तृप्तये सकृत्
ब्रह्मयज्ञ इति प्रोक्तो वेदस्याऽध्ययनं भवेत् १०
नित्यानंतरमासोयं ततस्तु न विधीयते
अनग्नौ देवयजनं शृणुत श्रद्धयादरात् ११
आदिसृष्टौ महादेवः सर्वज्ञः करुणाकरः
सर्वलोकोपकारार्थं वारान्कल्पितवान्प्रभुः १२
संसारवैद्यः सर्वज्ञः सर्वभेषजभेषजम्
आदावारोग्यदं वारं स्ववारं कृतवान्प्रभुः १३
संपत्कारं स्वमायाया वरं च कृतवांस्ततः
जनने दुर्गतिक्रांते कुमारस्य ततः परम् १४
आलस्यदुरितक्रांत्यै वारं कल्पितवान्प्रभुः
रक्षकस्य तथा विष्णोर्लोकानां हितकाम्यया १५
पुष्ट्यर्थं चैव रक्षार्थं वारं कल्पितवान्प्रभुः
आयुष्करं ततो वारमायुषां कर्तुरेव हि १६
त्रैलोक्यसृष्टिकर्त्तुर्हि ब्रह्मणः परमेष्ठिनः
जगदायुष्यसिद्ध्यर्थं वारं कल्पितवान्प्रभुः १७
आदौ त्रैलोक्यवृद्ध्यर्थं पुण्यपापे प्रकल्पिते
तयोः कर्त्रोस्ततो वारमिंद्रस्य च यमस्य च १८

भोगप्रदं मृत्युहरं लोकानां च प्रकल्पितम्
आदित्यादीन्स्वस्वरूपान्सुखदुःखस्य सूचकान् १९
वारेशान्कल्पयित्वादौ ज्योतिश्चक्रेप्रतिष्ठितान्
स्वस्ववारे तु तेषां तु पूजा स्वस्वफलप्रदा २०
आरोग्यं संपदश्चैव व्याधीनां शांतिरेव च
पुष्टिरायुस्तथा भोगो मृतेर्हानिर्यथाक्रमम् २१
वारक्रमफलं प्राहुर्देवप्रीतिपुरःसरम्
अन्येषामपि देवानां पूजायाः फलदः शिवः २२
देवानां प्रीतये पूजापंचधैव प्रकल्पिता
तत्तन्मंत्रजपो होमो दानं चैव तपस्तथा २३
स्थंडिले प्रतिमायां च ह्यग्नौ ब्राह्मणविग्रहे
समाराधनमित्येवं षोडशैरुपचारकैः २४
उत्तरोत्तरवैशिष्ट्यात्पूर्वाभावे तथोत्तरम्
नेत्रयोः शिरसो रोगे तथा कुष्ठस्य शांतये २५
आदित्यं पूजयित्वा तु ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः
दिनं मासं तथा वर्षं वर्षत्रयमथवापि वा २६
प्रारब्धं प्रबलं चेत्स्यान्नश्येद्रोगजरादिकम्
जपाद्यमिष्टदेवस्य वारादीनां फलं विदुः २७
पापशांतिर्विशेषेण ह्यादिवारे निवेदयेत्
आदित्यस्यैव देवानां ब्राह्मणानां विशिष्टदम् २८
सोमवारे च लक्ष्म्यादीन्संपदर्थं यजेद्बुधः
आज्यान्नेन तथा विप्रान्सपत्नीकांश्च भोजयेत् २९
काल्यादीन्भौम वारे तु यजेद्रोगप्रशांतये
माषमुद्गाढकान्नेन ब्रह्मणांश्चैव भोजयेत् ३०
सौम्यवारे तथा विष्णुं दध्यन्नेन यजेद्बुधः

पुत्रमित्रकलत्रादिपुष्टिर्भवति सर्वदा ३१
आयुष्कामो गुरोर्वारि देवानां पुष्टिसिद्धये
उपवीतेन वस्त्रेण क्षीराज्येन यजेद्बुधः ३२
भोगार्थं भृगवारे तु यजेद्देवान्समाहितः
षड्रसोपेतमन्नं च दद्याद्ब्राह्मणतृप्तये ३३
स्त्रीणां च तृप्तये तद्वद्देयं वस्त्रादिकं शुभम्
अपमृत्युहरे मंदे रुद्राद्रींश्च यजेद्बुधः ३४
तिलहोमेन दानेन तिलान्नेन च भोजयेत्
इत्थं यजेच्च विबुधानारोग्यादिफलं लभेत् ३५
देवानां नित्ययजने विशेषयजनेपि च
स्नाने दाने जपे होमे ब्राह्मणानां च तर्पणे ३६
तिथिनक्षत्रयोगे च तत्तद्देवप्रपूजने
आदिवारादिवारेषु सर्वज्ञो जगदीश्वरः ३७
तत्तद्रूपेण सर्वेषामारोग्यादिफलप्रदः
देशकालानुसारेण तथा पात्रानुसारतः ३८
द्रव्यश्रद्धानुसारेण तथा लोकानुसारतः ३९ब्
तारतम्यक्रमाद्देवस्त्वारोग्यादीन्प्रयच्छति ३९
शुभादावशुभांते च जन्मर्क्षेषु गृहे गृही
आरोग्यादिसमृद्ध्यर्थमादित्यादीन्ग्रहान्यजेत् ४०
तस्माद्वै देवयजनं सर्वाभीष्टफलप्रदम्
समंत्रकं ब्राह्मणानामन्येषां चैव तांत्रिकम् ४१
यथाशक्त्यानुरूपेण कर्तव्यं सर्वदा नरैः
सप्तस्वपि च वारेषु नरैः शुभफलेप्सुभिः ४२
दरिद्रस्तपसा देवान्यजेदाढ्यो धनेन हि
पुनश्चैवंविधं धर्मं कुरुते श्रद्धया सह ४३

पुनश्च भोगान्विविधान्भुक्त्वा भूमौ प्रजायते
छायां जलाशयं ब्रह्मप्रतिष्ठां धर्मसंचयम् ४४
सर्वं च वित्तवान्कुर्यात्सदा भोगप्रसिद्धये
कालाच्च पुण्यपाकेन ज्ञानसिद्धिः प्रजायते ४५
य इमं शृणुतेऽध्यायं पठते वा नरो द्विजाः
श्रवणस्योपकर्त्ता च देवयज्ञफलं लभेत् ४६
इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां चतुर्दशोऽध्यायः १४

अध्याय १५

ऋषय ऊचुः
देशादीन्क्रमशो ब्रूहि सूत सर्वार्थवित्तम्
सूत उवाच
शुद्धं गृहं समफलं देवयज्ञादिकर्मसु १
ततो दशगुणं गोष्ठं जलतीरं ततो दश
ततो दशगुणं बिल्वतुलस्यश्वत्थमूलकम् २
ततो देवालयं विद्यात्तीर्थतीरं ततो दश
ततो दशगुणं नद्यास्तीर्थनद्यास्ततो दश ३
सप्तगंगानदीतीरं तस्या दशगुणं भवेत्
गंगा गोदावरी चैव कावेरी ताम्रपर्णिका ४
सिंधुश्च सरयू रेवा सप्तगंगाः प्रकीर्तिताः
ततोऽब्धितीरं दश च पर्वताग्रे ततो दश ५
सर्वस्मादधिकं ज्ञेयं यत्र वा रोचते मनः
कृते पूर्णफलं ज्ञेयं यज्ञदानादिकं तथा ६
त्रेतायुगे त्रिपादं च द्वापरेऽर्धं सदा स्मृतम्
कलौ पादं तु विज्ञेयं तत्पादोनं ततोर्द्धके ७

शुद्धात्मनः शुद्धदिनं पुण्यं समफलं विदुः
तस्माद्दशगुणं ज्ञेयं रविसंक्रमणे बुधाः ८
विषुवे तद्दशगुणमयने तद्दश स्मृतम्
तद्दश मृगसंक्रांतौ तच्चंद्रग्रहणे दश ९
ततश्च सूर्यग्रहणे पूर्णकालोत्तमे विदुः
जगद्रूपस्य सूर्यस्य विषयोगाच्च रोगदम् १०
अतस्तद्विषशांत्यर्थं स्नानदानजपांश्चरेत्
विषशांत्यर्थकालत्वात्स कालः पुण्यदः स्मृतः ११
जन्मर्क्षे च व्रतांते च सूर्यरागोपमं विदुः
महतां संगकालश्च कोटयर्कग्रहणं विदुः १२
तपोनिष्ठा ज्ञाननिष्ठा योगिनो यतयस्तथा
पूजायाः पात्रमेते हि पापसंक्षयकारणम् १३
चतुर्विंशतिलक्षं वा गायत्र्या जपसंयुतः
ब्राह्मणस्तु भवेत्पात्रं संपूर्णफलभोगदम् १४
पतनात्त्रायत इति पात्रं शास्त्रे प्रयुज्यते
दातुश्च पातकात्त्राणात्पात्रमित्यभिधीयते १५
गायकं त्रायते पातद्गायत्रीत्युच्यते हि सा
यथाऽर्थहिनो लोकेऽस्मिन्परस्यार्थं न यच्छति १६
अर्थवानिह यो लोके परस्यार्थं प्रयच्छति
स्वयं शुद्धो हि पूतात्मा नरान्संत्रातुमर्हति १७
गायत्रीजपशुद्धो हि शुद्धब्राह्मण उच्यते
तस्माद्दाने जपे होमे पूजायां सर्वकर्मणि १८
दानं कर्तुं तथा त्रातुं पात्रं तु ब्राह्मणोर्हति
अन्नस्य क्षुधितं पात्रं नारीनरमयात्मकम् १९
ब्राह्मणं श्रेष्ठमाहूय यत्काले सुसमाहितम्

तदर्थं शब्दमर्थं वा सद्बोधकमभीष्टदम् २०
इच्छावतः प्रदानं च संपूर्णफलदं विदुः
यत्प्रश्नानंतरं दत्तं तदर्धं फलदं विदुः २१
यत्सेवकाय दत्तं स्यात्तत्पादफलदं विदुः
जातिमात्रस्य विप्रस्य दीनवृत्तेर्द्विजर्षभाः २२
दत्तमर्थं हि भोगाय भूर्लोकेदशवार्षिकम्
वेदयुक्तस्य विप्रस्य स्वर्गे हि दशवार्षिकम् २३
गायत्रीजपयुक्तस्य सत्ये हि दशवार्षिकम्
विष्णुभक्तस्य विप्रस्य दत्तं वैकुंठदं विदुः २४
शिवभक्तस्य विप्रस्य दत्तं कैलासदं विदुः
तत्तल्लोकोपभोगार्थं सर्वेषां दानमिष्यते २५
दशांगमन्नं विप्रस्य भानुवारे ददन्नरः
परजन्मनि चारोग्यं दशवर्षं समश्नुते २६
बहुमानमथाह्वानमभ्यंगं पादसेवनम्
वासो गंधाद्यर्चनं च घृतापूपरसोत्तरम् २७
षड्रसं व्यंजनं चैव तांबूलं दक्षिणोत्तरम्
नमश्चानुगमश्चैव स्वन्नदानं दशांगकम् २८
दशांगमन्नं विप्रेभ्यो दशभ्यो वै ददन्नरः
अर्कवारे तथाऽऽरोग्यं शतवर्षं समश्नुते २९
सोमवारादिवारेषु तत्तद्वारगुणं फलम्
अन्नदानस्य विज्ञेयं भूर्लोके परजन्मनि ३०
सप्तस्वपि च वारेषु दशभ्यश्च दशांगकम्
अन्नं दत्त्वा शतं वर्षमारोग्यादिकमश्नुते ३१
एवं शतेभ्यो विप्रेभ्यो भानुवारे ददन्नरः
सहस्रवर्षमारोग्यं शर्वलोके समश्नुते ३२

सहस्रेभ्यस्तथा दत्त्वाऽयुतवर्षं समश्नुते
एवं सोमादिवारेषु विज्ञेयं हि विपश्चिता ३३
भानुवारे सहस्राणां गायत्रीपूतचेतसाम्
अन्नं दत्त्वा सत्यलोके ह्यारोग्यादि समश्नुते ३४
अयुतानां तथा दत्त्वा विष्णुलोके समश्नुते
अन्नं दत्त्वा तु लक्षाणां रुद्रलोके समश्नुते ३५
बालानां ब्रह्मबुद्धया हि देयं विद्यार्थिभिर्नरैः
यूनां च विष्णुबुद्धया हि पुत्रकामार्थिभिर्नरैः ३६
वृद्धानां रुद्रबुद्धया हि देयं ज्ञानार्थिभिर्नरैः
बालस्त्रीभारतीबुद्धया बुद्धिकामैर्नरोत्तमैः ३७
लक्ष्मीबुद्धया युवस्त्रीषु भोगकामैर्नरोत्तमैः
वृद्धासु पार्वतीबुद्धया देयमात्मार्थिभिर्जनैः ३८
शिलवृत्त्योञ्छवृत्त्या च गुरुदक्षिणयार्जितम्
शुद्धद्रव्यमिति प्राहुस्तत्पूर्णफलदं विदुः ३९
शुक्लप्रतिग्रहाद्दत्तं मध्यमं द्रव्यमुच्यते
कृषिवाणिज्यकोपेतमधमं द्रव्यमुच्यते ४०
क्षत्रियाणां विशां चैव शौर्यवाणिज्यकार्जितम्
उत्तमं द्रव्यमित्याहुः शूद्राणां भृतकार्जितम् ४१
स्त्रीणां धर्मार्थिनां द्रव्यं पैतृकं भर्तृकं तथा
गवादीनां द्वादशीनां चैत्रादिषु यथाक्रमम् ४२
संभूय वा पुण्यकाले दद्यादिष्टसमृद्धये
गोभूतिलहिरण्याज्यवासोधान्यगुडानि च ४३
रौप्यं लवणकूष्मांडे कन्याद्वादशकं तथा
गोदानाद्दत्तगव्येन गोमयेनोपकारिणा ४४
धनधान्याद्याश्रितानां दुरितानां निवारणम्

जलस्नेहाद्याश्रितानां दुरितानां तु गोजलैः ४५
कायिकादित्राणां तु क्षीरदध्याज्यकैस्तथा
तथा तेषां च पुष्टिश्च विज्ञेया हि विपश्चिता ४६
भूदानं तु प्रतिष्ठार्थमिह चाऽमुत्र च द्विजाः
तिलदानं बलार्थं हि सदा मृत्युजयं विदुः ४७
हिरण्यं जाठराग्नेस्तु वृद्धिदं वीर्यदं तथा
आज्यं पुष्टिकरं विद्याद्वस्त्रमायुष्करं विदुः ४८
धान्यमन्नं समृद्ध्यर्थं मधुराहारदं गुडम्
रौप्यं रेतोभिवृद्ध्यर्थं षड्रसार्थं तु लावणम् ४९
सर्वं सर्वसमृद्ध्यर्थं कूष्मांडं पुष्टिदं विदुः
प्राप्तिदं सर्वभोगानामिह चाऽमुत्र च द्विजाः ५०
यावज्जीवनमुक्तं हि कन्यादानं तु भोगदम्
पनसाम्रकपित्थानां वृक्षाणां फलमेव च ५१
कदल्याद्यौषधीनां च फलं गुल्मोद्भवं तथा
माषादीनां च मुद्गानां फलं शाकादिकं तथा ५२
मरीचिसर्षपाद्यानां शाकोपकरणं तथा
यदृतौ यत्फलं सिद्धं तद्देयं हि विपश्चिता ५३
श्रोत्रादींद्रियतृप्तिश्च सदा देया विपश्चिता
शब्दादिदशभोगार्थं दिगादीनां च तुष्टिदा ५४
वेदशास्त्रं समादाय बुद्ध्वा गुरुमुखात्स्वयम्
कर्मणां फलमस्तीति बुद्धिरास्तिक्यमुच्यते ५५
बंधुराजभयाद्बुद्धिश्रद्धा सा च कनीयसी
सर्वाभावे दरिद्रस्तु वाचा वा कर्मणा यजेत् ५६
वाचिकं यजनं विद्यान्मंत्रस्तोत्रजपादिकम्
तीर्थयात्राव्रताद्यं हि कायिकं यजनं विदुः ५७

येन केनाप्युपायेन ह्यल्पं वा यदि वा बहु
देवतार्पणबुद्धया च कृतं भोगाय कल्पते ५८
तपश्चर्या च दानं च कर्तव्यमुभयं सदा
प्रतिश्रयं प्रदातव्यं स्ववर्णगुणशोभितम् ५९
देवानां तृप्तयेऽत्यर्थं सर्वभोगप्रदं बुधैः
इहाऽमुत्रोत्तमं जन्मसदाभोगं लभेद्बुधः
ईश्वरार्पणबुद्धया हि कृत्वा मोक्षफलं लभेत् ६०
य इमं पठतेऽध्यायं यः शृणोति सदा नरः
तस्य वैधर्मबुद्धिश्च ज्ञानसिद्धिः प्रजायते ६१
इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां पंचदशोध्यायः १५

अध्याय १६

ऋषय ऊचुः
पार्थिवप्रतिमापूजाविधानं ब्रूहि सत्तम
येन पूजाविधानेन सर्वाभिष्टमवाप्यते १
सूत उवाच
सुसाधुपृष्टं युष्माभिः सदा सर्वार्थदायकम्
सद्यो दुःखस्य शमनं शृणुत प्रब्रवीमि वः २
अपमृत्युहरं कालमृत्योश्चापि विनाशनम्
सद्यः कलत्रपुत्रादिधनधान्यप्रदं द्विजाः ३
अन्नादिभोज्यं वस्त्रादिसर्वमुत्पद्यते यतः
ततो मृदादिप्रतिमापूजाभीष्टप्रदा भुवि ४
पुरुषाणां च नारीणामधिकारोत्र निश्चितम्
नद्यां तडागे कूपे वा जलांतर्मृदमाहरेत् ५
संशोध्य गंधचूर्णेन पेषयित्वा सुमंडपे

हस्तेन प्रतिमां कुर्यात्क्षीरेण च सुसंस्कृताम् ६
अंगप्रत्यंगकोपेतामायुधैश्च समन्विताम्
पद्मासनस्थितां कृत्वा पूजयेदादरेण हि ७
विघ्नेशादित्यविष्णूनामंबायाश्च शिवस्य च
शिवस्यशिवलिंगं च सर्वदा पूजयेद्द्विज ८
षोडशैरुपचारैश्च कुर्यात्तत्फलसिद्धये
पुष्पेण प्रोक्षणं कुर्यादभिषेकं समंत्रकम् ९
शाल्यन्नेनैव नैवेद्यं सर्वं कुडवमानतः
गृहे तु कुडवं ज्ञेयं मानुषे प्रस्थमिष्यते १०
दैवे प्रस्थत्रयं योग्यं स्वयंभोः प्रस्थपंचकम्
एवं पूर्णफलं विद्यादधिकं वै द्वयं त्रयम् ११
सहस्रपूजया सत्यं सत्यलोकं लभेद्द्विजः
द्वादशांगुलमायामं द्विगुणं च ततोऽधिकम् १२
प्रमाणमंगुलस्यैकं तदूर्ध्वं पंचकत्रयम्
अयोदारुकृतं पात्रं शिवमित्युच्यते बुधैः १३
तदष्टभागः प्रस्थः स्यात्तच्चतुःकुडवं मतम्
दशप्रस्थं शतप्रस्थं सहस्रप्रस्थमेव च १४
जलतैलादिगंधानां यथायोग्यं च मानतः
मानुषार्षस्वयंभूनां महापूजेति कथ्यते १५
अभिषेकादात्मशुद्धिर्गंधात्पुण्यमवाप्यते
आयुस्तृप्तिश्च नैवेद्याद्धूपादर्थमवाप्यते १६
दीपाज्ज्ञानमवाप्नोति तांबूलाद्भोगमाप्नुयात्
तस्मात्स्नानादिकं षट्कं प्रयत्नेन प्रसाधयेत् १७
नमस्कारो जपश्चैव सर्वाभीष्टप्रदावुभौ
पूजान्ते च सदाकार्यौ भोगमोक्षार्थिभिर्नरैः १८

संपूज्य मनसा पूर्वं कुर्यात्तत्तत्सदा नरः
देवानां पूजया चैव तत्तल्लोकमवाप्नुयात् १९
तदवांतरलोके च यथेष्टं भोग्यमाप्यते
तद्विशेषान्प्रवक्ष्यामि शृणुत श्रद्धया द्विजाः २०
विघ्नेशपूजया सम्यग्भूर्लोकेऽभीष्टमाप्नुयात्
शुक्रवारे चतुर्थ्यां च सिते श्रावणभाद्रके २१
भिषगृक्षे धनुर्मासे विघ्नेशं विधिवद्यजेत्
शतं पूजासहस्रं वा तत्संख्याकदिनैर्व्रजेत् २२
देवाग्निश्रद्धया नित्यं पुत्रदं चेष्टदं नृणाम्
सर्वपापप्रशमनं तत्तद्दुरितनाशनम् २३
वारपूजांशिवादीनामात्मशुद्धिप्रदां विदुः
तिथिनक्षत्रयोगानामाधारं सार्वकामिकम् २४
तथा बृद्धिक्षयाभावात्पूर्णब्रह्मात्मकं विदुः
उदयादुदयं वारो ब्रह्मप्रभृति कर्मणाम् २५
तिथ्यादौ देवपूजा हि पूर्णभोगप्रदा नृणाम्
पूर्वभागः पितृ-णां तु निशि युक्तः प्रशस्यते २६
परभागस्तु देवानां दिवा युक्तः प्रशस्यते
उदयव्यापिनी ग्राह्या मध्याह्ने यदि सा तिथिः २७
देवकार्ये तथा ग्राह्यास्थिति ऋक्षादिकाः शुभाः
सम्यग्विचार्य वारादीन्कुर्यात्पूजाजपादिकम् २८
पूजार्यते ह्यनेनेति वेदेष्वर्थस्य योजना
पूर्णभोगफलसिद्धिश्च जायते तेन कर्मणा २९
मनोभावांस्तथा ज्ञानमिष्टभोगार्थयोजनात्
पूजाशब्दर्थ एवं हि विश्रुतो लोकवेदयोः ३०
नित्यनैमित्तिकं कालात्सद्यः काम्ये स्वनुष्ठिते

नित्यं मासं च पक्षं च वर्षं चैव यथाक्रमम् ३१
तत्तत्कर्मफलप्राप्तिस्तादृक्पापक्षयः क्रमात्
महागणपतेः पूजा चतुर्थ्यां कृष्णपक्षके ३२
पक्षपापक्षयकरी पक्षभोगफलप्रदा
चैत्रे चतुर्थ्यां पूजा च कृता मासफलप्रदा ३३
वर्षभोगप्रदा ज्ञेया कृता वै सिंहभाद्रके
श्रवणयादित्यवारे च सप्तम्यां हस्तभे दिने ३४
माघशुक्ले च सप्तम्यामादित्ययजनं चरेत्
ज्येष्ठभाद्रकसौम्ये च द्वादश्यां श्रवर्णक्षके ३५
द्वादश्यां विष्णुयजनमिष्टंसंपत्करं विदुः
श्रावणे विष्णुयजनमिष्टारोग्यप्रदं भवेत् ३६
गवादीन्द्वादशानर्थान्सांगान्दत्वा तु यत्फलम्
तत्फलं समवाप्नोति द्वादश्यां विष्णुतर्पणात् ३७
द्वादश्यां द्वादशान्विप्रान्विष्णोर्द्वादशनामतः
षोडशैरुपचारैश्च यजेत्तत्प्रीतिमाप्नुयात् ३८
एवं च सर्वदेवानां तत्तद्द्वादशनामकैः
द्वादशब्रह्मयजनं तत्तत्प्रीतिकरं भवेत् ३९
कर्कटे सोमवारे च नवम्यां मृगशीर्षके
अंबां यजेद्भूतिकामः सर्वभोगफलप्रदाम् ४०
आश्वयुक्छुक्लनवमी सर्वाभीष्टफलप्रदा
आदिवारे चतुर्दश्यां कृष्णपक्षे विशेषतः ४१
आर्द्रायां च महार्द्रायां शिवपूजा विशिष्यते
माघकृष्णचतुर्दश्यां सर्वाभीष्टफलप्रदा ४२
आयुष्करी मृत्युहरा सर्वसिद्धिकरी नृणाम्
ज्येष्ठमासे महार्द्रायां चतुर्दशीदिनेपि च ४३

मार्गशीर्षार्द्रकायां वा षोडशैरुपचारकैः
तत्तन्मूर्तिशिवं पूज्य तस्य वै पाददर्शनम् ४४
शिवस्य यजनं ज्ञेयं भोगमोक्षप्रदं नृणाम्
वारादिदेवयजनं कार्तिके हि विशिष्यते ४५
कार्तिके मासि संप्राप्ते सर्वान्देवान्यजेद्बुधः
दानेन तपसा होमैर्जपेन नियमेन च ४६
षोडशैरुपचारैश्च प्रतिमा विप्रमंत्रकैः
ब्राह्मणानां भोजनेन निष्कामार्तिकरो भवेत् ४७
कार्तिके देवयजनं सर्वभोगप्रदं भवेत्
व्याधीनां हरणं चैव भवेद्भूतग्रहक्षयः ४८
कार्तिकादित्यवारेषु नृणामादित्यपूजनात्
तैलकार्पासदानात्तु भवेत्कुष्ठादिसंक्षयः ४९
हरीतकीमरीचीनां वस्त्रक्षीरादिदानतः
ब्रह्मप्रतिष्ठया चैव क्षयरोगक्षयो भवेत् ५०
दीपसर्षपदानाच्च अपस्मारक्षयो भवेत्
कृत्तिकासोमवारेषु शिवस्य यजनं नृणाम् ५१
महादारिद्र्यशमनं सर्वसंपत्करं भवेत्
गृहक्षेत्रादिदानाच्च गृहोपकरणादिना ५२
कृत्तिकाभौमवारेषु स्कंदस्य यजनान्नृणाम्
दीपघंटादिदानाद्वै वाक्सिद्धिरचिराद्भवेत् ५३
कृत्तिकासौम्यवारेषु विष्णोर्वै यजनं नृणाम्
दध्योदनस्य दानं च सत्संतानकरं भवेत् ५४
कृतिकागुरुवारेषु ब्रह्मणो यजनाद्धनैः
मधुस्वर्णाज्यदानेन भोगवृद्धिर्भवेन्नृणाम् ५५
कृत्तिकाशुक्रवारेषु गजकोमेडयाजनात् १

गंधपुष्पान्नदानेन भोग्यवृद्धिर्भवेन्नृणाम् ५६
वंध्या सुपुत्रं लभते स्वर्णरौप्यादिदानतः
कृत्तिकाशनिवारेषु दिक्पालानां च वंदनम् ५७
दिग्गजानां च नागानां सेतुपानां च पूजनम्
त्र्यंबकस्य च रुद्रस्य विष्णोः पापहरस्य च ५८
ज्ञानदं ब्रह्मणश्चैव धन्वंतर्यश्विनोस्तथा
रोगापमृत्युहरणं तत्कालव्याधिशांतिदम् ५९
लवणायसतैलानां माषादीनां च दानतः
त्रिकटुफलगंधानां जलादीनां च दानतः ६०
द्रवाणां कठिनानां च प्रस्थेन पलमानतः
स्वर्गप्राप्तिर्धनुर्मासे ह्युषःकाले च पूजनम् ६१
शिवादीनां च सर्वेषां क्रमाद्वै सर्वसिद्धये
शाल्यन्नस्य हविष्यस्य नैवेद्यं शस्तमुच्यते ६२
विविधान्नस्य नैवेद्यं धनुर्मासे विशिष्यते
मार्गशीर्षेऽन्नदस्यैव सर्वमिष्टफलं भवेत् ६३
पापक्षयं चेष्टसिद्धिं चारोग्यं धर्ममेव च
सम्यग्वेदपरिज्ञानं सदनुष्ठानमेव च ६४
इहामुत्र महाभोगानंते योगं च शाश्वतम्
वेदांतज्ञानसिद्धिं च मार्गशीर्षान्नदो लभेत् ६५
मार्गशीर्षे ह्युषःकाले दिनत्रयमथापि वा
यजेद्देवान्भोगकामो नाधनुर्मासिको भवेत् ६६
यावत्संगवकालं तु धनुर्मासो विधीयते
धनुर्मासे निराहारो मासमात्रं जितेंद्रियः ६७
आमध्याह्नजपेद्विप्रो गायत्रीं वेदमातरम्
पंचाक्षरादिकान्मंत्रान्पश्चादासप्तिकं जपेत् ६८

ज्ञानं लब्ध्वा च देहांते विप्रो मुक्तिमवाप्नुयात्
अन्येषां नरनारीणां त्रिःस्नानेन जपेन च ६९
सदा पंचाक्षरस्यैव विशुद्धं ज्ञानमाप्यते
इष्टमन्त्रान्सदाजप्त्वा महापापक्षयं लभेत् ७०
धनुर्मासे विशेषेण महानैवेद्यमाचरेत्
शालितंडुलभारेण मरीचप्रस्थकेन च ७१
गणनाद्द्वादशं सर्वं मध्वाज्यकुडवेन हि
द्रोणयुक्तेन मुद्गेन द्वादशव्यंजनेन च ७२
घृतपक्वैरपूपैश्च मोदकैः शालिकादिभिः
द्वादशैश्च दधिक्षीरैर्द्वादशप्रस्थकेन च ७३
नारिकेलफलादीनां तथा गणनया सह
द्वादशक्रमुकैर्युक्तं षट्त्रिंशत्पत्रकैर्युतम् ७४
कर्पूरखुरचूर्णेन पंचसौगंधिकैर्युतम्
तांबूलयुक्तं तु यदा महानैवेद्यलक्षणम् ७५
महानैवेद्यमेतद्वै देवतार्पणपूर्वकम्
वर्णानुक्रमपूर्वेण तद्भक्तेभ्यः प्रदापयेत् ७६
एवं चौदननैवेद्याद्भूमौ राष्ट्रपतिर्भवेत्
महानैवेद्यदानेन नरः स्वर्गमवाप्नुयात् ७७
महानैवेद्यदानेन सहस्रेण द्विजर्षभाः
सत्यलोके च तल्लोके पूर्णमायुरवाप्नुयात् ७८
सहस्राणां च त्रिंशत्या महानैवेद्यदानतः
तदूर्ध्वलोकमाप्यैव न पुनर्जन्मभाग्भवेत् ७९
सहस्राणां च षट्त्रिंशज्जन्म नैवेद्यमीरितम्
तावन्नैवेद्यदानं तु महापूर्णं तदुच्यते ८०
महापूर्णस्य नैवेद्यं जन्मनैवेद्यमिष्यते

जन्मनैवेद्यदानेन पुनर्जन्म न विद्यते ८१
ऊर्जे मासि दिने पुण्ये जन्म नैवेद्यमाचरेत्
संक्रांतिपातजन्मर्क्षपौर्णमास्यादिसंयुते ८२
अब्दजन्मदिने कुर्याज्जन्मनैवेद्यमुत्तमम्
मासांतरेषु जन्मर्क्षपूर्णयोगदिनेपि च ८३
मेलने च शनैर्वापि तावत्साहस्रमाचरेत्
जन्मनैवेद्यदानेन जन्मार्पणफलं लभेत् ८४
जन्मार्पणाच्छिवः प्रीतिः स्वसायुज्यं ददाति हि
इदं तज्जन्मनैवेद्यं शिवस्यैव प्रदापयेत् ८५
योनिलिंगस्वरूपेण शिवो जन्मनिरूपकः
तस्माज्जन्मनिवृत्त्यर्थं जन्म पूजा शिवस्य हि ८६
बिंदुनादात्मकं सर्वं जगत्स्थावरजंगमम्
बिंदुः शक्तिः शिवो नादः शिवशक्त्यात्मकं जगत् ८७
नादाधारमिदं बिंदुर्बिंद्वाधारमिदं जगत्
जगदाधारभूतौ हि बिंदुनादौ व्यवस्थितौ ८८
विन्दुनादयुतं सर्वं सकलीकरणं भवेत्
सकलीकरणाज्जन्मजगत्प्राप्नोत्यसंशयः ८९
बिंदुनादात्मकं लिंगं जगत्कारणमुच्यते
बिंदुर्देवीशिवो नादः शिवलिंगं तु कथ्यते ९०
तस्माज्जन्मनिवृत्त्यर्थं शिवलिंगं प्रपूजयेत्
माता देवी बिंदुरूपा नादरूपः शिवः पिता ९१
पूजिताभ्यां पितृभ्यां तु परमानंद एव हि
परमानंदलाभार्थं शिवलिंगं प्रपूजयेत् ९२
सा देवी जगतां माता स शिवो जगतः पिता ९३ब्
पित्रोः शुश्रूषके नित्यं कृपाधिक्यं हि वर्धते ९३

कृपयांतर्गतैश्वर्यं पूजकस्य ददाति हि
तस्मादंतर्गतानंदलाभार्थं मुनिपुंगवाः ९४
पितृमातृस्वरूपेण शिवलिंगं प्रपूजयेत्
भर्गः पुरुषरूपो हि भर्गाप्रकृतिरुच्यते ९५
अव्यक्तांतरधिष्ठानं गर्भः पुरुष उच्यते
सुव्यक्तांतरधिष्ठानं गर्भः प्रकृतिरुच्यते ९६
पुरुषत्वादिगर्भो हि गर्भवाञ्जनको यतः
पुरुषात्प्रकृतो युक्तं प्रथमं जन्म कथ्यते ९७
प्रकृतेर्व्यक्ततां यातं द्वितीयं जन्म कथ्यते
जन्म जंतुर्मृत्युजन्म पुरुषात्प्रतिपद्यते ९८
अन्यतो भाव्यतेऽवश्यं मायया जन्म कथ्यते
जीर्यते जन्मकालाद्यत्तस्माज्जीव इति स्मृतः ९९
जन्यते तन्यते पाशैर्जीवशब्दार्थ एव हि १००ब्
जन्मपाशनिवृत्त्यर्थं जन्मलिंगं प्रपूजयेत् १००
भं वृद्धिं गच्छतीत्यर्थाद्भगः प्रकृतिरुच्यते १०१ब्
प्राकृतैः शब्दमात्राद्यैः प्राकृतेंद्रियभोजनात् १०१
भगस्येदं भोगमिति शब्दार्थो मुख्यतः श्रुतः १०२ब्
मुख्यो भगस्तु प्रकृतिर्भगवाञ्छिव उच्यते १०२
भगवान्भोगदाता हि नाऽन्यो भोगप्रदायकः १०३ब्
भगस्वामी च भगवान्भर्ग इत्युच्यते बुधैः १०३
भगेन सहितं लिंगं भगंलिंगेन संयुतम् १०४ब्
इहामुत्र च भोगार्थं नित्यभोगार्थमेव च १०४
भगवंतं महादेवं शिवलिंगं प्रपूजयेत् १०५ब्
लोकप्रसविता सूर्यस्तच्चिह्नं प्रसवाद्भवेत् १०५
लिंगेप्रसूतिकर्तारं लिंगिनं पुरुषो यजेत् १०६ब्

लिंगार्थगमकं चिह्नं लिंगमित्यभिधीयते १०६
लिंगमर्थं हि पुरुषं शिवं गमयतीत्यदः १०७ब्
शिवशक्त्योश्च चिह्नस्य मेलनं लिंगमुच्यते १०७
स्वचिह्नपूजनात्प्रीतश्चिह्नकार्यं न वीयते १०८ब्
चिह्नकार्यं तु जन्मादिजन्माद्यं विनिवर्तते १०८
प्राकृतैः पुरुषैश्चापि बाह्याभ्यंतरसंभवैः १०९ब्
षोडशैरुपचारैश्च शिवलिंगं प्रपूजयेत् १०९
एवमादित्यवारे हि पूजा जन्मनिवर्तिका ११०ब्
आदिवारे महालिंगं प्रणवेनैव पूजयेत् ११०
आदिवारे पंचगव्यैरभिषेको विशिष्यते १११ब्
गोमयं गोजलं क्षीरं दध्याज्यं पंचगव्यकम् १११
क्षीराद्यं च पृथक्च्चैव मधुना चेक्षुसारकैः ११२ब्
गव्यक्षीरान्ननैवेद्यं प्रणवेनैव कारयेत् ११२
प्रणवं ध्वनिलिंगं तु नादलिंगं स्वयंभुवः ११३ब्
बिंदुलिंगं तु यंत्रं स्यान्मकारं तु प्रतिष्ठितम् ११३
उकारं चरलिंगं स्यादकारं गुरुविग्रहम् ११४ब्
षड्लिंगं पूजया नित्यं जीवन्मुक्तो न संशयः ११४
शिवस्य भक्त्या पूजा हि जन्ममुक्तिकरी नृणाम् ११५ब्
रुद्राक्षधारणात्पादमर्धं वैभूतिधारणात् ११५
त्रिपादं मंत्रजाप्याच्च पूजया पूर्णभक्तिमान् ११६ब्
शिवलिंगं च भक्तं च पूज्य मोक्षं लभेन्नरः ११६
य इमं पठतेऽध्यायं शृणुयाद्वा समाहितः ११७ब्
तस्यैव शिवभक्तिश्च वर्धते सुदृढा द्विजाः ११७

इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां षोडशोऽध्यायः १६

अध्याय १७

ऋषय ऊचुः
प्रणवस्य च माहात्म्यं षड्लिंगस्य महामुने
शिवभक्तस्य पूजां च क्रमशो ब्रूहि नःप्रभो १
सूत उवाच
तपोधनैर्भवद्भिश्च सम्यक्प्रश्नस्त्वयं कृतः
अस्योत्तरं महादेवो जानाति स्म न चापरः २
अथापि वक्ष्ये तमहं शिवस्य कृपयैव हि
शिवोऽस्माकं च युष्माकं रक्षां गृह्णातु भूरिशः ३
प्रो हि प्रकृतिजातस्य संसारस्य महोदधेः
नवं नावांतरमिति प्रणवं वै विदुर्बुधाः ४
प्रः प्रपंचो न नास्तिवो युष्माकं प्रणवं विदुः
प्रकर्षेण नयेद्यस्मान्मोक्षं वः प्रणवं विदुः ५
स्वजापकानां योगिनां स्वमंत्रपूजकस्य च
सर्वकर्मक्षयं कृत्वा दिव्यज्ञानं तु नूतनम् ६
तमेव मायारहितं नूतनं परिचक्षते
प्रकर्षेण महात्मानं नवं शुद्धस्वरूपकम् ७
नूतनं वै करोतीति प्रणवं तं विदुर्बुधाः
प्रणवं द्विविधं प्रोक्तं सूक्ष्मस्थूलविभेदतः ८
सूक्ष्ममेकाक्षरं विद्यात्स्थूलं पंचाक्षरं विदुः
सूक्ष्ममव्यक्तपंचार्णं सुव्यक्तार्णं तथेतरत् ९
जीवन्मुक्तस्य सूक्ष्मं हि सर्वसारं हि तस्य हि
मंत्रेणार्थानुसंधानं स्वदेहविलयावधि १०
स्वदेहेगलिते पूर्णं शिवं प्राप्नोति निश्चयः
केवलं मंत्रजापी तु योगं प्राप्नोति निश्चयः ११

षट्त्रिंशत्कोटिजापी तु निश्चयं योगमाप्नुयात्
सूक्ष्मं च द्विविधं ज्ञेयं ह्रस्वदीर्घविभेदतः १२
अकारश्च उकारश्च मकारश्च ततः परम्
बिंदुनादयुतं तद्धि शब्दकालकलान्वितम् १३
दीर्घप्रणवमेवं हि योगिनामेव हृद्गतम्
मकारं तंत्रितत्त्वं हि ह्रस्वप्रणव उच्यते १४
शिवः शक्तिस्तयोरैक्यं मकारं तु त्रिकात्मकम्
ह्रस्वमेवं हि जाप्यं स्यात्सर्वपापक्षयैषिणाम् १५
भूवायुकनकार्णोद्यो:शब्दाद्याश्च तथा दश
आशान्वयेदशपुनः प्रवृत्ता इति कथ्यते १६
ह्रस्वमेव प्रवृत्तानां निवृत्तानां तु दीर्घकम्
व्याहृत्यादौ च मंत्रादौ कामं शब्दकलायुतम् १७
वेदादौ च प्रयोज्यं स्याद्वंदने संध्ययोरपि
नवकौटिजपाञ्जप्त्वा संशुद्धः पुरुषो भवेत् १८
पुनश्च नवकोट्या तु पृथिवीजयमाप्नुयात्
पुनश्च नवकोट्या तु ह्यपांजयमवाप्नुयात् १९
पुनश्च नवकोट्या तु तेजसांजयमाप्नुयात्
पुनश्च नवकोट्या तु वायोर्जयमवाप्नुयात्
आकाशजयमाप्नोति नवकोटिजपेन वै २०
गंधादीनांक्रमेणैवनवकोटिजपेणवै
अहंकारस्य च पुनर्नव कोटिजपेन वै २१
सहस्रमंत्रजप्तेन नित्यशुद्धो भवेत्पुमान्
ततः परं स्वसिद्ध्यर्थं जपो भवति हि द्विजाः २२
एवमष्टोत्तरशतकोटिजप्तेन वै पुनः
प्रणवेन प्रबुद्धस्तु शुद्धयोगमवाप्नुयात् २३

शुद्धयोगेन संयुक्तो जीवन्मुक्तो न संशयः
सदा जपन्सदाध्यायञ्छिवं प्रणवरूपिणम् २४
समाधिस्थो महायोगीशिव एव न संशयः
ऋषिच्छंदोदेवतादि न्यस्य देहेपुनर्जपेत् २५
प्रणवं मातृकायुक्तं देहे न्यस्य ऋषिर्भवेत्
दशमातृषडध्वादि सर्वं न्यासफलं लभेत् २६
प्रवृत्तानां च मिश्राणां स्थूलप्रणवमिष्यते
क्रियातपोजपैर्युक्तास्त्रिविधाः शिवयोगिनः २७
धनादिविभवैश्चैव कराद्यंगैर्नमादिभिः
क्रियया पूजया युक्तः क्रियायोगीति कथ्यते २८
पूजायुक्तश्च मितभुग्बाह्येंद्रियजयान्वितः
परद्रोहादिरहितस्तपोयोगीति कथ्यते २९
एतैर्युक्तः सदा क्रुद्धः सर्वकामादिवर्जितः
सदा जपपरः शांतोजपयोगीति तं विदुः ३०
उपचारैः षोडशभिः पूजया शिवयोगिनाम्
सालोक्यादिक्रमेणैव शुद्धो मुक्तिं लभेन्नरः ३१
जपयोगमथो वक्ष्ये गदतः शृणुत द्विजाः
तपःकर्तुर्जपः प्रोक्तो यज्ञपन्परिमार्जते ३२
शिवनाम नमःपूर्वं चतुर्थ्यां पंचतत्त्वकम्
स्थूलप्रणवरूपं हि शिवपंचाक्षरं द्विजाः ३३
पंचाक्षरजपेनैव सर्वसिद्धिं लभेन्नरः
प्रणवेनादिसंयुक्तं सदा पंचाक्षरं जपेत् ३४
गुरूपदेशं संगम्य सुखवासे सुभूतले
पूर्वपक्षे समारभ्य कृष्णभूतावधि द्विजाः ३५
माघं भाद्रं विशिष्टं तु सर्वकालोत्तमोत्तमम्

एकवारं मिताशीतु वाग्यतो नियतेंद्रियः ३६
स्वस्य राजपितृ-णां च शुश्रूषणं च नित्यशः
सहस्रजपमात्रेण भवेच्छुद्धोऽन्यथा ऋणी ३७
पंचाक्षरं पंचलक्षं जपेच्छिवमनुस्मरन्
पद्मासनस्थं शिवदं गंगाचंद्रकलान्वितम् ३८
वामोरुस्थितशक्त्या च विराजं तं महागणैः
मृगटंकधरं देवं वरदाभयपाणिकम् ३९
सदानुग्रहकर्त्तारं सदा शिवमनुस्मरन्
संपूज्य मनसा पूर्वं हृदिवासूर्यमंडले ४०
जपेत्पंचाक्षरीं विद्यां प्राणमुखः शुद्धकर्मकृत्
प्रातः कृष्णचतुर्दश्यां नित्यकर्मसमाप्य च ४१
मनोरमे शुचौ देशे नियतः शुद्धमानसः
पंचाक्षरस्य मंत्रस्य सहस्रं द्वादशं जपेत् ४२
वरयेच्च सपत्नीकाञ्छैवान्वै ब्राह्मणोत्तमान्
एकं गुरुवरं शिष्टं वरयेत्सांबमूर्तिकम् ४३
ईशानं चाथ पुरुषमघोरं वाममेव च
सद्योजातं च पंचैव शिवभक्तान्द्विजोत्तमान् ४४
पूजाद्रव्याणि संपाद्य शिवपूजां समारभेत्
शिवपूजां च विधिवत्कृत्वा होमं समारभेत् ४५
मुखांतं च स्वसूत्रेण कृत्वा होमं समारभेत्
दशैकं वा शतैकं वा सहस्रैकमथापि वा ४६
कापिलेन घृतेनैव जुहुयात्स्वयमेव हि
कारयेच्छिवभक्तैर्वाप्यष्टोत्तरशतं बुधः ४७
होमान्ते दक्षिणा देया गुरोर्गोमिथुनं तथा
ईशानादिस्वरूपांस्तान्गुरुं सांबं विभाव्य च ४८

तेषां पत्सिक्ततोयेन स्वशिरः स्नानमाचरेत्
षट्त्रिंशत्कोटितीर्थेषु सद्यः स्नानफलं लभेत् ४९
दशांगमन्नं तेषां वै दद्याद्वैभक्तिपूर्वकम्
पराबुद्धया गुरोः पत्नीमीशानादिक्रमेण तु ५०
परमान्नेन संपूज्य यथाविभवविस्तरम्
रुद्राक्षवस्त्रपूर्वं च वटकापूपकैर्युतम् ५१
बलिदानं ततः कृत्वा भूरिभोजनमाचरेत्
ततः संप्रार्थ्य देवेशं जपं तावत्समापयेत् ५२
पुरश्चरणमेवं तु कृत्वा मन्त्रीभवेन्नरः
पुनश्च पंचलक्षेण सर्वपापक्षयो भवेत् ५३
अतलादि समारभ्य सत्यलोकावधिक्रमात्
पंचलक्षजपात्तत्तल्लोकैश्वर्यमवाप्नुयात् ५४
मध्ये मृतश्चेद्भोगांते भूमौ तज्जापको भवेत्
पुनश्च पंचलक्षेण ब्रह्मसामीप्यमाप्नुयात् ५५
पुनश्च पंचलक्षेण सारूप्यैश्वर्यमाप्नुयात्
आहत्य शतलक्षेण साक्षाद्ब्रह्मसमो भवेत् ५६
कार्यब्रह्मण एवं हि सायुज्यं प्रतिपद्य वै
यथेष्टं भोगमाप्नोति तद्ब्रह्मप्रलयावधि ५७
पुनः कल्पांतरे वृत्ते ब्रह्मपुत्रः सजायते
पुनश्च तपसा दीप्तः क्रमान्मुक्तो भविष्यति ५८
पृथ्व्यादिकार्यभूतेभ्यो लोका वै निर्मिताः क्रमात्
पातालादि च सत्यांतं ब्रह्मलोकाश्चतुर्दश ५९
सत्यादूर्ध्वं क्षमांतं वैविष्णुलोकाश्चतुर्दश
क्षमलोके कार्यविष्णुर्वैकुंठे वरपत्तने ६०
कार्यलक्ष्म्या महाभोगिरक्षां कृत्वाऽधितिष्ठति

तदूर्ध्वगाश्च शुच्यंतां लोकाष्टाविंशतिः स्थिताः ६१
शुचौ लोके तु कैलासे रुद्रो वै भूतहृत्स्थितः
षडुत्तराश्च पंचाशदहिंसांतास्तदूर्ध्वगाः ६२
अहिंसालोकमास्थाय ज्ञानकैलासके पुरे
कार्येश्वरस्तिरोभावं सर्वान्कृत्वाधितिष्ठति ६३
तदंते कालचक्रं हि कालातीतस्ततः परम्
शिवेनाधिष्ठितस्तत्र कालश्चक्रेश्वराह्वयः ६४
माहिषं धर्ममास्थाय सर्वान्कालेन युंजति
असत्यश्चाशुचिश्चैव हिंसा चैवाथ निर्घृणा ६५
असत्यादिचतुष्पादः सर्वांशः कामरूपधृक्
नास्तिक्यलक्ष्मीर्दुःसंगो वेदबाह्यध्वनिः सदा ६६
क्रोधसंगः कृष्णवर्णो महामहिषवेषवान्
तावन्महेश्वरः प्रोक्तस्तिरोधास्तावदेव हि ६७
तदर्वाक्कर्मभोगो हि तदूर्ध्वं ज्ञानभोगकम्
तदर्वाक्कर्ममाया हि ज्ञानमाया तदूर्ध्वकम् ६८
मा लक्ष्मीः कर्मभोगो वै याति मायेति कथ्यते
मा लक्ष्मीर्ज्ञानभोगो वै याति मायेति कथ्यते ६९
तदूर्ध्वं नित्यभोगो हि तदर्वाग्नश्वरं विदुः
तदर्वाक्च तिरोधानं तदूर्ध्वं न तिरोधनम् ७०
तदर्वाक्पाशबंधो हि तदूर्ध्वं न हि बंधनम्
तदर्वाक्परिवर्तंते काम्यकर्मानुसारिणः ७१
निष्कामकर्मभोगस्तु तदूर्ध्वं परिकीर्तितः
तदर्वाक्परिवर्तंते बिंदुपूजापरायणाः ७२
तदूर्ध्वं हि व्रजंत्येव निष्कामा लिंगपूजकाः
तदर्वाक्परिवर्तंते शिवान्यसुरपूजकाः ७३

शिवैकनिरता ये च तदूर्ध्वं संप्रयांति ते
तदर्वाग्जीवकोटिः स्यात्तदूर्ध्वं परकोटिकाः ७४
सांसारिकास्तदर्वाक्च मुक्ताः खलु तदूर्ध्वगाः
तदर्वाक्परिवर्तंते प्राकृतद्रव्यपूजकाः ७५
तदूर्ध्वं हि व्रजंत्येते पौरुषद्रव्यपूजकाः
तदर्वाक्छक्तिलिंगं तु शिवलिंगं तदूर्ध्वकम् ७६
तदर्वागावृतं लिंगं तदूर्ध्वं हि निरावृति
तदर्वाक्कल्पितं लिंगं तदूर्ध्वं वै न कल्पितम् ७७
तदर्वाग्बाह्यलिंगं स्यादंतरंगं तदूर्ध्वकम्
तदर्वाक्छक्तिलोका हि शतं वै द्वादशाधिकम् ७८
तदर्वाग्बिंदुरूपं हि नादरूपं तदुत्तरम्
तदर्वाक्कर्मलोकस्तु तदूर्ध्वं ज्ञानलोककः ७९
नमस्कारस्तदूर्ध्वं हि मदाहंकारनाशनः
जनिजं वै तिरोधानं नानिषिद्धयाततते इति ८०
ज्ञानशब्दार्थ एवं हि तिरोधाननिवारणात्
तदर्वाक्परिवर्तंते ह्याधिभौतिकपूजकाः ८१
आध्यात्मिकार्चका एव तदूर्ध्वं संप्रयांतिवै
तावद्वै वेदिभागं तन्महालोकात्मलिंगके ८२
प्रकृत्याद्यष्टबंधोपि वेद्यंते संप्रतिष्ठतः
एवमेतादृशं ज्ञेयं सर्वं लौकिकवैदिकम् ८३
अधर्ममहिषारूढं कालचक्रं तरंति ते
सत्यादिधर्मयुक्ता ये शिवपूजापराश्च ये ८४
तदूर्ध्वं वृषभो धर्मो ब्रह्मचर्यस्वरूपधृक्
सत्यादिपादयुक्तस्तु शिवलोकाग्रतः स्थितः ८५
क्षमाशृणगः शमश्रोत्रो वेदध्वनिविभूषितः

आस्तिक्यचक्षुर्निश्वासगुरुबुद्धिमना वृषः ८६
क्रियादिवृषभा ज्ञेयाः कारणादिषु सर्वदा
तं क्रियावृषभं धर्मं कालातीतोधितिष्ठति ८७
ब्रह्मविष्णुमहेशानां स्वस्वायुर्दिनमुच्यते
तदूर्ध्वं न दिनं रात्रिर्न जन्ममरणादिकम् ८८
पुनः कारणसत्यांताः कारणब्रह्मणस्तथा
गंधादिभ्यस्तु भूतेभ्यस्तदूर्ध्वं निर्मिताः सदा ८९
सूक्ष्मगंधस्वरूपा हि स्थिता लोकाश्चतुर्दश
पुनः कारणविष्णोर्वै स्थिता लोकाश्चतुर्दश ९०
पुनःकारणरुद्रस्य लोकाष्टाविंशका मताः
पुनश्च कारणेशस्य षट्पंचाशत्तदूर्ध्वगाः ९१
ततः परं ब्रह्मचर्यलोकाख्यं शिवसंमतम्
तत्रैव ज्ञानकैलासे पंचावरणसंयुते ९२
पंचमंडलसंयुक्तं पंचब्रह्मकलान्वितम्
आदिशक्तिसमायुक्तमादिलिंगं तु तत्र वै ९३
शिवालयमिदं प्रोक्तं शिवस्य परमात्मनः
परशक्त्यासमायुक्तस्तत्रैव परमेश्वरः ९४
सृष्टिः स्थितिश्च संहारस्तिरोभावोप्यनुग्रहः
पंचकृत्यप्रवीणोऽसौ सच्चिदानंदविग्रहः ९५
ध्यानधर्मः सदा यस्य सदानुग्रहतत्परः
समाध्यासनमासीनः स्वात्मारामो विराजते ९६
तस्य संदर्शनं सांध्यं कर्मध्यानादिभिः क्रमात्
नित्यादिकर्मयजनाच्छिवकर्ममतिर्भवेत् ९७
क्रियादिशिवकर्मभ्यः शिवज्ञानं प्रसाधयेत्
तद्दर्शनगताः सर्वे मुक्ता एव न संशयः ९८

मुक्तिरात्मस्वरूपेण स्वात्मारामत्वमेव हि
क्रियातपोजपज्ञानध्यानधर्मेषु सुस्थितः ९९
शिवस्य दर्शनं लब्धा स्वात्मारामत्वमेव हि
यथा रविः स्वकिरणादशुद्धिमपनेष्यति १००
कृपाविचक्षणः शंभुरज्ञानमपनेष्यति
अज्ञानविनिवृत्तौ तु शिवज्ञानं प्रवर्तते १०१
शिवज्ञानात्स्वस्वरूपमात्मारामत्वमेष्यति
आत्मारामत्वसंसिद्धौ कृतकृत्यो भवेन्नरः १०२
पुनश्च शतलक्षेण ब्रह्मणः पदमाप्नुयात्
पुनश्च शतलक्षेण विष्णोः पदमवाप्नुयात् १०३
पुनश्च शतलक्षेण रुद्रस्य पदमाप्नुयात्
पुनश्च शतलक्षेण ऐश्वर्यं पदमाप्नुयात् १०४
पुनश्चैवंविधेनैव जपेन सुसमाहितः
शिवलोकादिभूतं हि कालचक्रमवाप्नुयात् १०५
कालचक्रं पंचचक्रमेकैकेन क्रमोत्तरे
सृष्टिमोहौ ब्रह्मचक्रं भोगमोहौ तु वैष्णवम् १०६
कोपमोहौ रौद्रचक्रं भ्रमणं चैश्वरं विदुः
शिवचक्रं ज्ञानमोहौ पंचचक्रं विदुर्बुधाः १०७
पुनश्च दशकोटया हि कारणब्रह्मणः पदम्
पुनश्च दशकोटया हि तत्पदैश्वर्यमाप्नुयात् १०८
एवं क्रमेण विष्णवादेः पदं लब्ध्वा महौजसः
क्रमेण तत्पदैश्वर्यं लब्ध्वा चैव महात्मनः १०९
शतकोटिमनुं जप्त्वा पंचोत्तरमतंद्रितः
शिवलोकमवाप्नोति पंचमावरणाद्बहिः ११०
राजसं मंडपं तत्र नंदीसंस्थानमुत्तमम्

तपोरूपश्च वृषभस्तत्रैव परिदृश्यते १११
सद्योजातस्य तत्स्थानं पंचमावरणं परम्
वामदेवस्य च स्थानं चतुर्थावरणं पुनः ११२
अघोरनिलयं पश्चात्तृतीयावरणं परम्
पुरुषस्यैव सांबस्य द्वितीयावरणं शुभम् ११३
ईशानस्य परस्यैव प्रथमावरणं ततः
ध्यानधर्मस्य च स्थानं पंचमं मंडपं ततः ११४
बलिनाथस्य संस्थानं तत्र पूर्णामृतप्रदम्
चतुर्थं मंडपं पश्चाच्चंद्रशेखरमूर्तिमत् ११५
सोमस्कंदस्य च स्थानं तृतीयं मंडपं परम्
द्वितीयं मंडपं नृत्यमंडपं प्राहुरास्तिकाः ११६
प्रथमं मूलमायायाः स्थानं तत्रैव शोभनम्
ततः परं गर्भगृहं लिंगस्थानं परं शुभम् ११७
नंदिसंस्थानतः पश्चान्न विदुः शिववैभवम्
नंदीश्वरो बहिस्तिष्ठन्पंचाक्षरमुपासते ११८
एवं गुरुक्रमाल्लब्धं नंदीशाच्च मया पुनः
ततः परं स्वसंवेद्यं शिवे नैवानुभावितम् ११९
शिवस्य कृपया साक्षाच्छिव लोकस्य वैभवम्
विज्ञातुं शक्यते सर्वैर्नान्यथेत्याहुरास्तिकाः १२०
एवंक्रमेणमुक्ताः स्युर्ब्राह्मणा वै जितेंद्रियः
अन्येषां च क्रमं वक्ष्ये गदतः शृणुतादरात् १२१
गुरूपदेशाज्ञाप्यं वै ब्राह्मणानां नमोऽतकम्
पंचाक्षरं पंचलक्षमायुष्यं प्रजपेद्विधिः १२२
स्त्रीत्वापनयनार्थं तु पंचलक्षं जपेत्पुनः
मंत्रेण पुरुषो भूत्वा क्रमान्मुक्तो भवेद्बुधः १२३

क्षत्रियः पंचलक्षेण क्षत्रत्वमपनेष्यति
पुनश्च पंचलक्षेण क्षत्रियो ब्राह्मणो भवेत् १२४
मंत्रसिद्धिर्जपाच्चैव क्रमान्मुक्तो भवैन्नरः
वैश्यस्तु पंचलक्षेण वैश्यत्वमपनेष्यति १२५
पुनश्च पंचलक्षेण मंत्रक्षत्रिय उच्यते
पुनश्च पंचलक्षेण क्षत्रत्वमपनेष्यति १२६
पुनश्च पंचलक्षेण मंत्रब्राह्मण उच्यते
शूद्रश्चैव नमोंतेन पंचविंशतिलक्षतः १२७
मंत्रविप्रत्वमापद्य पश्चाच्छुद्धो भवेद्द्विजः
नारीवाथ नरो वाथ ब्राह्मणो वान्य एव वा १२८
नमोन्तं वा नमःपूर्वमातुरः सर्वदा जपेत्
ततः स्त्रीणां तथैवोह्यगुरुर्निर्दर्शयेत्क्रमात् १२९
साधकः पंचलक्षान्ते शिवप्रीत्यर्थमेव हि
महाभिषेक नैवेद्यं कृत्वा भक्तांश्च पूजयेत् १३०
पूजया शिवभक्तस्य शिवः प्रीततरो भवेत्
शिवस्य शिवभक्तस्य भेदो नास्ति शिवो हि सः १३१
शिवस्वरूपमंत्रस्य धारणाच्छिव एव हि
शिवभक्तशरीरे हि शिवे तत्परमो भवेत् १३२
शिवभक्ताः क्रियाः सर्वा वेदसर्वक्रियां विदुः
यावद्यावच्छिवं मंत्रं येन जप्तं भवेत्क्रमात् १३३
तावद्वै शिवसान्निध्यं तस्मिन्देहे न संशयः
देवीलिंगं भवेद्रूपं शिवभक्तस्त्रियास्तथा १३४
यावन्मंत्रं जपेद्देव्यास्तावत्सान्निध्यमस्ति हि
शिवं संपूजयेद्धीमान्स्वयं वै शब्दरूपभाक् १३५
स्वयं चैव शिवो भूत्वा परां शक्तिं प्रपूजयेत्

शक्तिं बेरं च लिंगं च ह्यालेख्या मायया यजेत् १३६
शिवलिंगं शिवं मत्वा स्वात्मानं शक्तिरूपकम्
शक्तिलिंगं च देवीं च मत्वा स्वं शिवरूपकम् १३७
शिवलिंगं नादरूपं बिंदुरूपं तु शक्तिकम्
उपप्रधानभावेन अन्योन्यासक्तलिंगकम् १३८
पूजयेच्च शिवं शक्तिं स शिवो मूलभावनात्
शिवभक्ताञ्छिवमंत्ररूपकाञ्छिवरूपकान् १३९
षोडशैरुपचारैश्च पूजयेदिष्टमाप्नुयात्
येन शुश्रूषणाद्यैश्च शिवभक्तस्य लिंगिनः १४०
आनंदं जनयेद्विद्वाञ्छिवः प्रीततरो भवेत्
शिवभक्तान्सपत्नीकान्पत्नया सह सदैव तत् १४१
पूजयेद्भोजनाद्यैश्च पंच वा दश वा शतम्
धने देहे च मंत्रे च भावनायामवंचकः १४२
शिवशक्तिस्वरूपेण न पुनर्जायते भुवि
नाभेरधो ब्रह्मभागमाकंठं विष्णुभागकम् १४३
मुखं लिंगमिति प्रोक्तं शिवभक्तशरीरकम्
मृतान्दाहादियुक्तान्वा दाहादिरहितान्मृतान् १४४
उद्दिश्य पूजयेदादिपितरं शिवमेव हि
पूजां कृत्वादिमातुश्च शिवभक्तांश्च पूजयेत् १४५
पितृलोकं समासाद्यक्रमान्मुक्तो भवेन्मृतः
क्रियायुक्तदशभ्यश्च तपोयुक्तो विशिष्यते १४६
तपोयुक्तशतेभ्यश्च जपयुक्तो विशिष्यते
जपयुक्तसहस्रेभ्यः शिवज्ञानी विशिष्यते १४७
शिवज्ञानिषु लक्षेषु ध्यानयुक्तो विशिष्यते
ध्यानयुक्तेषु कोटिभ्यः समाधिस्थो विशिष्यते १४८

उत्तरोत्तर वै शिष्टचात्पूजायामुत्तरोत्तरम्
फलं वैशिष्टचरूपं च दुर्विज्ञेयं मनीषिभिः १४९
तस्माद्वै शिवभक्तस्य माहात्म्यं वेत्ति को नरः
शिवशक्त्योः पूजनं च शिवभक्तस्य पूजनम् १५०
कुरुते यो नरो भक्त्या स शिवः शिवमेधते
य इमं पठतेऽध्यायमर्थवद्वेदसंमतम् १५१
शिवज्ञानी भवेद्विप्रः शिवेन सह मोदते
श्रावयेच्छिवभक्तांश्च विशेषज्ञो मनीश्वराः १५२
शिवप्रसादशिद्धिः स्याच्छिवस्य कृपया बुधाः १५३
इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां सप्तदशोऽध्यायः १७

अध्याय १८

ऋष्य ऊचुः
बंधमोक्षस्वरूपं हि ब्रूहि सर्वार्थवित्तम
सूत उवाच
बंधमोक्षं तथोपायं वक्ष्येऽहं शृणुतादरात् १
प्रकृत्याद्यष्टबंधेन बद्धो जीवः स उच्यते
प्रकृत्याद्यष्टबंधेन निर्मुक्तो मुक्त उच्यते २
प्रकृत्यादिवशीकारो मोक्ष इत्युच्यते स्वतः
बद्धजीवस्तु निर्मुक्तो मुक्तजीवः स कथ्यते ३
प्रकृत्यग्रे ततो बुद्धिरहंकारो गुणात्मकः
पंचतन्मात्रमित्येते प्रकृत्याद्यष्टकं विदुः ४
प्रकृटचाद्यष्टजो देहो देहजं कर्म उच्यते
पुनश्च कर्मजो देहो जन्मकर्म पुनः पुनः ५
शरीरं त्रिविधं ज्ञेयं स्थूलं सूक्ष्मं च कारणम्

स्थूलं व्यापारदं प्रोक्तं सूक्ष्ममिंद्रियभोगदम् ६
कारणं त्वात्मभोगार्थं जीवकर्मानुरूपतः
सुखं दुःखं पुण्यपापैः कर्मभिः फलमश्नुते ७
तस्माद्धि कर्मरज्ज्वा हि बद्धो जीवः पुनः पुनः
शरीरत्रयकर्मभ्यां चक्रवद्भ्राम्यते सदा ८
चक्रभ्रमनिवृत्यर्थं चक्रकर्तारमीडयेत्
प्रकृत्यादि महाचक्रं प्रकृतेः परतः शिवः ९
चक्रकर्ता महेशो हि प्रकृतेः परतोयतः
पिबति वाथ वमति जीवन्बालो जलं यथा १०
शिवस्तथा प्रकृत्यादि वशीकृत्याधितिष्ठति
सर्वं वशीकृतं यस्मात्तस्माच्छिव इति स्मृतः
शिव एव हि सर्वज्ञः परिपूर्णश्च निःस्पृहः ११
सर्वज्ञता तृप्तिरनादिबोधः स्वतंत्रता नित्यमलुप्तशक्तिः
अनंतशक्तिश्च महेश्वरस्य यन्मानसैश्वर्यमवैति वेदः १२
अतः शिवप्रसादेन प्रकृत्यादिवशं भवेत्
शिवप्रसादलाभार्थं शिवमेव प्रपूजयेत् १३
निःस्पृहस्य च पूर्णस्य तस्य पूजा कथं भवेत्
शिवोद्देशकृतं कर्म प्रसादजनकं भवेत् १४
लिंगे बेरे भक्तजने शिवमुद्दिश्य पूजयेत्
कायेन मनसा वाचा धनेनापि प्रपूजयेत् १५
पुजया तु महेशो हि प्रकृतेः परमः शिवः
प्रसादं कुरुते सत्यं पूजकस्य विशेषतः १६
शिवप्रसादात्कर्माद्यं क्रमेण स्ववशं भवेत्
कर्मारभ्य प्रकृत्यंतं यदासर्वं वशं भवेत् १७
तदामुक्त इति प्रोक्तः स्वात्मारामो विराजते

प्रसादात्परमेशस्य कर्म देहो यदावशः १८
तदा वै शिवलोके तु वासः सालोक्यमुच्यते
सामीप्यं याति सांबस्य तन्मात्रे च वशं गते १९
तदा तु शिवसायुज्यमायुधाद्यैः क्रियादिभिः
महाप्रसादलाभे च बुद्धिश्चापि वशा भवेत् २०
बुद्धिस्तु कार्यं प्रकृतेस्तत्सृष्टिरिति कथ्यते
पुनर्महाप्रसादेन प्रकृतिर्वशमेष्यति २१
शिवस्य मानसैश्वर्यं तदाऽयत्नं भविष्यति
सार्वज्ञाद्यं शिवैश्वर्यं लब्ध्वा स्वात्मनि राजते २२
तत्सायुज्यमिति प्राहुर्वेदागमपरायणाः
एवं क्रमेण मुक्तिः स्याल्लिंगादौ पूजया स्वतः २३
अतः शिवप्रसादार्थं क्रियाद्यैः पूजयेच्छिवम्
शिवक्रिया शिवतपः शिवमंत्रजपः सदा २४
शिवज्ञानं शिवध्यानमुत्तरोत्तरमभ्यसेत्
आसुप्तेरामृतेः कालं नयेद्वै शिवचिंतया २५
सद्यादिभिश्च कुसुमैरर्चयेच्छिवमेष्यति
ऋषय ऊचुः
लिंगादौ शिवपूजाया विधानं ब्रूहि सर्वतः २६
सूत उवाच
लिंगानां च क्रमं वक्ष्ये यथावच्छृणुत द्विजाः
तदेव लिंगं प्रथमं प्रणवं सार्वकामिकम् २७
सूक्ष्मप्रणवरूपं हि सूक्ष्मरूपं तु निष्फलम्
स्थूललिंगं हि सकलं तत्पंचाक्षरमुच्यते २८
तयोः पूजा तपः प्रोक्तं साक्षान्मोक्षप्रदे उभे
पौरुषप्रकृतिभूतानि लिंगानिसुबहूनि च २९

तानि विस्तरतो वक्तुं शिवो वेत्ति न चापरः
भूविकाराणि लिंगानि ज्ञातानि प्रब्रवीमि वः ३०
स्वयं भूलिंगं प्रथमं बिंदुलिंगंद्वितीयकम्
प्रतिष्ठितं चरंचैव गुरुलिंगं तु पंचमम् ३१
देवर्षितपसा तुष्टः सान्निध्यार्थं तु तत्र वै
पृथिव्यन्तर्गतः शर्वो बीजं वै नादरूपतः ३२
स्थावरांकुरवद्भूमिमुद्भिद्य व्यक्त एव सः
स्वयंभूतं जातमिति स्वयंभूरिति तं विदुः ३३
तल्लिंगपूजया ज्ञानं स्वयमेव प्रवर्द्धते
सुवर्णरजतादौ वा पृथिव्यां स्थिंडिलेपि वा ३४
स्वहस्ताल्लिखितं लिंगं शुद्धप्रणवमंत्रकम्
यंत्रलिंगं समालिख्य प्रतिष्ठावाहनं चरेत् ३५
बिंदुनादमयं लिंगं स्थावरं जंगमं च यत्
भावनामयमेतद्धि शिवदृष्टं न संशयः ३६
यत्र विश्वस्य ते शंभुस्तत्र तस्मै फलप्रदः
स्वहस्ताल्लिख्यते यंत्रे स्थावरादावकृत्रिमे ३७
आवाह्य पूजयेच्छंभुं षोडशैरुपचारकैः
स्वयमैश्वर्यमाप्नोति ज्ञानमभ्यासतो भवेत् ३८
देवैश्च ऋृषिभिश्चापि स्वात्मसिद्धयर्थमेव हि
समंत्रेणात्महस्तेन कृतं यच्छुद्धमंडले ३९
शुद्धभावनया चैव स्थापितं लिंगमुत्तमम्
तल्लिंगं पौरुषं प्राहुस्तत्प्रतिष्ठितमुच्यते ४०
तल्लिंगपूजया नित्यं पौरुषैश्वर्यमाप्नुयात्
महद्भिर्ब्राह्मणैश्चापि राजभिश्च महाधनैः ४१
शिल्पिनाकल्पितं लिंगं मंत्रेण स्थापितं च यत्

प्रतिष्ठितं प्राकृतं हि प्राकृतैश्वर्यभोगदम् ४२
यदूर्जितं च नित्यं च तद्धि पौरुषमुच्यते
यद्दुर्बलमनित्यं च तद्धि प्राकृतमुच्यते ४३
लिंगं नाभिस्तथा जिह्वा नासाग्रञ्च शिखा क्रमात्
कटयादिषु त्रिलोकेषु लिंगमाध्यात्मिकं चरम् ४४
पर्वतं पौरुषं प्रोक्तं भूतलं प्राकृतं विदुः
वृक्षादि पौरुषं ज्ञेयं गुल्मादि प्राकृतं विदुः ४५
षाष्टिकं प्राकृतं ज्ञेयं शालिगोधूमपौरुषम्
ऐश्वर्यं पौरुषं विद्यादणिमाद्यष्टसिद्धिदम् ४६
सुस्त्रीधनादिविषयं प्राकृतं प्राहुरास्तिकाः
प्रथमं चरलिंगेषु रसलिंगं प्रकथ्यते ४७
रसलिंगं ब्राह्मणानां सर्वाभीष्टप्रदं भवेत्
बाणलिंगं क्षत्रियाणां महाराज्यप्रदं शुभम् ४८
स्वर्णलिंगं तु वैश्यानां महाधनपतित्वदम्
शिलालिंगं तु शूद्राणां महाशुद्धिकरं शुभम् ४९
स्फाटिकं बाणलिंगं च सर्वेषांसर्वकामदम्
स्वीयाभावेऽन्यदीयं तु पूजायां न निषिद्धयते ५०
स्त्रीणां तु पार्थिवं लिंगं सभर्तृ-णां विशेषतः
विधवानां प्रवृत्तानां स्फाटिकं परिकीर्तितम् ५१
विधवानां निवृत्तानां रसलिंगं विशिष्यते
बाल्येवायौवनेवापि वार्द्धकेवापि सुव्रताः ५२
शुद्धस्फटिकलिंगं तु स्त्रीणां तत्सर्वभोगदम्
प्रवृत्तानां पीठपूजा सर्वाभीष्टप्रदा भुवि ५३
पात्रेणैव प्रवृत्तस्तु सर्वपूजां समाचरेत्
अभिषेकांते नैवेद्यं शाल्यन्नेन समाचरेत् ५४

पूजांते स्थापयेल्लिंगं संपुटेषु पृथग्गृहे
करपूजानि वृत्तानां स्वभोज्यं तु निवेदयेत् ५५
निवृत्तानां परं सूक्ष्मलिंगमेव विशिष्यते
विभूत्यभ्यर्चनं कुर्याद्विभूतिं च निवेदयेत् ५६
पूजां कृत्वाथ तल्लिंगं शिरसा धारयेत्सदा
विभूतिस्त्रिविधा प्रोक्ता लोकवेदशिवाग्निभिः ५७
लोकाग्निजमथो भस्मद्रव्यशुद्ध्यर्थमावहेत्
मृद्दारुलोहरूपाणां धान्यानां च तथैव च ५८
तिलादीनां च द्रव्याणां वस्त्रादीनां तथैव च
तथा पर्युषितानां च भस्मना शिद्धिरिष्यते ५९
श्वादिभिर्दूषितानां च भस्मना शुद्धिरिष्यते
सजलं निर्जलं भस्म यथायोग्यं तु योजयेत् ६०
वेदाग्निजं तथा भस्म तत्कर्मांतेषु धारयेत्
मंत्रेण क्रियया जन्यं कर्माग्नौ भस्मरूपधृक् ६१
तद्भस्मधारणात्कर्म स्वात्मन्यारोपितं भवेत्
अघोरेणात्ममंत्रेण बिल्वकाष्ठं प्रदाहयेत् ६२
शिवाग्निरिति संप्रोक्तस्तेन दग्धं शिवाग्निजम्
कपिलागोमयं पूर्वं केवलं गव्यमेव वा ६३
शम्यस्वत्थपलाशान्वा वटारम्वधबिल्वकान्
शिवाग्निना दहेच्छुद्धं तद्वै भस्म शिवाग्निजम् ६४
दर्भाग्नौ वा दहेत्काष्ठं शिवमंत्रं समुच्चरन्
सम्यक्संशोध्य वस्त्रेण नवकुंभे निधापयेत् ६५
दीप्तयर्थं तत्तु संग्राह्यं मन्यते पूज्यतेपि च
भस्मशब्दार्थ एवं हि शिवः पूर्वं तथाऽकरोत् ६६
यथा स्वविषये राजा सारं गृह्णाति यत्करम्

यथा मनुष्याः सस्यादीन्दग्ध्वा सारं भजंति वै ६७
यथा हि जाठराग्निश्च भक्ष्यादीन्विविधान्बहून्
दग्ध्वा सारतरं सारात्स्वदेहं परिपुष्यति ६८
तथा प्रपंचकर्तापि स शिवः परमेश्वरः
स्वाधिष्ठेयप्रपंचस्य दग्ध्वा सारं गृहीतवान् ६९
दग्ध्वा प्रपंचं तद्भस्म ह्यस्वात्मन्यारोपयच्छिवः
उद्धूलनेन व्याजेन जगत्सारं गृहीतवान् ७०
स्वरक्षं स्थापयामास स्वकीये हि शरीरके
केशमाकाशसारेण वायुसारेण वै मुखम् ७१
हृदयं चाग्निसारेण त्वपां सारेण वैकटिम्
जानु चावनिसारेण तद्वत्सर्वं तदंगकम् ७२
ब्रह्मविष्णवोश्च रुद्राणां सारं चैव त्रिपुंड्रकम्
तथा तिलकरूपेण ललाटान्ते महेश्वरः ७३
भवृद्धया सर्वमेतद्धि मन्यते स्वयमैत्यसौ
प्रपंचसारसर्वस्वमनेनैव वशीकृतम् ७४
तस्मादस्य वशीकर्ता नास्तीति स शिवः स्मृतः
यथा सर्वमृगाणां च हिंसको मृगहिंसकः ७५
ह्यस्य हिंसामृगो नास्ति तस्मात्सिंह इतीरितः
शं नित्यं सुखमानंदमिकारः पुरुषः स्मृतः ७६
वकारः शक्तिरमृतं मेलनं शिव उच्यते
तस्मादेवं स्वमात्मानं शिवं कृत्वार्चयेच्छिवम् ७७
तस्मादुद्धूलनं पूर्वं त्रिपुंड्रं धारयेत्परम्
पूजाकाले हि सजलं शुद्धयर्थं निर्जलं भवेत् ७८
दिवा वा यदि वारात्रौ नारी वाथ नरोपि वा
पूजार्थं सजलं भस्म त्रिपुंड्रेणैव धारयेत् ७९

त्रिपुंड्रं सजलं भस्म धृत्वा पूजां करोति यः
शिवपूजां फलं सांगं तस्यैव हि सुनिश्चितम् ८०
भस्म वै शिवमंत्रेण धृत्वा ह्यत्याश्रमी भवेत्
शिवाश्रमीति संप्रोक्तः शिवैकपरमो यतः ८१
शिवव्रतैकनिष्ठस्य नाशौचं न च सूतकम्
ललाटेऽग्रे सितं भस्म तिलकं धारयेन्मृदा ८२
स्वहस्ताद्गुरुहस्ताद्वाशिवभक्तस्य लक्षणम्
गुणान्गुंध इति प्रोक्तो गुरुशब्दस्य विग्रहः ८३
सविकारान्राजसादीन्गुणान्गुंधे व्यपोहति
गुणातीतः परशिवो गुरुरूपं समाश्रितः ८४
गुणत्रयं व्यपोह्याग्रे शिवं बोधयतीति सः
विश्वस्तानां तु शिष्याणां गुरुरित्यभिधीयते ८५
तस्माद्गुरुशरीरं तु गुरुलिंगं भवेद्बुधः
गुरुलिंगस्य पूजा तु गुरुशुश्रूषणं भवेत् ८६
श्रुतं करोति शुश्रूषा कायेन मनसा गिरा
उक्तं यद्गुरुणा पूर्वं शक्यं वाऽशक्यमेव वा ८७
करोत्येव हि पूतात्मा प्राणैरपि धनैरपि
तस्माद्वै शासने योग्यः शिष्य इत्यभिधीयते ८८
शरीराद्यर्थकं सर्वं गुरोर्दत्त्वा सुशिष्यकः
अग्रपाकं निवेद्याग्रेभुंजीयाद्गुर्वनुज्ञया ८९
शिष्यः पुत्र इति प्रोक्तः सदाशिष्यत्वयोगतः
जिह्वालिंगान्मंत्रशुक्रं कर्णयोनौ निषिच्यवै ९०
जातः पुत्रो मंत्रपुत्रः पितरं पूजयेद्गुरुम्
निमज्जयति पुत्रं वै संसारे जनकः पिता ९१
संतारयति संसारादुरुर्वै बोधकः पिता

उभयोरंतरं ज्ञात्वा पितरं गुरुमर्चयेत् ९२
अंगशुश्रूषया चापि धनाद्यैः स्वार्जितैर्गुरुम्
पादादिकेशपर्यंतं लिंगान्यंगानि यद्गुरोः ९३
धनरूपैः पादुकाद्यैः पादसंग्रणादिभिः
स्नानाभिषेकनैवेद्यैर्भोजनैश्च प्रपूजयेत् ९४
गुरुपूजैव पूजा स्याच्छिवस्य परमात्मनः
गुरुशेषं तु यत्सर्वमात्मशुद्धिकरं भवेत् ९५
गुरोः शेषः शिवोच्छिष्टं जलमन्नादिनिर्मितम्
शिष्याणां शिवभक्तानां ग्राह्यं भोज्यं भवेद्द्विजाः ९६
गुर्वनुज्ञाविरहितं चोरवत्सकलं भवेत्
गुरोरपि विशेषज्ञं यत्नाद्गृह्णीत वै गुरुम् ९७
अज्ञानमोचनं साध्यं विशेषज्ञो हि मोचकः
आदौ च विघ्नशमनं कर्तव्यं कर्म पूर्तये ९८
निर्विघ्नेन कृतं सांगं कर्म वै सफलं भवेत्
तस्मात्सकलकर्मादौ विघ्नेशं पूजयेद् बुधः ९९
सर्वबाधानिवृत्त्यर्थं सर्वान्देवान्यजेद्बुधः
ज्वरादिग्रंथिरोगाश्च बाधा ह्याध्यात्मिका मता १००
पिशाचजंबुकादीनां वल्मीकाद्युद्भवे तथा
अकस्मादेव गोधादिजंतूनां पतनेपि च १०१
गृहे कच्छपसर्पस्त्रीदुर्जनादर्शनेपि च
वृद्धनारीगवादीनां प्रसूतिविषयेपि च १०२
भाविदुःखं समायाति तस्मात्ते भौतिका मता
अमेध्या शनिपातश्च महामारी तथैव च १०३
ज्वरमारी विषूचिश्च गोमारी च मसूरिका
जन्मर्क्षग्रहसंक्रांतिग्रहयोगाः स्वराशिके १०४

दुःस्वप्नदर्शनाद्याश्च मता वै ह्यधिदैविकाः
शवचांडालपतितस्पर्शाद्येंतर्गृहे गते १०५
एतादृशे समुत्पन्ने भाविदुःखस्य सूचके
शांतियज्ञं तु मतिमान्कुर्यात्तद्दोषशांतये १०६
देवालयेऽथ गोष्ठे वा चैत्ये वापि गृहांगणे
प्रादेशोन्नतधिष्ण्ये वै द्विहस्ते च स्वलंकृते १०७
भारमात्रव्रीहिधान्यं प्रस्थाप्य परिसृत्य च
मध्ये विलिख्यकमलं तथा दिक्षुविलिख्य वै १०८
तंतुना वेष्टितं कुंभं नवगुग्गुलधूपितम्
मध्ये स्थाप्य महाकुंभं तथा दिक्ष्वपि विन्यसेत् १०९
सनालाम्रककूर्चादीन्कलशांश्च तथाष्टसु
पूरयेन्मंत्रपूतेन पंचद्रव्ययुतेन हि ११०
प्रक्षिपेन्नव रत्नानि नीलादीन्क्रमशस्तथा
कर्मज्ञं च सपत्नीकमाचार्यं वरयेद्बुधः १११
सुवर्णप्रतिमां विष्णोरिंद्रादीनां च निक्षिपेत्
सशिरस्के मध्यकुंभे विष्णुमाबाह्य पूजयेत् ११२
प्रागादिषु यथामंत्रमिंद्रादीन्क्रमशो यजेत्
तत्तन्नाम्ना चतुर्थ्यां च नमोन्ते न यथाक्रमम् ११३
आवाहनादिकं सर्वमाचार्येणैव कारयेत्
आचार्य ऋत्विजा सार्धं तन्मात्रान्प्रजपेच्छतम् ११४
कुंभस्य पश्चिमे भागे जपांते होममाचरेत्
कोटिं लक्षं सहस्रं वा शतमष्टोत्तरं बुधाः ११५
एकाहं वा नवाहं वा तथा मंडलमेव वा
यथायोग्यं प्रकुर्वीत कालदेशानुसारतः ११६
शमीहोमश्च शांत्यर्थे वृत्त्यर्थे च पलाशकम्

समिदन्नाज्यकैर्द्रव्यैर्नाम्ना मंत्रेण वा हुनेत् ११७
प्रारंभे यत्कृतं द्रव्यं तत्क्रियांतं समाचरेत्
पुण्याहं वाचयित्वांते दिने संप्रोद्ययेज्जलैः ११८
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्यावदाहुतिसंख्यया
आचार्यश्च हविष्याशीत्ऋत्विजश्च भवेद्बुधाः ११९
आदित्यादीन्ग्रहानिष्ट्वा सर्वहोमांत एव हि
ऋत्विभ्यो दक्षिणां दद्यान्नवरत्नं यथाक्रमम् १२०
दशदानं ततः कुर्याद्भूरिदानं ततः परम्
बालानामुपनीतानां गृहिणां वनिनां धनम् १२१
कन्यानां च सभर्तृ-णां विधवानां ततः परम्
तंत्रोपकरणं सर्वमाचार्याय निवेदयेत् १२२
उत्पातानां च मारीणां दुःखस्वामी यमः स्मृतः
तस्माद्यमस्य प्रीत्यर्थं कालदानं प्रदापयेत् १२३
शतनिष्केण वा कुर्याद्दशनिष्केण वा पुनः
पाशांकुशधरं कालं कुर्यात्पुरुषरूपिणम् १२४
तत्स्वर्णप्रतिमादानं कुर्याद्दक्षिणया सह
तिलदानं ततः कुर्यात्पूर्णायुष्यप्रसिद्धये १२५
आज्यावेक्षणदानं च कुर्याद्व्याधिनिवृत्तये
सहस्रं भोजयेद्विप्रान्दरिद्रः शतमेव वा १२६
वित्ताभावे दरिद्रस्तु यथाशक्ति समाचरेत्
भैरवस्य महापूजां कुर्याद्भूतादिशांतये १२७
महाभिषेकं नैवेद्यं शिवस्यान्ते तुकारयेत्
ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्भूरिभोजनरूपतः १२८
एवं कृतेन यज्ञेन दोषशांतिमवाप्नुयात्
शांतियज्ञमिमं कुर्याद्वर्षे वर्षे तु फाल्गुने १२९

दुर्दर्शनादौ सद्यो वै मासमात्रे समाचरेत्
महापापादिसंप्राप्तौ कुर्याद्भैरवपूजनम् १३०
महाव्याधिसमुत्पत्तौ संकल्पं पुनराचरेत्
सर्वभावे दरिद्रस्तु दीपदानमथाचरेत् १३१
तदप्यशक्तः स्नात्वा वै यत्किंचिद्दानमाचरेत्
दिवाकरं नमस्कुर्यान्मन्त्रेणाष्टोत्तरं शतम् १३२
सहस्रमयुतं लक्षं कोटिं वा कारयेद् बुधः
नमस्कारात्मयज्ञेन तुष्टाः स्युः सर्वदेवताः १३३
त्वत्स्वरूपेर्पिता बुद्धिर्नतेऽशून्ये च रोचति
या चास्त्यस्मदहंतेति त्वयि दृष्टे विवर्जिता १३४
नम्रोऽहं हि स्वदेहेन भो महांस्त्वमसि प्रभो
न शून्यो मत्स्वरूपो वै तव दासोऽस्मि सांप्रतम् १३५
यथायोग्यं स्वात्मयज्ञं नमस्कारं प्रकल्पयेत्
अथात्र शिवनैवेद्यं दत्त्वा तांबूलमाहरेत् १३६
शिवप्रदक्षिणं कुर्यात्स्वयमष्टोत्तरं शतम्
सहस्रमयुतं लक्षं कोटिमन्येन कारयेत् १३७
शिवप्रदक्षिणात्सर्वं पातकं नश्यति क्षणात्
दुःखस्य मूलं व्याधिर्हि व्याधेर्मूलं हि पातकम् १३८
धर्मेणैव हि पापानामपनोदनमीरितम्
शिवोद्देशकृतो धर्मः क्षमः पापविनोदने १३९
अध्यक्षं शिवधर्मेषु प्रदक्षिणमितीरितम्
क्रियया जपरूपं हि प्रणवं तु प्रदक्षिणम् १४०
जननं मरणं द्वंद्वं मायाचक्रमितीरितम्
शिवस्य मायाचक्रं हि बलिपीठं तदुच्यते १४१
बलिपीठं समारभ्य प्रादक्षिण्यक्रमेण वै

पदे पदांतरं गत्वा बलिपीठं समाविशेत् १४२
नमस्कारं ततः कुर्यात्प्रदक्षिणमितीरितम्
निर्गमाञ्जननं प्राप्तं नमस्त्वात्मसमर्पणम् १४३
जननं मरणं द्वंद्वं शिवमायासमर्पितम्
शिवमायार्पितद्वंद्वो न पुनस्त्वात्मभाग्भवेत् १४४
यावद्देहं क्रियाधीनः सजीवो बद्ध उच्यते
देहत्रयवशीकारे मोक्ष इत्युच्यते बुधैः १४५
मायाचक्रप्रणेता हि शिवः परमकारणम्
शिवमायार्पितद्वंद्वं शिवस्तु परिमार्जति १४६
शिवेन कल्पितं द्वंद्वं तस्मिन्नेव समर्पयेत्
शिवस्यातिप्रियं विद्यात्प्रदक्षिणं नमो बुधाः १४७
प्रदक्षिणनमस्काराः शिवस्य परमात्मनः
षोडशैरुपचारैश्च कृतपूजा फलप्रदा १४८
प्रदक्षिणाऽविनाश्यं हि पातकं नास्ति भूतले
तस्मात्प्रदक्षिणेनैव सर्वपापं विनाशयेत् १४९
शिवपूजापरो मौनी सत्यादिगुणसंयुतः
क्रियातपोजपज्ञानध्यानेष्वेकैकमाचरेत् १५०
ऐश्वर्यं दिव्यदेहश्च ज्ञानमज्ञानसंशयः
शिवसान्निध्यमित्येते क्रियादीनां फलं भवेत् १५१
करणेन फलं याति तमसः परिहापनात्
जन्मनः परिमार्जित्वाज्ज्ञबुद्ध्या जनितानि च १५२
यथादेशं यथाकालं यथादेहं यथाधनम्
यथायोग्यं प्रकुर्वीत क्रियादीञ्छिवभक्तिमान् १५३
न्यायार्जितसुवित्तेन वसेत्प्राज्ञः शिवस्थले
जीवहिंसादिरहितमतिक्लेशविवर्जितम् १५४

पंचाक्षरेण जप्तं च तोयमन्नं विदुः सुखम्
अथवाऽहुर्दरिद्रस्य भिक्षान्नंज्ञानदं भवेत् १५५
शिवभक्तस्य भिक्षान्नंशिवभक्तिविवर्धनम्
शंभुसत्रमिति प्राहुर्भिक्षान्नंशिवयोगिनः १५६
येन केनाप्युपायेन यत्र कुत्रापि भूतले
शुद्धान्नभुक्सदा मौनीरहस्यं न प्रकाशयेत् १५७
प्रकाशयेत्तु भक्तानां शिवमाहात्म्यमेव हि
रहस्यं शिवमंत्रस्य शिवो जानाति नापरः १५८
शिवभक्तो वसेन्नित्यं शिवलिंगं समाश्रितः
स्थाणुलिंगाश्रयेणैव स्थाणुर्भवति भूसुराः १५९
पूजया चरलिंगस्य क्रमान्मुक्तो भवेद्ध्रुवम्
सर्वमुक्तं समासेन साध्यसाधनमुत्तमम् १६०
व्यासेन यत्पुराप्रोक्तं यच्छ्रुतं हि मया पुरा
भद्रमस्तु हि वोऽस्माकं शिवभक्तिर्दृढाऽस्तुसा १६१
य इमं पठतेऽध्यायं यः शृणोति नरः सदा
शिवज्ञानं स लभतेशिवस्य कृपया बुधाः १६२

इति श्रीशैवेमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां साध्यसाधनखंडे
शिवलिंगमहिमावर्णनं नामाष्टादशोऽध्यायः १८

अध्याय १९

ऋषय ऊचुः
सूत सूत चिरंजीव धन्यस्त्वं शिवभक्तिमान्
सम्यगुक्तस्त्वयाल्लिंगमहिमाव्सत्फलप्रदः १
यत्र पार्थिवमाहेशलिंगस्य महिमाधुना
सर्वोत्कृष्टश्च कथितो व्यासतो ब्रूहि तं पुनः २

सूत उवाच
शृणुध्वमृषयः सर्वे सद्भक्त्या हरतो खिलाः
शिवपार्थिवलिंगस्य महिमा प्रोच्यते मया ३
उक्तेष्वेतेषु लिंगेषु पार्थिवं लिंगमुत्तमम्
तस्य पूजनतो विप्रा बहवः सिद्धिमागताः ४
हरिर्ब्रह्मा च ऋषयः सप्रजापतयस्तथा
संपूज्य पार्थिवं लिंगं प्रापुःसर्वेप्सितं द्विजाः ५
देवासुरमनुष्याश्च गंधर्वोरगराक्षसाः
अन्येपि बहवस्तं संपूज्य सिद्धिं गताः परम् ६
कृते रत्नमयं लिंगं त्रेतायां हेमसंभवम्
द्वापरे पारदं श्रेष्ठं पार्थिवं तु कलौ युगे ७
अष्टमूर्तिषु सर्वासु मूर्तिर्वै पार्थिवी वरा
अनन्यपूजिता विप्रास्तपस्तस्मान्महत्फलम् ८
यथा सर्वेषु देवेषु ज्येष्ठः श्रेष्ठो महेश्वरः
एवं सर्वेषु लिंगेषु पार्थिवं श्रेष्टमुच्यते ९
यथा नदीषु सर्वासु ज्येष्ठा श्रेष्ठा सुरापगा
तथा सर्वेषु लिंगेषु पार्थिवं श्रेष्ठमुच्यते १०
यथा सर्वेषु मंत्रेषु प्रणवो हि महान्स्मृतः
तथेदं पार्थिवं श्रेष्ठमाराध्यं पूज्यमेव हि ११
यथा सर्वेषु वर्णेषु ब्राह्मणःश्रेष्ठ उच्यते
तथा सर्वेषु लिंगेषु पार्थिवं श्रेष्ठमुच्यते १२
यथा पुरीषु सर्वासु काशीश्रेष्ठतमा स्मृता
तथा सर्वेषु लिंगेषु पार्थिवं श्रेष्ठमुच्यते १३
यथा व्रतेषु सर्वेषु शिवरात्रिव्रतं परम्
तथा सर्वेषु लिंगेषु पार्थिवं श्रेष्थमुच्यते १४

यथा देवीषु सर्वासु शैवीशक्तिः परास्मृता
तथा सर्वेषु लिंगेषु पार्थिवं श्रेष्ठमुच्यते १५
प्रकृत्यपार्थिवं लिंगं योन्यदेवं प्रपूजयेत्
वृथा भवति सा पूजा स्नानदानादिकं वृथा १६
पार्थिवाराधनं पुण्यं धन्यमायुर्विवर्धनम्
तुष्टिदं पुष्टिदंश्रीदं कार्यं साधकसत्तमैः १७
यथा लब्धोपचारैश्च भक्त्या श्रद्धासमन्वितः
पूजयेत्पार्थिवं लिंगं सर्वकामार्थसिद्धिदम् १८
यः कृत्वा पार्थिवं लिंगे पूजयेच्छुभवेदिकम्
इहैव धनवाञ्छ्रीमानंते रुद्रो भिजायते १९
त्रिसंध्यं योर्चयंल्लिंगं कृत्वा बिल्वेन पार्थिवम्
दशैकादशकंयावत्तस्य पुण्यफलं शृणु २०
अनेनैव स्वदेहेन रुद्रलोके महीयते
पापहं सर्वमर्त्यानां दर्शनात्स्पर्शनादपि २१
जीवन्मुक्तः स वैज्ञानी शिव एव न संशयः
तस्य दर्शनमात्रेण भुक्तिर्मुक्तिश्च जायते २२
शिवं यः पूजयेन्नित्यं कृत्वा लिंगं तु पार्थिवम्
यावज्जीवनपर्यंतं स याति शिवमन्दिरम् २३
मृडेनाप्रमितान्वर्षाञ्छिवलोकेहि तिष्ठति
सकामः पुनरागत्य राजेन्द्रो भारते भवेत् २४
निष्कामः पूजयेन्नित्यं पार्थिवंलिंगमुत्तमम्
शिवलोके सदा तिष्ठेत्ततः सायुज्यमाप्नुयात् २५
पार्थिवं शिवलिंगं च विप्रो यदि न पूजयेत्
स याति नरकं घोरं शूलप्रोतं सुदारुणम् २६
यथाकथंचिद्विधिना रम्यं लिंगं प्रकारयेत्

पंचसूत्रविधानां च पार्थिवेन विचारयेत् २७
अखराडं तद्धि कर्तव्यं न विखराडं प्रकारयेत्
द्विखराडं तु प्रकुर्वाणो नैव पूजाफलं लभेत् २८
रत्नजं हेमजं लिंगं पारदं स्फाटिकं तथा
पार्थिवं पुष्परागोत्थमखंडं तु प्रकारयेत् २९
अखंडं तु चरं लिंगं द्विखंडमचरं स्मृतम्
खंडाखंडविचारोयं सचराचरयोः स्मृतः ३०
वेदिका तु महाविद्या लिंगं देवो महेश्वरः
अतो हि स्थावरे लिंगे स्मृता श्रेष्ठादिखंडिता ३१
द्विखंडं स्थावरं लिंगं कर्तव्यं हि विधानतः
अखंडं जंगमं प्रोक्तंश् ऐवसिद्धान्तवेदिभिः ३२
द्विखंडं तु चरां लिंगं कुर्वन्त्यज्ञानमोहिताः
नैव सिद्धान्तवेत्तारो मुनयः शास्त्रकोविदाः ३३
अखंडं स्थावरं लिंगं द्विखंडं चरमेव च
येकुर्वन्तिनरामूढानपूजाफलभागिनः ३४
तस्माच्छास्त्रोक्तविधिना अखंडं चरसंज्ञकम्
द्विखंडं स्थावरं लिंगं कर्तव्यं परया मुदा ३५
अखंडे तु चरे पूजा सम्पूर्णफलदायिनी
द्विखंडे तु चरे पूजामहाहानिप्रदा स्मृता ३६
अखंडे स्थावरे पूजा न कामफलदायिनी
प्रत्यवायकरी नित्यमित्युक्तं शास्त्रवेदिभिः ३७

इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां साध्यसाधनखंडे
पार्थिवशिवलिंगपूजनमाहात्म्यवर्णनं नामैकोनविंशोऽध्यायः १९

अध्याय २०

सूत उवाच
अथ वैदिकभक्तानां पार्थिवार्चां निगद्यते
वैदिकेनैव मार्गेण भुक्तिमुक्तिप्रदायिनी १
सूत्रोक्तविधिना स्नात्वा संध्यां कृत्वा यथाविधि
ब्रह्मयज्ञं विधायादौ ततस्तर्प्पणमाचरेत् २
नैत्यिकं सकलं कामं विधायानंतरं पुमान्
शिवस्मरणपूर्वं हि भस्मरुद्राक्षधारकः ३
वेदोक्ताविधिना सम्यक्संपूर्णफलसिद्धये
पूजयेत्परया भक्त्या पार्थिवं लिंगमुत्तमम् ४
नदीतीरे तडागे च पर्वते काननेऽपि च
शिवालये शुचौ देशे पार्थिवार्चा विधीयते ५
शुद्धप्रदेशसंभूतां मृदमाहृत्य यत्नतः
शिवलिंगं प्रकल्पेत सावधानतया द्विजाः ६
विप्रे गौरा स्मृता शोणा बाहुजे पीतवर्णका
वैश्ये कृष्णा पादजाते ह्यथवा यत्र या भवेत् ७
संगृह्य मृत्तिकां लिंगनिर्माणार्थं प्रयत्नतः
अतीव शुभदेशे च स्थापयेत्तां मृदं शुभाम् ८
संशोध्य च जलेनापि पिंडीकृत्य शनैः शनैः
विधीयेत शुभं लिंगं पार्थिवं वेदमार्गतः ९
ततः संपूजयेद्भक्त्या भुक्तिमुक्तिफलाप्तये
तत्प्रकारमहं वच्मि शृणुध्वं संविधानतः १०
नमः शिवाय मंत्रेणार्चनद्रव्यं च प्रोक्षयेत्
भूरसीति च मंत्रेण क्षेत्रसिद्धिं प्रकारयेत् ११
आपोस्मानिति मंत्रेण जलसंस्कारमाचरेत्

नमस्ते रुद्रमंत्रेण फाटिकाबंधमुच्यते १२
शंभवायेति मंत्रेण क्षेत्रशुद्धिं प्रकारयेत्
नमः पूर्वेण कुर्यात्पंचामृतस्यापि प्रोक्षणम् १३
नीलग्रीवाय मंत्रेण नमःपूर्वेण भक्तिमान्
चरेच्छंकरलिंगस्य प्रतिष्ठापनमुत्तमम् १४
भक्तितस्तत एतत्ते रुद्रायेति च मंत्रतः
आसनं रमणीयं वै दद्याद्वैदिकमार्गकृत् १५
मानो महन्तमिति च मंत्रेणावाहनं चरेत्
याते रुद्रेण मंत्रेण संचरेदुपवेशनम् १६
मंत्रेण यामिषुमिति न्यासं कुर्य्याच्छिवस्य च
अध्यवोचदिति प्रेम्णाधिवासं मनुनाचरेत् १७
मनुना सौजीव इति देवतान्यासमाचरेत्
असौ योवसर्पतीति चाचरेदपसर्पणम् १८
नमोस्तु नीलग्रीवायेति पाद्यं मनुनाहरेत्
अर्घ्यं च रुद्रगायत्र्याऽचमनं त्र्यंबकेण च १९
पयः पृथिव्यामिति च पयसा स्नानमाचरेत्
दधिक्राव्णेतिमंत्रेण दधिस्नानं च कारयेत् २०
घृटं स्नाने खलु घृतं घृतं यावेति मंत्रतः
मधुवाता मधुनक्तं मधुमान्न इति त्र्यृचा २१
मधुखंडस्नपनं प्रोक्तमिति पंचामृतं स्मृतम्
अथवा पाद्यमंत्रेण स्नानं पंचामृतेन च २२
मानस्तोके इति प्रेम्णा मंत्रेण कटिबंधनम्
नमो धृष्णवे इति वा उत्तरीयं च धापयेत् २३
या ते हेतिरिति प्रेम्णा ऋक्चतुष्केण वैदिकः
शिवाय विधिना भक्तश्चरेद्वस्त्रसमर्पणम् २४

नमः श्वभ्य इति प्रेम्णा गंधं दद्यादृचा सुधीः
नमस्तक्षभ्य इति चाक्षतान्मंत्रेण चार्पयेत् २५
नमः पार्याय इति वा पुष्प मंत्रेण चार्पयेत्
नमः पर्णाय इति वा बिल्बपत्रसमर्पणम् २६
नमः कपर्दिने चेति धूपं दद्याद्यथाविधि
दीपं दद्याद्यथोक्तं तु नम आशव इत्यृचा २७
नमो ज्येष्ठाय मंत्रेण दद्यान्नैवेद्यमुत्तमम्
मनुना त्र्यम्बकमिति पुनराचमनं स्मृतम् २८
इमा रुद्रायेति ऋचा कुर्यात्फलसमर्पणम्
नमो व्रज्यायेति ऋचा सकलं शंभवेर्पयेत् २९
मानो महांतमिति च मानस्तोके इति ततः
मंत्रद्वयेनैकदशाक्षतै रुद्रान्प्रपूजयेत् ३०
हिरण्यगर्भ इति त्र्यृचा दक्षिणां हि समर्पयेत्
देवस्य त्वेति मंत्रेण ह्यभिषेकं चरेद्बुधः ३१
दीपमंत्रेण वा शंभोर्नीराजनविधिं चरेत्
पुष्पांजलिं चरेद्भक्त्या इमा रुद्राय च त्र्यृचा ३२
मानो महान्तमिति च चरेत्प्राज्ञः प्रदक्षिणाम्
मानस्तोकेति मंत्रेण साष्टाङ्गं प्रणमेत्सुधीः ३३
एषते इति मंत्रेण शिवमुद्रां प्रदर्शयेत्
यतोयत इत्यभयां ज्ञानाख्यां त्र्यंबकेण च ३४
नमःसेनेति मंत्रेण महामुद्रां प्रदर्शयेत्
दर्शयेद्धेनुमुद्रां च नमो गोभ्य ऋचानया ३५
पंचमुद्राः प्रदर्श्याथ शिवमंत्रजपं चरेत्
शतरुद्रियमंत्रेण जपेद्वेदविचक्षणः ३६
ततः पंचाङ्गपाठं च कुर्य्याद्वेदविचक्षणः

देवागात्विति मंत्रेण कुर्याच्छंभोर्विसर्जनम् ३७
इत्युक्तः शिवपूजाया व्यासतो वैदिकोविधिः
समासतश्च शृणुत वैदिकं विधिमुत्तमम् ३८
ऋचा सद्योजातमिति मृदाहरणमाचरेत्
वामदेवाय इति च जलप्रक्षेपमाचरेत् ३९
अघोरेण च मंत्रेण लिंगनिर्माणमाचरेत्
तत्पुरुषाय मंत्रेणाह्वानं कुर्याद्यथाविधि ४०
संयोजयेद्वेदिकायामीशानमनुना हरम्
अन्यत्सर्वं विधानं च कुर्य्यात्संक्षेपतः सुधीः ४१
पंचाक्षरेण मंत्रेण गुरुदत्तेन वा तथा
कुर्यात्पूजां षोडशोपचारेण विधिवत्सुधीः ४२
भवाय भवनाशाय महादेवाय धीमहि
उग्राय उग्रनाशाय शर्वाय शशिमौलिने ४३
अनेन मनुना वापि पूजयेच्छंकरं सुधीः
सुभक्त्या च भ्रमं त्यक्त्वा भक्त्यैव फलदः शिवः ४४
इत्यपि प्रोक्तमादृत्य वैदिकक्रमपूजनम्
प्रोच्यतेन्यविधिः सम्यक्साधारणतया द्विजः ४५
पूजा पार्थिवलिंगस्य संप्रोक्ता शिवनामभिः
तां शृणुध्वं मुनिश्रेष्ठाः सर्वकामप्रदायिनीम् ४६
हरो महेश्वरः शंभुः शूलपाणिः पिनाकधृक्
शिवः पशुपतिश्चैव महादेव इति क्रमात् ४७
मृदाहरणसंघट्टप्रतिष्ठाह्वानमेव च
स्नपनं पूजनं चैव क्षमस्वेति विसर्जनम् ४८
ओंकारादिचतुर्थ्यंतैर्नमोन्तैर्नामभिः क्रमात्
कर्तव्या च क्रिया सर्वा भक्त्या परमया मुदा ४९

कृत्वा न्यासविधिं सम्यद्धडण्गकरयोस्तथा
षडद्धरेण मंत्रेण ततो ध्यानं समाचरेत् ५०
कैलासपीठासनमध्यसंस्थं भक्तैः सनंदादिभिरर्च्यमानम्
भक्तार्तिदावानलमप्रमेयं ध्यायेदुमालिंगितविश्वभूषणम् ५१
ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचंद्रावतंसं रत्नाकल्पोज्ज्वलांगं
परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्
पद्मासीनं समंतात्स्थितममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिं वसानं विश्वाद्यं
विश्वबीजं निखिलभयहरं पंचवक्त्रं त्रिनेत्रम् ५२
इति ध्यात्वा च संपूज्य पार्थिवं लिंगमुत्तमम्
जपेत्पंचाद्धरं मंत्रं गुरुदत्तं यथाविधि ५३
स्तुतिभिश्चैव देवेशं स्तुवीत प्रणमन्सुधीः
नानाभिधाभिर्विप्रेन्द्राः पठेद्वै शतरुद्रियम् ५४
ततः साद्धतपुष्पाणि गृहीत्वांजलिना मुदा
प्रार्थयेच्छंकरं भक्त्या मंत्रैरेभिः सुभक्तितः ५५
तावकस्त्वद्गुणप्राणस्त्वच्चित्तोहं सदा मृड
कृपानिध इति ज्ञात्वा भूतनाथ प्रसीद मे ५६
अज्ञानाद्यदि वा ज्ञानाज्जप पूजादिकं मया
कृतं तदस्तु सफलं कृपया तव शंकर ५७
अहं पापी महानद्य पावनश्च भवान्महान्
इति विज्ञाय गौरीश यदिच्छसि तथा कुरु ५८
वेदैः पुराणैः सिद्धान्तैर्ऋषिभिर्विविधैरपि
न ज्ञातोसि महादेव कुतोहं त्वं महाशिव ५९
यथा तथा त्वदीयोस्मि सर्वभावैर्महेश्वर
रक्षणीयस्त्वयाहं वै प्रसीद परमेश्वर ६०
इत्येवं चाद्धतान्पुष्पानारोप्य च शिवोपरि

प्रणमेद्भक्तितश्शंभुं साष्टांगं विधिवन्मुने ६१
ततः प्रदक्षिणां कुर्याद्यथोक्तविधिना सुधीः
पुनः स्तुवीत देवेशं स्तुतिभिः श्रद्धयान्वितः ६२
ततो गलरवं कृत्वा प्रणमेच्छुचिनम्रधीः
कुर्याद्विज्ञप्तिमादृत्य विसर्जनमथाचरेत् ६३
इत्युक्ता मुनिशार्दूलाः पार्थिवार्चा विधानतः
भुक्तिदा मुक्तिदा चैव शिवभक्तिविवर्धिनी ६४
इत्यध्यायं सुचित्तेन यः पठेच्छृणुयादपि
सर्वपापविशुद्धात्मासर्वान्कामानवाप्नुयात् ६५
आयुरायोग्यदं चैव यशस्यं स्वर्ग्यमेव च
पुत्रपौत्रादिसुखदमाख्यानमिदमुत्तमम् ६६

इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां साध्यसाधनखण्डे
पार्थिवशिवलिंगपूजाविधिवर्णनं नाम विंशोऽध्यायः २०

अध्याय २१

ऋषय ऊचुः
सूत सूत महाभाग व्यासशिष्य नमोस्तु ते
सम्यगुक्तं त्वया तात पार्थिवार्चाविधानकम् १
कामनाभेदमाश्रित्य संख्यां ब्रूहि विधानतः
शिवपार्थिवलिंगानां कृपया दीनवत्सल २
सूत उवाच
शृणुध्वमृषयः सर्वे पार्थिवार्चाविधानकम्
यस्यानुष्ठानमात्रेण कृतकृत्यो भवेन्नरः ३
अकृत्वा पार्थिवं लिंगं योन्यदेवं प्रपूजयेत्
वृथा भवति सा पूजा दमदानादिकं वृथा ४

संख्या पार्थिवलिंगानां यथाकामं निगद्यते
संख्या सद्यो मुनिश्रेष्ठ निश्चयेन फलप्रदा ५
प्रथमावाहनं तत्र प्रतिष्ठा पूजनं पृथक्
लिंगाकारं समं तत्र सर्वं ज्ञेयं पृथक्पृथक् ६
विद्यार्थी पुरुषः प्रीत्या सहस्रमितपार्थिवम्
पूजयेच्छिवलिंगं हि निश्चयात्तत्फलप्रदम् ७
नरः पार्थिवलिंगानां धनार्थी च तदर्द्धकम्
पुत्रार्थी सार्द्धसाहस्रं वस्त्रार्थी शतपंचक्रम् ८
मोक्षार्थी कोटिगुणितं भूकामश्च सहस्रकम्
दयार्थी च त्रिसाहस्रं तीर्थार्थी द्विसहस्रकम् ९
सुहृत्कामी त्रिसाहस्रं वश्यार्थी शतमष्टकम्
मारणार्थी सप्तशतं मोहनार्थी शताष्टकम् १०
उच्चाटनपरश्चैव सहस्रं च यथोक्ततः
स्तंभनार्थी सहस्रं तु द्वेषणार्थी तदर्द्धकम् ११
निगडान्मुक्तिकामस्तु सहस्रं सर्द्धमुत्तमम्
महाराजभये पंचशतं ज्ञेयं विचक्षणैः १२
चौरादिसंकटे ज्ञेयं पार्थिवानां शतद्वयम्
डाकिन्यादिभये पंचशतमुक्तं जपार्थिवम् १३
दारिद्र्ये पंचसाहस्रमयुतं सर्वकामदम्
अथ नित्यविधिं वक्ष्ये शृणुध्वं मुनिसत्तमाः १४
एकं पापहरं प्रोक्तं द्विलिंगं चार्थसिद्धिदम्
त्रिलिंगं सर्वकामानां कारणं परमीरितम् १५
उत्तरोत्तरमेवं स्यात्पूर्वोक्तगणनाविधि
मतांतरमथो वक्ष्ये संख्यायां मुनिभेदतः १६
लिंगानामयुतं कृत्वा पार्थिवानां सुबुद्धिमान्

निर्भयो हि भवेन्नूनं महाराजभयं हरेत् १७
कारागृहादिमुक्त्यर्थमयुतं कारयेद्बुधः
डाकिन्यादिभये सप्तसहस्रं कारयेत्तथा १८
सहस्राणि पंचपंचाशदपुत्रः प्रकारयेत्
लिंगानामयुतेनैव कन्यकासंततिं लभेत् १९
लिंगानामयुतेनैव विष्णवादैश्वर्यमाप्नुयात्
लिंगानां प्रयुतेनैव ह्यतुलां श्रियमाप्नुयात् २०
कोटिमेकां तु लिंगानां यः करोति नरो भुवि
शिव एव भवेत्सोपि नात्र कार्य्या विचारणा २१
अर्चा पार्थिवलिंगानां कोटियज्ञफलप्रदा
भुक्तिदा मुक्तिदा नित्यं ततः कामर्थिनां नृणाम् २२
विना लिंगार्चनं यस्य कालो गच्छति नित्यशः
महाहानिर्भवेत्तस्य दुर्वृत्तस्य दुरात्मनः २३
एकतः सर्वदानानि व्रतानि विविधानि च
तीर्थानि नियमा यज्ञा लिंगार्चा चैकतः स्मृता २४
कलौ लिंगार्चनं श्रेष्ठं तथा लोके प्रदृश्यते
तथा नास्तीति शास्त्राणामेष सिद्धान्तनिश्चयः २५
भुक्तिमुक्तिप्रदं लिंगं विविधापन्निवारणम्
पूजयित्वा नरो नित्यं शिवसायुज्यमाप्नुयात् २६
शिवानाममयं लिंगं नित्यं पूज्यं महर्षिभिः
यतश्च सर्वलिंगेषु तस्मात्पूज्यं विधानतः २७
उत्तमं मध्यमं नीचं त्रिविधं लिंगमीरितम्
मानतो मुनिशार्दूलास्तच्छृणुध्वं वदाम्यहम् २८
चतुरंगुलमुच्छ्रायं रम्यं वेदिकया युतम्
उत्तमं लिंगमाख्यातं मुनिभिः शास्त्रकोविदैः २९

तदर्द्धं मध्यमं प्रोक्तं तदर्द्धमधमं स्मृतम्
इत्थं त्रिविधमाख्यातमुत्तरोत्तरतः परम् ३०
अनेकलिंगं यो नित्यं भक्तिश्रद्धासमन्वितः
पूजयेत्स लभेत्कामान्मनसा मानसेप्सितान् ३१
न लिंगाराधनादन्यत्पुण्यं वेदचतुष्टये
विद्यते सर्वशास्त्राणामेष एव विनिश्चयः ३२
सर्वमेतत्परित्यज्य कर्मजालमशेषतः
भक्त्या परमया विद्वाँल्लिंगमेकं प्रपूजयेत् ३३
लिंगेर्चितेर्चितं सर्वं जगत्स्थावरजंगमम्
संसारांबुधिमग्नानां नान्यत्तारणसाधनम् ३४
अज्ञानतिमिरांधानां विषयासक्तचेतसाम्
प्लवो नान्योस्ति जगति लिंगाराधनमंतरा ३५
हरिब्रह्मादयो देवा मुनयो यक्षराक्षसाः
गंधर्वाश्चरणास्सिद्धा दैतेया दानवास्तथा ३६
नागाः शेषप्रभृतयो गरुडाद्याःखगास्तथा
सप्रजापतयश्चान्ये मनवः किन्नरा नराः ३७
पूजयित्वा महाभक्त्या लिंगं सर्वार्थसिद्धिदम्
प्राप्ताः कामानभीष्टांश्च तांस्तान्सर्वान्हृदि स्थितान् ३८
ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वा प्रतिलोमजः
पूजयेत्सततं लिंगं तत्तन्मंत्रेण सादरम् ३९
किं बहूक्तेन मुनयः स्त्रीणामपि तथान्यतः
अधिकारोस्ति सर्वेषां शिवलिंगार्चने द्विजाः ४०
द्विजानां वैदिकेनापि मार्गेणाराधनं वरम्
अन्येषामपि जंतूनां वैदिकेन न संमतम् ४१
वैदिकानां द्विजानां च पूजा वैदिकमार्गतः

कर्तव्यानान्यमार्गेण इत्याह भगवाञ्छिवः ४२
दधीचिगौतमादीनां शापेनादग्धचेतसाम्
द्विजानां जायते श्रद्धानैव वैदिककर्मणि ४३
यो वैदिकमनादृत्य कर्म स्मार्तमथापि वा
अन्यत्समाचरेन्मर्त्यो न संकल्पफलं लभेत् ४४
इत्थं कृत्वार्चनं शंभोर्नैवेद्यांतं विधानतः
पूजयेदष्टमूर्तीश्च तत्रैव त्रिजगन्मयीः ४५
क्षितिरापोनलो वायुराकाशः सूर्य्यसोमकौ
यजमान इति त्वष्टौ मूर्तयः परिकीर्तिताः ४६
शर्वो भवश्च रुद्रश्च उग्रोभीम इतीश्वरः
महादेवः पशुपतिरेतान्मूर्तिभिरर्चयेत् ४७
पूजयेत्परिवारं च ततः शंभोः सुभक्तितः
ईशानादिक्रमात्तत्र चंदनाक्षतपत्रकैः ४८
ईशानं नंदिनं चंडं महाकालं च भृंगिणम्
वृषं स्कंदं कपर्दीशं सोमं शुक्रं च तत्क्रमात् ४९
अग्रतो वीरभद्रं च पृष्ठे कीर्तिमुखं तथा
तत एकादशान्रुद्रान्पूजयेद्विधिना ततः ५०
ततः पंचाक्षरं जप्त्वा शतरुद्रियमेव च
स्तुतीर्नानाविधाः कृत्वा पंचांगपठनं तथा ५१
ततः प्रदक्षिणां कृत्वा नत्वा लिंगं विसर्जयेत्
इति प्रोक्तमशेषं च शिवपूजनमादरात् ५२
रात्रावुदङ्मुखः कुर्याद्देवकार्यं सदैव हि
शिवार्चनं सदाप्येवं शुचिः कुर्यादुदङ्मुखः ५३
न प्राचीमग्रतः शंभोर्नोदीचीं शक्तिसंहितान्
न प्रतीचीं यतः पृष्ठमतो ग्राह्यं समाश्रयेत् ५४

विना भस्मत्रिपुंड्रेण विना रुद्राक्षमालया
बिल्वपत्रं विना नैव पूजयेच्छंकरं बुधः ५५
भस्माप्राप्तौ मुनिश्रेष्ठाः प्रवृत्ते शिवपूजने
तस्मान्मृदापि कर्तव्यं ललाटे च त्रिपुंड्रकम् ५६

इति श्रीशिवमहापुराणे प्रथमायां विद्येश्वरसंहितायां
साध्यसाधनखण्डे पार्थिवपूजनवर्णनं नामैकविंशोऽध्यायः २१

अध्याय २२

ऋष्य ऊचुः
अग्राह्यं शिवनैवेद्यमिति पूर्वं श्रुतं वचः
ब्रूहि तन्निर्णयं बिल्वमाहात्म्यमपि सन्मुने १
सूत उवाच
शृणुध्वं मुनयः सर्वे सावधानतयाधुना
सर्वं वदामि संप्रीत्या धन्या यूयं शिवव्रताः २
शिवभक्तः शुचिः शुद्धः सद्व्रतीदृढनिश्चयः
भक्षयेच्छिवनैवेद्यं त्यजेदग्राह्यभावनाम् ३
दृष्ट्वापि शिवनैवेद्ये यांति पापानि दूरतः
भक्ते तु शिवनैवेद्ये पुण्यान्या यांति कोटिशः ४
अलं यागसहस्रेणाप्यलं यागार्बुदैरपि
भक्षिते शिवनैवेद्ये शिवसायुज्यमाप्नुयात् ५
यद्गृहे शिवनैवेद्यप्रचारोपि प्रजायते
तद्गृहं पावनं सर्वमन्यपावनकारणम् ६
आगतं शिवनैवेद्यं गृहीत्वा शिरसा मुदा
भक्षणीयं प्रयत्ने न शिवस्मरणपूर्वकम् ७
आगतं शिवनैवेद्यमन्यदा ग्राह्यमित्यपि

विलंबे पापसंबंधो भवत्येव हि मानवे ८
न यस्य शिवनैवेद्यग्रहणेच्छा प्रजायते
सपापिष्ठो गरिष्ठः स्यान्नरकं यात्यपि ध्रुवम् ९
हृदये चन्द्रकान्ते च स्वर्णरूप्यादिनिर्मिते
शिवदीक्षावता भक्तेनेदं भक्ष्यमितीर्य्यते १०
शिवदीक्षान्वितो भक्तो महाप्रसादसंज्ञकम्
सर्वेषामपि लिंगानां नैवेद्यं भक्षयेच्छुभम् ११
अन्यदीक्षायुजां नृ-णां शिवभक्तिरतात्मनाम्
शृणुध्वं निर्णयंप्रीत्याशिवनैवेद्यभक्षणे १२
शालग्रामोद्भवे लिंगे रसलिंगे तथा द्विजाः
पाषाणे राजते स्वर्णे सुरसिद्धप्रतिष्ठिते १३
काश्मीरे स्फाटिके रात्ने ज्योतिर्लिंगेषु सर्वशः
चान्द्रायणसमं प्रोक्तं शंभोर्नैवेद्यभक्षणम् १४
ब्रह्महापि शुचिर्भूत्वा निर्माल्यं यस्तु धारयेत्
भक्षयित्वा द्रुतं तस्य सर्वपापं प्रणश्यति १५
चंडाधिकारो यत्रास्ति तद्भाक्तव्यं न मानवैः
चंडाधिकारो नो यत्र भोक्तव्यं तच्च भक्तितः १६
बाणलिंगे च लौहे च सिद्धे लिंगे स्वयंभुवि
प्रतिमासु च सर्वासु न चंडोधिकृतो भवेत् १७
स्नापयित्वा विधानेन यो लिंगस्नापनोदकम्
त्रिःपिबेत्त्रिविधं पापं तस्येहाशु विनश्यति १८
अग्राह्यं शिवनैवेद्यं पत्रं पुष्पं फलं जलम्
शालग्रामशिलासंगात्सर्वं याति पवित्रिताम् १९
लोंगोपरि च यद्द्रव्यं तदग्राह्यं मुनीश्वराः
सुपवित्रं च तज्ज्ञेयं यल्लिंगस्पर्शबाह्यतः २०

नैवेद्यनिर्णयः प्रोक्त इत्थं वो मुनिसत्तमाः
शृणुध्वं बिल्वमाहात्म्यं सावधानतयाऽदरात् २१
महादेवस्वरूपोयं बिल्वो देवैरपि स्तुतिः
यथाकथंचिदेतस्य महिमा ज्ञायते कथम् २२
पुण्यतीर्थानि यावंति लोकेषु प्रथितान्यपि
तानि सर्वाणि तीर्थानिबिल्वमूलेव संति हि २३
बिल्वमूले महादेवं लिंगरूपिणमव्ययम्
यः पूजयति पुण्यात्मा स शिवं प्राप्नुयाद्ध्रुवम् २४
बिल्वमूले जलैर्यस्तु मूर्द्धानमभिषिंचति
स सर्वतीर्थस्नातः स्यात्स एव भुवि पावनः २५
एतस्य बिल्वमूलस्याथालवालमनुत्तमम्
जलाकुलं महादेवो दृष्ट्वा तु ष्टोभवत्यलम् २६
पूजयेद्बिल्वमूलं यो गंधपुष्पादिभिर्नरः
शिवलोकमवाप्नोति संततिर्वर्द्धते सुखम् २७
बिल्वमूले दीपमालां यः कल्पयति सादरम्
स तत्त्वज्ञानसंपन्नो महेशांतर्गतो भवेत् २८
बिल्वशाखां समादाय हस्तेन नवपल्लवम्
गृहीत्वा पूजयेद्बिल्वं स च पापैः प्रमुच्यते २९
बिल्वमूले शिवरतं भोजयेद्यस्तु भक्तितः
एकं वा कोटिगुणितं तस्य पुण्यं प्रजायते ३०
बिल्वमूले क्षीरमुक्तमन्नमाज्येन संयुतम्
यो दद्याच्छिवभक्ताय स दरिद्रो न जायते ३१
सांगोपांगमिति प्रोक्तं शिवलिंगप्रपूजनम्
प्रवृत्तानां निवृत्तानां भेदतो द्विविधं द्विजाः ३२
प्रवृत्तानां पीठपूजां सर्वपूजां समाचरेत्

अभिषेकान्ते नैवेद्यं शाल्यन्नेन समाचरेत्
पूजान्ते स्थापयेल्लिंगं पुटे शुद्धे पृथग्गृहे ३४
करपूजानिवृत्तानां स्वभोज्यं तु निवेदयेत्
निवृत्तानां परं सूक्ष्मं लिंगमेव विशिष्यते ३५
विभूत्यभ्यर्चनं कुर्याद्विभूतिं च निवेदयेत्
पूजां कृत्वा तथा लिंगं शिरसाधारयेत्सदा ३६

इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां साध्यसाधनखण्डे
शिवनैवेद्यवर्णनोनामद्वाविंशोऽध्यायः २२

अध्याय २३

ऋषय ऊचुः
सूत सूत महाभाग व्यासशिष्य नमोस्तु ते
तदेव व्यासतो ब्रूहि भस्ममाहात्म्यमुत्तमम् १
तथा रुद्राक्षमाहात्म्यं नाम माहात्म्यमुत्तमम्
त्रितयं ब्रूहि सुप्रीत्या ममानंदयचेतसम् २
सूत उवाच
साधुपृष्टं भवद्भिश्च लोकानां हितकारकम्
भवंतो वै महाधन्याः पवित्राः कुलभूषणाः ३
येषां चैव शिवः साक्षाद्दैवतं परमं शुभम्
सदा शिवकथा लोके वल्लभा भवतां सदा ४
ते धन्याश्च कृतार्थाश्च सफलं देहधारणम्
उद्धृतञ्च कुलं तेषां ये शिवं समुपासते ५
मुखे यस्य शिवनाम सदाशिवशिवेति च
पापानि न स्पृशंत्येव खदिरांगारंकयथा ६
श्रीशिवाय नमस्तुभ्यं मुखं व्याहरते यदा

तन्मुखं पावनं तीर्थं सर्वपापविनाशनम् ७
तन्मुखञ्च तथा यो वै पश्यतिप्रीतिमान्नरः
तीर्थजन्यं फलं तस्य भवतीति सुनिश्चितम् ८
यत्र त्रयं सदा तिष्ठेदेतच्छुभतरं द्विजा
तस्य दर्शनमात्रेण वेणीस्नानफलंलभेत् ९
शिवनामविभूतिश्च तथा रुद्राक्ष एव च
एतत्त्रयं महापुण्यं त्रिवेणीसदृशं स्मृतम् १०
एतत्त्रयं शरीरे च यस्य तिष्ठति नित्यशः
तस्यैव दर्शनं लोके दुर्लभं पापहारकम् ११
तद्दर्शनं यथा वेणी नोभयोरंतरं मनाक्
एवं योनविजानाति सपापिष्ठो न संशयः १२
विभूतिर्यस्य नो भाले नांगे रुद्राक्षधारणम्
नास्ये शिवमयी वाणी तं त्यजेदधमं यथा १३
शैवं नाम यथा गंगा विभूतिर्यमुना मता
रुद्राक्षं विधिना प्रोक्ता सर्वपापाविनाशिनी १४
शरीरे च त्रयं यस्य तत्फलं चैकतः स्थितम्
एकतो वेणिकायाश्च स्नानजंतुफलं बुधैः १५
तदेवं तुलितं पूर्वं ब्रह्मणाहितकारिणा
समानं चैव तज्ज्ञातं तस्माद्धार्यं सदा बुधैः १६
तद्दिनं हि समारभ्य ब्रह्मविष्णवादिभिः सरैः
धार्यते त्रितयं तच्च दर्शनात्पापहारकम् १७
ऋष्य ऊचुः
ईदृशं हि फलं प्रोक्तं नामादित्रितयोद्भवम्
तन्माहात्म्यं विशेषेण वक्तुमर्हसि सुव्रत १८
सूत उवाच

ऋषयो हि महाप्राज्ञाः सच्छैवा ज्ञानिनां वराः
तन्माहात्म्यं हि सद्भक्त्या शृणुतादरतो द्विजाः १९
सुगूढमपि शास्त्रेषु पुराणेषु श्रुतिष्वपि
भवत्स्नेहान्मया विप्राः प्रकाशः क्रियतेऽधुना २०
कस्तत्त्रितयमाहात्म्यं संजानाति द्विजोत्तमाः
महेश्वरं विना सर्वं ब्रह्माण्डे सदसत्परम् २१
वच्म्यहं नाम माहात्म्यं यथाभक्ति समासतः
शृणुत प्रीतितो विप्राः सर्वपापहरं परम् २२
शिवेति नामदावाग्नेर्महापातकपर्वताः
भस्मीभवंत्यनायासात्सत्यंसत्यं न संशयः २३
पापमूलानि दुःखानि विविधान्यपि शौनक
शिवनामैकनश्यानि नान्यनश्यानि सर्वथा २४
स वैदिकः स पुण्यात्मा स धन्यस्स बुधो मतः
शिवनामजपासक्तो यो नित्यं भुवि मानव २५
भवंति विविधा धर्मास्तेषां सद्यः फलोन्मुखाः
येषां भवति विश्वासः शिवनामजपे मुने २६
पातकानि विनश्यंति यावंति शिवनामतः
भुवि तावंति पापानि क्रियंते न नरैर्मुने २७
ब्रह्महत्यादिपापानां राशीनप्रमितान्मुने
शिवनाम द्रुतं प्रोक्तं नाशयत्यखिलान्नरैः २८
शिवनामतरीं प्राप्य संसाराब्धिं तरंति ये
संसारमूलपापानि तानि नश्यंत्यसंशयम् २९
संसारमूलभूतानां पातकानां महामुने
शिवनामकुठारेण विनाशो जायते ध्रुवम् ३०
शिवनामामृतं पेयं पापदावानलार्दितैः

पापदावाग्नितप्तानां शांतिस्तेन विना न हि ३१
शिवेति नामपीयूषवर्षधारापरिप्लुताः
संसारदवमध्येपि न शोचंति कदाचन ३२
शिवनाम्नि महद्भक्तिर्जाता येषां महात्मनाम्
तद्विधानां तु सहसा मुक्तिर्भवति सर्वथा ३३
अनेकजन्मभिर्येन तपस्तप्तं मुनीश्वर
शिवनाम्नि भवेद्भक्तिः सर्वपापापहारिणी ३४
यस्या साधारणं शंभुनाम्नि भक्तिरखंडिता
तस्यैव मोक्षः सुलभो नान्यस्येति मतिर्मम ३५
कृत्वाप्यनेकपापानि शिवनामजपादरः
सर्वपापविनिर्मुक्तो भवत्येव न संशयः ३६
भवंति भस्मसाद्भक्षा दवदग्धा यथा वने
तथा तावंति दग्धानि पापानि शिवनामतः ३७
यो नित्यं भस्मपूतांगः शिवनामजपादरः
संतरत्येव संसारं सघोरमपि शौनक ३८
ब्रह्मस्वहरणं कृत्वा हत्वापि ब्राह्मणान्बहून्
न लिप्यते नरः पापैः शिवनामजपादरः ३९
विलोक्य वेदानखिलाञ्छिवनामजपः परम्
संसारतारणोपाय इति पूर्वैर्विनिश्चितः ४०
किं बहूक्त्या मुनिश्रेष्ठाः श्लोकेनैकेन वच्म्यहम्
शिवनाम्नो महिमानं सर्वपापापहारिणम् ४१
पापानां हरणे शंभोर्नामः शक्तिर्हि पावनी
शक्नोति पातकं तावत्कर्तुं नापि नरः क्वचित् ४२
शिवनामप्रभावेण लेभे सद्गतिमुत्तमाम्
इन्द्रद्युम्ननृपः पूर्वं महापापः पुरामुने ४३

तथा काचिद्द्विजायोषा सौ मुने बहुपापिनी
शिवनामप्रभावेण लेभे सद्गतिमुत्तमाम् ४४
इत्युक्तं वो द्विजश्रेष्ठा नाममाहात्म्यमुत्तमम्
शृणुध्वं भस्ममाहात्म्यं सर्वपावनपावनम् ४५

इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां
साध्यसाधनखंडेशिवनममाहात्म्यवर्णनोनामत्रयोविंशोऽध्यायः २३

अध्याय २४

सूत उवाच
द्विविधं भस्म संप्रोक्तं सर्वमंगलदं परम्
तत्प्रकारमहं वक्ष्ये सावधानतया शृणु १
एकं ज्ञेयं महाभस्म द्वितीयं स्वल्पसंज्ञकम्
महाभस्म इति प्रोक्तं भस्म नानाविधं परम् २
तद्भस्म त्रिविधं प्रोक्तं श्रोतं स्मार्तं च लौकिकम्
भस्मैव स्वल्पसंज्ञं हि बहुधा परिकीर्तितम् ३
श्रौतं भस्म तथा स्मार्तं द्विजानामेव कीर्तितम्
अन्येषामपि सर्वेषामपरं भस्म लौकिकम् ४
धारणं मंत्रतः प्रोक्तं द्विजानां मुनिपुंगवैः
केवलं धारणं ज्ञेयमन्येषां मंत्रवर्जितम् ५
आग्नेयमुच्यते भस्म दग्धगोमयसंभवम्
तदापि द्रव्यमित्युक्तं त्रिपुंड्रस्य महामुने ६
अग्निहोत्रोत्थितं भस्मसंग्राह्यं वा मनीषिभिः
अन्ययज्ञोत्थितं वापि त्रिपुण्ड्रस्य च धारणे ७
अग्निरित्यादिभिर्मंत्रैर्जाबालोपनिषद्गतैः
सप्तभिर्धूलनं कार्यं भस्मना सजलेन च ८

वर्णानामाश्रमाणां च मंत्रतो मंत्रतोपि च
त्रिपुंड्रोद्धूलनं प्रोक्तजाबालैरादरेण च ९
भस्मनोद्धूलनं चैव यथा तिर्यक्त्रिपुंड्रकम्
प्रमादादपि मोक्षार्थी न त्यजेदिति विश्रुतिः १०
शिवेन विष्णुना चैव तथा तिर्यक्त्रिपुंड्रकम्
उमादेवी च लक्ष्मींश्च वाचान्याभिश्च नित्यशः ११
ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः शूद्रैरपि च संस्करैः
अपभ्रंशैर्धृतं भस्मत्रिपुंड्रोद्धूलनात्मना १२
उद्धूलनं त्रिपुंड्रं च श्रद्धया नाचरंति ये
तेषां नास्ति समाचारो वर्णाश्रमसमन्वितः १३
उद्धूलनं त्रिपुंड्रं च श्रद्धया नाचरंति ये
तेषां नास्ति विनिर्मुक्तिस्संसाराज्जन्मकोटिभिः १४
उद्धूलनं त्रिपुंड्रं च श्रद्धया नाचरन्ति ये
तेषां नास्ति शिवज्ञानं कल्पकोटिशतैरपि १५
उद्धूलनं त्रिपुंड्रं च श्रद्धया नाचरन्ति ये
ते महापातकैर्युक्ता इति शास्त्रीयनिर्णयः १६
उद्धूलनं त्रिपुंड्रं च श्रद्धया नाचरन्ति ये
तेषामाचरितं सर्वं विपरीतफलाय हि १७
महापातकयुक्तानां जंतूनां शर्वविद्विषाम्
त्रिपुंड्रोद्धूलनद्वेषो जायते सुदृढं मुने १८
शिवाग्निकार्यं यः कृत्वा कुर्यात्त्रियायुषात्मवित्
मुच्यते सर्वपापैस्तु स्पृष्टेन भस्मना नरः १९
सितेन भस्मना कुर्य्यात्त्रिसन्ध्यं यस्त्रिपुण्ड्रकम्
सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवेन सह मोदते २०
सितेन भस्मना कुर्याल्ललाटे तु त्रिपुण्ड्रकम्

यो सावनादिभूतान्हि लोकानाप्नो मृतो भवेत् २१
अकृत्वा भस्मना स्नानं न जपेद्वै षडक्षरम्
त्रिपुंड्रं च रचित्वा तु विधिना भस्मना जपेत् २२
अदयो वाधमो वापि सर्वपापान्वितोपि वा
उषःपापान्वितो वापि मूर्खो वा पतितोपि वा २३
यस्मिन्देशेव सेन्नित्यं भूतिशासनसंयुतः
सर्वतीर्थैश्च क्रतुभिः सांनिध्यं क्रियते सदा २४
त्रिपुंड्रसहितो जीवः पूज्यः सर्वैः सुरासुरैः
पापान्वितोपि शुद्धात्मा किं पुनः श्रद्धया युतः २५
यस्मिन्देशे शिवज्ञानी भूतिशासनसंयुतः
गतो यदृच्छयाद्यापि तस्मिस्तीर्थाः समागताः २६
बहुनात्र किमुक्तेन धार्यं भस्म सदा बुधैः
लिंगार्चनं सदा कार्यं जप्यो मंत्रः षडक्षरः २७
ब्रह्मणा विष्णुना वापि रुद्रेण मुनिभिः सुरैः
भस्मधारणमाहात्म्यं न शक्यं परिभाषितुम् २८
इति वर्णाश्रमाचारो लुप्तवर्णक्रियोपि च
पापात्सकृत्त्रिपुंड्रस्य धारणात्सोपि मुच्यते २९
ये भस्मधारिणं त्यक्त्वा कर्म कुर्वंति मानवाः
तेषां नास्ति विनिर्मोक्षः संसाराज्जन्मकोटिभिः ३०
ते नाधीतं गुरोः सर्वं ते न सर्वमनुष्ठितम्
येन विप्रेण शिरसि त्रिपुंड्रं भस्मना कृतम् ३१
ये भस्मधारिणं दृष्ट्वा नराः कुर्वंति ताडनम्
तेषां चंडालतो जन्म ब्रह्मन्नूह्यं विपश्चिता ३२
मानस्तोकेन मंत्रेण मंत्रितं भस्म धारयेत्
ब्राह्मणः क्षत्रियश्चैव प्रोक्तेष्वंगेषु भक्तिमान् ३३

वैश्यस्त्रियं बकेनैव शूद्रः पंचाक्षरेण तु
अन्यासां विधवास्त्रीणां विधिः प्रोक्तश्च शूद्रवत् ३४
पंचब्रह्मादिमनुभिर्गृहस्थस्य विधीयते
त्रियंबकेन मनुना विधिर्वै ब्रह्मचारिणः ३५
अघोरेणाथ मनुना विपिनस्थविधिः स्मृतः
यतिस्तु प्रणवेनैव त्रिपुंड्रादीनि कारयेत् ३६
अतिवर्णाश्रमी नित्यं शिवोहं भावनात्परात्
शिवयोगी च नियतमीशानेनापि धारयेत् ३७
न त्याज्यं सर्ववर्णैश्च भस्मधारणमुत्तमम्
अन्यैरपि यथाजीवैस्सदेति शिवशासनम् ३८
भस्मस्नानेन यावंतः कणाः स्वाङ्गे प्रतिष्ठिताः
तावंति शिवलिंगानि तनौ धत्ते हि धारकः ३९
ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चापि च संकराः
स्त्रियोथ विधवा बालाः प्राप्ताः पाखंडिकास्तथा ४०
ब्रह्मचारी गृही वन्यः संन्यासी वा व्रती तथा
नार्यो भस्म त्रिपुंड्रांका मुक्ता एव न संशयः ४१
ज्ञानाज्ञानधृतो वापि वह्निदाहसमो यथा
ज्ञानाज्ञानधृतं भस्म पावयेत्सकलं नरम् ४२
नाश्नीयाज्जलमन्नमल्पमपि वा भस्माक्षधृत्या विना
भुक्त्वावाथ गृही वनीपतियतिर्वर्णी तथा संकरः
एनोभुगनरकं प्रयाति सत दागायत्रिजापेन तद्वर्णानां तु यतेस्तु
मुख्यप्रणवाजपेन मुक्तंभवेत् ४३
त्रिपुंड्रं ये विनिंदंति निन्दन्ति शिवमेव ते
धारयंति च ये भक्त्या धारयन्ति तमेव ते ४४
धिग्भस्मरहितं भालं धिग्ग्राममशिवालयम्

धिगनीशार्चनं जन्म धिग्विद्यामशिवाश्रयाम् ४५
ये निंदंति महेश्वरं त्रिजगतामाधारभूतं हरं ये निन्दंति त्रिपुंड्रधारणकरं दोषस्तु तद्दर्शने
ते वै संकरसूकरासुरखरश्वक्रोष्टुकीटोपमा जाता एव भवंति पापपरमास्तेनारकाः केवलम् ४६
ते दृष्ट्वा शशिभास्करौ निशि दिने स्वप्नेपि नो केवलं पश्यंतु श्रुतिरुद्रसूक्तजपतो मुच्येत तेनादृताः
सत्संभाषणतो भवेद्धि नरकं निस्तारवानास्थितं ये भस्मादिविधारणं हि पुरुषं निंदंति मंदा हि ते ४७
न तांत्रिकस्त्वधिकृतो नोद्ध्वर्वपुंड्रधरो मुने
संतप्तचक्रचिह्नोत्र शिवयज्ञे बहिष्कृतः ४८
तत्रैते बहवो लोका बृहज्जाबालचोदिताः
ते विचार्याः प्रयत्नेन ततो भस्मरतो भवेत् ४९
यच्चंदनैश्चंदनकेपि मिश्रं धार्यं हि भस्मैव त्रिपुंड्रभस्मना
विभूतिभालोपरि किंचनापि धार्यं सदा नो यदि संतिबुद्धयः ५०
स्त्रीभिस्त्रिपुण्ड्रमलकावधि धारणीयं भस्म द्विजादिभिरथो विधवाभिरेवम्
तद्वत्सदाश्रमवतां विशदाविभूतिर्धार्यापवर्गफलदा सकलाघहन्त्री ५१
त्रिपुण्ड्रं कुरुते यस्तु भस्मना विधिपूर्वकम्
महापातकसंघातैर्मुच्यते चोपपातकैः ५२
ब्रह्मचारी गृहस्थो वा वानप्रस्थोथ वा यतिः
ब्रह्मक्षत्त्राश्च विट्शूद्रास्तथान्ये पतिताधमाः ५३
उद्धूलनं त्रिपुंड्रं च धृत्वा शुद्धा भवंति च
भस्मनो विधिना सम्यक्पापराशिं विहाय च ५४

भस्मधारी विशेषेण स्त्रीगोहत्यादिपातकैः
वीरहत्याश्वहत्याभ्यां मुच्यते नात्र संशयः ५५
परद्रव्यापहरणं परदाराभिमर्शनम्
परनिन्दा परक्षेत्रहरणं परपीडनम् ५६
सस्यारामादिहरणं गृहदाहादिकर्म च
गोहिरण्यमहिष्यादितिलकम्बलवाससाम् ५७
अन्नधान्यजलादीनां नीचेभ्यश्च परिग्रहः
दशवेश्यामतंगीषु वृषलीषु नटीषु च ५८
रजस्वलासु कन्यासु विधवासु च मैथुनम्
मांसचर्मरसादीनां लवणस्य च विक्रयः ५९
पैशुन्यं कूटवादश्च साक्षिमिथ्याभिलाषिणाम्
एवमादीन्यसंख्यानि पापानि विविधानि च
सद्य एव विनश्यंति त्रिपुंड्रस्य च धारणात् ६०
शिवद्रव्यापहरणं शिवनिंदा च कुत्रचित्
निंदा च शिवभक्तानां प्रायश्चित्तैर्न शुद्ध्यति ६१
रुद्राक्षं यस्य गात्रेषु ललाटे तु त्रिपंड्रकम्
सचांडालोपि संपूज्यस्सर्ववर्णोत्तमोत्तमः ६२
यानि तीर्थानि लोकेस्मिन्गंगाद्यास्सरितश्च याः
स्नातो भवति सर्वत्र ललाटे यस्त्रिपुंड्रकम् ६३
सप्तकोटि महामंत्राः पंचाक्षरपुरस्सराः
तथान्ये कोटिशो मंत्राः शैवकैवल्यहेतवः ६४
अन्ये मंत्राश्च देवानां सर्वसौख्यकरा मुने
ते सर्वे तस्य वश्याः स्युर्यो बिभर्ति त्रिपुंड्रकम् ६५
सहस्रं पूर्वजातानां सहस्रं जनयिष्यताम्
स्ववंशजानां ज्ञातीनामुद्धरेद्यस्त्रिपुंड्रकृत् ६६

इह भुक्त्वा खिलान्भोगान्दीर्घायुर्व्याधिवर्जितः
जीवितांते च मरणं सुखेनैव प्रपद्यते ६७
अष्टैश्वर्यगुणोपेतं प्राप्य दिव्यवपुः शिवम्
दिव्यं विमानमारुह्य दिव्यत्रिदशसेवितम् ६८
विद्याधराणां सर्वेषां गंधर्वाणां महौजसाम्
इंद्रादिलोकपालानां लोकेषु च यथाक्रमम् ६९
भुक्त्वा भोगान्सुविपुलान्प्रजेशानां पदेषु च
ब्रह्मणः पदमासाद्य तत्र कन्याशतं रमेत् ७०
तत्र ब्रह्मायुषो मानं भुक्त्वा भोगाननेकशः
विष्णोर्लोके लभेद्भोगं यावद्ब्रह्मशतात्ययः ७१
शिवलोकं ततः प्राप्य लब्ध्वेष्टं काममक्षयम्
शिवसायुज्यमाप्नोति संशयो नात्र जायते ७२
सर्वोपनिषदां सारं समालोक्य मुहुर्मुहुः
इदमेव हि निर्णीतं परं श्रेयस्त्रिपुंड्रकम् ७३
विभूतिं निंदते यो वै ब्राह्मणः सोन्यजातकः
याति च नरके घोरे यावद्ब्रह्मा चतुर्मुखः ७४
श्राद्धे यज्ञे जपे होमे वैश्वदेवे सुरार्चने
धृतत्रिपुंड्रः पूतात्मा मृत्युं जयति मानवः ७५
जलस्नानं मलत्यागे भस्मस्नानं सदा शुचि
मंत्रस्नानं हरेत्पापं ज्ञानस्नाने परं पदम् ७६
सर्वतीर्थेषु यत्पुण्यं सर्वतीर्थेषु यत्फलम्
तत्फलं समवाप्नोति भस्मस्नानकरो नरः ७७
भस्मस्नानं परं तीर्थं गंगास्नानं दिने दिने
भस्मरूपी शिवः साक्षाद्भस्म त्रैलोक्यपावनम् ७८
न तदूनं न तद्ध्यानं न तद्दानं जपो न सः

त्रिपुंड्रेण विनायेन विप्रेण यदनुष्ठितम् ७९
वानप्रस्थस्य कन्यानां दीक्षाहीननृणां तथा
मध्याह्नात्प्राग्जलैर्युक्तं परतो जलवर्जितम् ८०
एवं त्रिपुंड्रं यः कुर्य्यान्नित्यं नियतमानसः
शिवभक्तः सविज्ञेयो भुक्तिं मुक्तिं च विंदति ८१
यस्यांगेनैव रुद्राक्ष एकोपि बहुपुण्यदः
तस्य जन्मनिरर्थं स्यात्त्रिपुंड्ररहितो यदि ८२
एवं त्रिपुंड्रमाहात्म्यं समासात्कथितं मया
रहस्यं सर्वजंतूनां गोपनीयमिदं त्वया ८३
तिस्रो रेखा भवंत्येव स्थानेषु मुनिपुंगवाः
ललाटादिषु सर्वेषु यथोक्तेषु बुधैर्मुने ८४
भ्रुवोर्मध्यं समारभ्य यावदंतो भवेद्भ्रुवोः
तावत्प्रमाणं संधार्यं ललाटे च त्रिपुंड्रकम् ८५
मध्यमानामिकांगुल्या मध्ये तु प्रतिलोमतः
अंगुष्ठेन कृता रेखा त्रिपुंड्राख्या भिधीयते ८६
मध्येंगुलिभिरादाय तिसृभिर्भस्म यत्नतः
त्रिपुण्ड्रधारयेद्भक्त्या भुक्तिमुक्तिप्रदं परम् ८७
तिसृणामपि रेखानां प्रत्येकं नवदेवताः
सर्वत्रांगेषु ता वक्ष्ये सावधानतया शृणु ८८
अकारो गार्हपत्याग्निर्भूधर्मश्च रजोगुणः
ऋग्वेदश्च क्रियाशक्तिः प्रातःसवनमेव च ८९
महदेवश्च रेखायाः प्रथमायाश्च देवता
विज्ञेया मुनिशार्दूलाः शिवदीक्षापरायणैः ९०
उकारो दक्षिणाग्निश्च नभस्तत्त्वं यजुस्तथा
मध्यंदिनं च सवनमिच्छाशक्त्यंतरात्मकौ ९१

महेश्वरश्च रेखाया द्वितीयायाश्च देवता
विज्ञेया मुनिशार्दूल शिवदीक्षापरायणैः ९२
मकाराहवनीयौ च परमात्मा तमोदिवौ
ज्ञानशक्तिः सामवेदस्तृतीयं सवनं तथा ९३
शिवश्चैव च रेखायास्तृतियायाश्च देवता
विज्ञेया मुनिशार्दूल शिवदीक्षापरायणौ ९४
एवं नित्यं नमस्कृत्य सद्भक्त्या स्थानदेवताः
त्रिपुंड्रं धारयेच्छुद्धो भुक्तिं मुक्तिं च विंदति ९५
इत्युक्ताः स्थानदेवाश्च सर्वांगेषु मुनीश्वरः
तेषां संबंधिनो भक्त्या स्थानानि शृणु सांप्रतम् ९६
द्वात्रिंशत्स्थानके वार्द्धषोडशस्थानकेपि च
अष्टस्थाने तथा चैव पंचस्थानेपि नान्यसेत् ९७
उत्तमांगे ललाटे च कर्णयोर्नेत्रयोस्तथा
नासावक्त्रगलेष्वेवं हस्तद्वय अतः परम् ९८
कूर्परे मणिबंधे च हृदये पार्श्वयोर्द्वयोः
नाभौ मुष्कद्वये चैवमूर्वोर्गुल्फे च जानुनि ९९
जंघाद्वयेपदद्वन्द्वे द्वात्रिंशत्स्थानमुत्तमम् १००ब्
अग्नयब्भूवायुदिग्देशदिक्पालान्वसुभिः सह १००
धरा ध्रुवश्च सोमश्च अपश्चेवानिलोनलः १०१ब्
प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवोष्टौ प्रकीर्तिताः १०१
एतेषां नाममात्रेण त्रिपुंड्रं धारयेद्बुधाः १०२ब्
कुर्याद्वा षोडशस्थाने त्रिपुराड्रं तु समाहितः १०२
शीर्षके च ललाटेच कंठे चांसद्वये भुजे १०३ब्
कूर्परे मणिबंधे च हृदये नाभिपार्श्वके १०३
पृष्ठे चैवं प्रतिष्ठाय यजेत्तत्राश्विदैवते १०४ब्

शिवशक्तिं तथा रुद्रमीशं नारदमेव च १०४
वामादिनवशक्तीश्च एताः षोडशदेवताः १०५ब्
नासत्यो दस्त्रकश्चैव अश्विनौ द्वौ प्रकीर्तितौ १०५
अथवा मूर्द्धनि केशे च कर्मयोर्वदने तथा १०६ब्
बाहुद्वये च हृदये नाभ्यामूरुयुगे तथा १०६
जानुद्वये च पदयोः पृष्ठभागे च षोडश १०७ब्
शिवश्चन्द्रश्च रुद्रः को विघ्नेशो विष्णुरेव वा १०७
श्रीश्चैव हृदये शम्भुस्तथा नाभौ प्रजापतिः १०८ब्
नागश्च नागकन्याश्च उभयोर्ऋषिकन्यकाः १०८
पादयोश्च समुद्राश्च तीर्थाः पृष्ठे विशालतः १०९ब्
इत्येव षोडशस्थानमष्टस्थानमथोच्यते १०९
गुह्यस्थानं ललाटश्च कर्णद्वयमनुत्तमम् ११०ब्
अंसयुग्मं च हृदयं नाभिरित्येवमष्टकम् ११०
ब्रह्मा च ऋषयः सप्तदेवताश्च प्रकीर्तिताः १११ब्
इत्येवं तु समुद्दिष्टं भस्मविद्भिर्मुनीश्वराः १११
अथ वा मस्तकं बाहूहृदयं नाभिरेव च ११२ब्
पंचस्थानान्यमून्याहुर्धारणे भस्मविज्ञनाः ११२
यथासंभवनं कुर्य्याद्देशकालाद्यपेक्षया ११३ब्
उद्धूलनेप्यशक्तिश्चेत्त्रिपुण्ड्रादीनि कारयेत् ११३
त्रिनेत्रं त्रिगुणाधारं त्रिवेदजनकं शिवम् ११४ब्
स्मरन्नमः शिवायेति ललाटे तु त्रिपुण्ड्रकम् ११४
ईशाभ्यां नम इत्युक्त्वापार्श्वयोश्च त्रिपुण्ड्रकम् ११५ब्
बीजाभ्यां नम इत्युक्त्वा धारयेत्तु प्रकोष्ठयोः ११५
कुर्यादधः पितृभ्यां च उमेशाभ्यां तथोपरि ११६ब्
भीमायेति ततः पृष्ठे शिरसः पश्चिमे तथा ११६

इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहितायां भस्मधारणवर्णनोनाम चतुर्विंशोऽध्यायः २४

अध्याय २५

सूत उवाच
शैनकर्षे महाप्राज्ञ शिवरूपमहापते
शृणु रुद्राक्षमाहात्म्यं समासात्कथयाम्यहम् १
शिवप्रियतमो ज्ञेयो रुद्राक्षः परपावनः
दर्शनात्स्पर्शनाज्जाप्यात्सर्वपापहरः स्मृतः २
पुरा रुद्राक्षमहिमा देव्यग्रे कथितो मुने
लोकोपकरणार्थाय शिवेन परमात्मना ३
शिव उवाच
शृणु देविमहेशानि रुद्राक्षमहिमा शिवे
कथयामि तवप्रीत्या भक्तानां हितकाम्यया ४
दिव्यवर्षसहस्राणि महेशानि पुनः पुरा
तपः प्रकुर्वतस्त्रस्तं मनः संयम्य वै मम ५
स्वतंत्रेण परेशेन लोकोपकृतिकारिणा
लीलया परमेशानि चक्षुरुन्मीलितं मया ६
पुटाभ्यां चारुचक्षुर्भ्यां पतिता जलबिंदवः
तत्राश्रुबिन्दवो जाता वृक्षा रुद्राक्षसंज्ञकाः ७
स्थावरत्वमनुप्राप्य भक्तानुग्रहकारणात्
ते दत्ता विष्णुभक्तेभ्यश्चतुर्वर्णेभ्य एव च ८
भूमौ गौडोद्भवांश्चक्रे रुद्राक्षाञ्छिववल्लभान्
मथुरायामयोध्यायां लंकायां मलये तथा ९
सह्याद्रौ च तथा काश्यां दशेष्वन्येषु वा तथा

परानसह्यपापौघभेदनाञ्छ्रुतिनोदनात् १०
ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा जाता ममाज्ञया
रुद्राक्षास्ते पृथिव्यां तु तज्जातीयाः शुभाक्षकाः ११
श्वेतरक्ताः पीतकृष्णा वर्णाज्ञेयाः क्रमाद्बुधैः
स्वजातीयं नृभिर्धार्यं रुद्राक्षं वर्णतः क्रमात् १२
वर्णैस्तु तत्फलं धार्यं भुक्तिमुक्तिफलेप्सुभिः
शिवभक्तैर्विशेषेण शिवयोः प्रीतये सदा १३
धात्रीफलप्रमाणं यच्छ्रेष्ठमेतदुदाहृतम्
बदरीफलमात्रं तु मध्यमं संप्रकीर्त्तितम् १४
अधमं चणमात्रं स्यात्प्रक्रियैषा परोच्यते
शृणु पार्वति सुप्रीत्या भक्तानां हितकाम्यया १५
बदरीफलमात्रं च यत्स्यात्किल महेश्वरि
तथापि फलदं लोके सुखसौभाग्यवर्द्धनम् १६
धात्रीफलसमं यत्स्यात्सर्वारिष्टविनाशनम्
गुंजया सदृशं यत्स्यात्सर्वार्थफलसाधनम् १७
यथा यथा लघुः स्याद्वै तथाधिकफलप्रदम्
एकैकतः फलं प्रोक्तं दशांशैरधिकं बुधैः १८
रुद्राक्षधारणं प्रोक्तं पापनाशनहेतवे
तस्माच्च धारणी यो वै सर्वार्थसाधनो ध्रुवम् १९
यथा च दृश्यते लोके रुद्राक्षफलदः शुभः
न तथा दृश्यतेऽन्या च मालिका परमेश्वरि २०
समाः स्निग्धा दृढाः स्थूलाः कंटकैः संयुताः शुभाः
रुद्राक्षाः कामदा देवि भुक्तिमुक्तिप्रदाः सदा २१
क्रिमिदुष्टं छिन्नभिन्नं कंटकैर्हीनमेव च
व्रणयुक्तमवृत्तं च रुद्राक्षान्षड्विवर्जयेत् २२

स्वयमेव कृतद्वारं रुद्राक्षं स्यादिहोत्तमम्
यत्तु पौरुषयत्नेन कृतं तन्मध्यमं भवेत् २३
रुद्राक्षधारणं प्राप्तं महापातकनाशनम्
रुद्रसंख्याशतं धृत्वा रुद्ररूपो भवेन्नरः २४
एकादशशतानीह धृत्वा यत्फलमाप्यते
तत्फलं शक्यते नैव वक्तुं वर्षशतैरपि २५
शतार्द्धेन युतैः पंचशतैर्वै मुकुटं मतम्
रुद्राक्षैर्विरचेत्सम्यग्भक्तिमान्पुरुषो वरः २६
त्रिभिः शतैः षष्टियुक्तैस्त्रिरावृत्त्या तथा पुनः
रुद्राक्षैरुपवीतं व निर्मीयाद्भक्तितत्परः २७
शिखायां च त्रयं प्रोक्तं रुद्राक्षाणां महेश्वरि
कर्णयोः षट् च षट्चैव वामदक्षिणयोस्तथा २८
शतमेकोत्तरं कंठे बाह्वोर्वै रुद्रसंख्यया
कूर्परद्वारयोस्तत्र मणिबंधे तथा पुनः २९
उपवीते त्रयं धार्यं शिवभक्तिरतैर्नरैः
शेषानुर्वरितान्पंच सम्मितान्धारयेत्कटौ ३०
एतत्संख्या धृता येन रुद्राक्षाः परमेश्वरि
तद्रूपं तु प्रणम्यं हि स्तुत्यं सर्वैर्महेशवत् ३१
एवंभूतं स्थितं ध्याने यदा कृत्वासनैर्जनम्
शिवेति व्याहरंश्चैव दृष्ट्वा पापैः प्रमुच्यते ३२
शतादिकसहस्रस्य विधिरेष प्रकीर्तितः
तदभावे प्रकारोन्यः शुभः संप्रोच्यते मया ३३
शिखायामेकरुद्राक्षं शिरसा त्रिंशतं वहेत्
पंचाशच्च गले दध्याद्बाह्वोः षोडश षोडश ३४
मणिबंधे द्वादशद्विस्कंधे पंचशतं वहेत्

अष्टोत्तरशतैर्माल्यमुपवीतं प्रकल्पयेत् ३५
एवं सहस्ररुद्राक्षान्धारयेद्यो दृढव्रतः
तं नमंति सुराः सर्वे यथा रुद्रस्तथैव सः ३६
एकं शिखायां रुद्राक्षं चत्वारिंशत्तु मस्तके
द्वात्रिंशत्करठदेशे तु वक्षस्यष्टोत्तरं शतम् ३७
एकैकं कर्णयोः षट्षड्बाह्वोः षोडश षोडश
करयोरविमानेन द्विगुणेन मुनीश्वर ३८
संख्या प्रीतिर्धृता येन सोपि शैवजनः परः
शिववत्पूजनीयो हि वंद्यस्सर्वैरभीक्ष्णशः ३९
शिरसीशानमंत्रेण कर्णे तत्पुरुषेण च
अघोरेण गले धार्यं तेनैव हृदयेपि च ४०
अघोरबीजमंत्रेण करयोर्धारयेत्सुधीः
पंचदशाक्षग्रथितां वामदेवेन चोदरे ४१
पंच ब्रह्मभिरंगश्च त्रिमालां पंचसप्त च
अथवा मूलमंत्रेण सर्वानक्षांस्तुधारयेत् ४२
मद्यं मांसं तु लशुनं पलाण्डुं शिग्रुमेव च
श्लेष्मांतकं विड्वराहं भक्षणे वर्जयेत्ततः ४३
वलक्षं रुद्राक्षं द्विजतनुभिरेवेह विहितं सुरक्तं क्षत्राणां प्रमुदितमुमे
पीतमसकृत् ४४
छिन्नं खंडितं भिन्नं विदीर्णं
ततो वैश्यैर्धार्यं प्रतिदिवसभावश्यकमहो तथा कृष्णं शूद्रैः श्रुति-
गदितमार्गोयमगजे ४४
वर्णी वनी गृहयतीर्नियमेन दध्यादेतद्रहस्यपरमो न हि जातु तिष्ठेत्
रुद्राक्षधारणमिदं सुकृतैश्च लभ्यं त्यक्त्वेदमेतदखिलान्नरकान्प्रयांति
४५

आदावामलकात्स्वतो लघुतरा रुग्णास्ततः कंटकैः संदष्टाः
कृमिभिस्तनूपकरणच्छिद्रेण हीनास्तथा
धार्या नैव शुभेप्सुभिश्चणकवद्रुद्राक्षमप्यंततो रुद्राक्षोमम लिंगमंगल-
मुमे सूक्ष्मं प्रशस्तं सदा ४६
सर्वाश्रमाणां वर्णानां स्त्रीशूद्राणां शिवाज्ञया
धार्याः सदैव रुद्राक्षा यतीनां प्रणवेन हि ४७
दिवा बिभ्रद्रात्रिकृतै रात्रौ विभ्रद्दिवाकृतैः
प्रातर्मध्याह्नसायाह्ने मुच्यते सर्वपातकैः ४८
ये त्रिपुण्ड्रधरा लोके जटाधारिण एव ये
ये रुद्राक्षधरास्ते वै यमलोकं प्रयांति न ४९
रुद्राक्षमेकं शिरसा बिभर्ति तथा त्रिपुण्ड्रं च ललाटमध्ये
पंचाक्षरं ये हि जपंति मंत्रं पूज्या भवद्भिः खलु ते हि साधवः ५०
यस्याण्गे नास्ति रुद्राक्षस्त्रिपुण्ड्रं भालपट्टके
मुखे पंचाक्षरं नास्ति तमानय यमालयम् ५१
ज्ञात्वा ज्ञात्वा तत्प्रभावं भस्मरुद्राक्षधारिणः
ते पूज्याः सर्वदास्माकं नो नेतव्याः कदाचन ५२
एवमाज्ञापयामास कालोपि निजकिण्करान्
तथेति मत्त्वा ते सर्वे तूष्णीमासन्सुविस्मिताः ५३
अत एव महादेवि रुद्राक्षोत्यघनाशनः
तद्धरो मत्प्रियः शुद्धोऽत्यघवानपि पार्वति ५४
हस्ते बाहौ तथा मूर्ध्नि रुद्राक्षं धारयेत्तु यः
अवध्यः सर्वभूतानां रुद्ररूपी चरेद्भुवि ५५
सुरासुराणां सर्वेषां वंदनीयः सदा स वै
पूजनीयो हि दृष्टस्य पापहा च यथा शिवः ५६
ध्यानज्ञानावमुक्तोपि रुद्राक्षं धारयेत्तु यः

सर्वपापविनिर्मुक्तः स याति परमां गतिम् ५७
रुद्राक्षेण जपन्मन्त्रं पुण्यं कोटिगुणं भवेत्
दशकोटिगुणं पुण्यं धारणाल्लभते नरः ५८
यावत्कालं हि जीवस्य शरीरस्थो भवेत्स वै
तावत्कालं स्वल्पमृत्युर्न तं देवि विबाधते ५९
त्रिपुंड्रेण च संयुक्तं रुद्राक्षाविलसांगकम्
मृत्युंजयं जपंतं च दृष्ट्वा रुद्रफलं लभेत् ६०
पंचदेवप्रियश्चैव सर्वदेवप्रियस्तथा
सर्वमन्त्राञ्जपेद्भक्तो रुद्राक्षमालया प्रिये ६१
विष्णवादिदेवभक्ताश्च धारयेयुर्न संशयः
रुद्रभक्तो विशेषेण रुद्राक्षान्धारयेत्सदा ६२
रुद्राक्षा विविधाः प्रोक्तास्तेषां भेदान्वदाम्यहम्
शृणु पार्वति सद्भक्त्या भुक्तिमुक्तिफलप्रदान् ६३
एकवक्त्रः शिवः साक्षाद्भुक्तिमुक्तिफलप्रदः
तस्य दर्शनमात्रेण ब्रह्महत्या व्यपोहति ६४
यत्र संपूजितस्तत्र लक्ष्मीर्दूरतरा न हि
नश्यंत्युपद्रवाः सर्वे सर्वकामा भवंति हि ६५
द्विवक्त्रो देवदेवेशस्सर्वकामफलप्रदः
विशेषतः स रुद्राक्षो गोवधं नाशयेद्द्रुतम् ६६
त्रिवक्त्रो यो हि रुद्राक्षः साक्षात्साधनदस्सदा
तत्प्रभावाद्भवेयुर्वै विद्याः सर्वाः प्रतिष्ठिताः ६७
चतुर्वक्त्रः स्वयं ब्रह्मा नरहत्यां व्यपोहति
दर्शनात्स्पर्शनात्सद्यश्चतुर्वर्गफलप्रदः ६८
पंचवक्त्रः स्वयं रुद्रः कालाग्निर्नामतः प्रभुः
सर्वमुक्तिप्रदश्चैव सर्वकामफलप्रदः ६९

अगम्यागमनं पापमभक्ष्यस्य च भक्षणम्
इत्यादिसर्वपापानि पंचवक्त्रो व्यपोहति ७०
षड्वक्त्रः कार्तिकेयस्तुधारणाद्दक्षिणे भुजे
ब्रह्महत्यादिकैः पापैर्मुच्यते नात्र संशयः ७१
सप्तवक्त्रो महेशानि ह्यनंगो नाम नामतः
धारणात्तस्य देवेशिदरिद्रोपीश्वरो भवेत् ७२
रुद्राक्षश्चाष्टवक्त्रश्च वसुमूर्तिश्च भैरवः
धारणात्तस्य पूर्णायुर्मृतो भवति शूलभृत् ७३
भैरवो नववक्त्रश्च कपिलश्च मुनिः स्मृतः
दुर्गा वात दधिष्ठात्री नवरूपा महेश्वरी ७४
तं धारयेद्बामहस्ते रुद्राक्षं भक्तितत्परः
सर्वेश्वरो भवेन्नूनं मम तुल्यो न संशयः ७५
दशवक्त्रो महेशानि स्वयं देवो जनार्दनः
धारणात्तस्य देवेशि सर्वान्कामानवाप्नुयात् ७६
एकादशमुखो यस्तु रुद्राक्षः परमेश्वरि
स रुद्रो धारणात्तस्य सर्वत्र विजयी भवेत् ७७
द्वादशास्यं तु रुद्राक्षं धारयेत्केशदेशके
आदित्याश्चैव ते सर्वेद्वादशैव स्थितास्तथा ७८
त्रयोदशमुखो विश्वेदेवस्तद्धारणान्नरः
सर्वान्कामानवाप्नोति सौभाग्यं मंगलंलभेत् ७९
चतुर्दशमुखो यो हि रुद्राक्षः परमः शिवः
धारयेन्मूर्ध्नि तं भक्त्या सर्वपापं प्रणश्यति ८०
इति रुद्राक्षभेदा हि प्रोक्ता वै मुखभेदतः
तत्तन्मंत्राञ्छृणु प्रीत्या क्रमाच्छैल्लेश्वरात्मजे ८१
ओं ह्रीं नमः १ ओं नमः २ ओं क्लीं नमः ३ ओं ह्रीं नमः ४ ओं ह्रीं

नमः ५ ओं ह्रीं हुं नमः ६ ओं हुंनमः ७ ओं हुं नमः ८ ओं ह्रीं हुं नमः
९ ओं ह्रीं नमः नमः १० ओं ह्रीं हुं नमः ११ ओं क्रौं त्रौं रौं नमः १२
ओं ह्रीं नमः १३ ओं नम १४
भक्तिश्रद्धा युतश्चैव सर्वकामार्थसिद्धये
रुद्राक्षान्धारयेन्मंत्रैर्देवनालस्य वर्जितः ८२
विना मंत्रेण हो धत्ते रुद्राक्षं भुवि मानवः
स याति नरकं घोरं यावदिन्द्राश्चतुर्दश ८३
रुद्राक्षमालिनं दृष्ट्वा भूतप्रेतपिशाचकाः
डाकिनीशाकिनी चैव ये चान्ये द्रोहकारकाः ८४
कृत्रिमं चैव यत्किंचिदभिचारादिकं च यत्
तत्सर्वं दूरतो याति दृष्ट्वा शंकितविग्रहम् ८५
रुद्राक्षमालिनं दृष्ट्वा शिवो विष्णुः प्रसीदति
देवीगणपतिस्सूर्यः सुराश्चान्येपि पार्वति ८६
एवं ज्ञात्वा तु माहात्म्यं रुद्राक्षस्य महेश्वरि
सम्यग्धार्यास्समंत्राश्च भक्त्याधर्मविवृद्धये ८७
इत्युक्तं गिरिजाग्रे हि शिवेन परमात्मना
भस्मरूद्राक्षमाहात्म्यं भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ८८
शिवस्यातिप्रियौ ज्ञेयौ भस्मरुद्राक्षधारिणौ
तद्धारणप्रभावद्धि भुक्तिर्मुक्तिर्न संशयः ८९
भस्मरुद्राक्षधारी यः शिवभक्तस्स उच्यते
पंचाक्षरजपासक्तः परिपूर्णश्च सन्मुखे ९०
विना भस्मत्रिपुंड्रेण विना रुद्राक्षमालया
पूजितोपि महादेवो नाभीष्टफलदायकः ९१
तत्सर्वं च समाख्यातं यत्पृष्टं हि मुनीश्वर
भस्मरुद्राक्षमाहात्म्यं सर्वकामसमृद्धिदम् ९२

एतद्यः शृणुयान्नित्यं माहात्म्यपरमं शुभम्
रुद्राक्षभस्मनोर्भक्त्यासर्वान्कामानवाप्नुयात् ९३
इह सर्वसुखं भुक्त्वा पुत्रपौत्रादिसंयुतः
लभेत्परत्र सन्मोक्षं शिवस्यातिप्रियो भवेत् ९४
विद्येश्वरसंहितेयं कथिता वो मुनीश्वराः
सर्वसिद्धिप्रदा नित्यं मुक्तिदा शिवशासनात् ९५
इति श्रीशिवमहापुराणे प्रथमायां विद्येश्वरसंहितायां
साध्यसाधनखण्डे रुद्राक्षमहात्म्यवर्णनोनाम पञ्चविंशोऽध्यायः २५

इति श्रीशिवमहापुराणे प्रथमा विद्येश्वरसंहिता समाप्ता

Credits
Source: *Siva-Purana, Book 1*, (Bombay: Venkateshvara Steam Press, 1920).
Data Entry and Proofing by Jun Takashima et al.
File conversion using Vedapad software by Ralph Bunker.
Formatted for Maharishi University of Management Vedic Literature Collection.